

मुरलीधर [illegible] देव
मु० पो० [illegible] ([illegible])


श्रीमद्भगवद्गीता भाषा

अपूर्व   अमूल्य

❀ हिन्दु धर्म का चमकता सूर्य्य ❀

सचित्र

महाभारत

सम्पूर्ण अठारह पर्व केवल भाषा ।

प्रिय सज्जनगण ! बड़े हर्ष की बात है कि हमने सम्पूर्ण महाभारत हिन्दी भाषा में छाप दिया है, इसमें कौरव तथा पाण्डवों का सम्पूर्ण वृत्तान्त, कौरव पाण्डवों का घोर युद्ध, द्रौपदी का पतिव्रत धर्म पालन, युधिष्ठिर के धर्म वाक्य, विदुर जी की राजनीति, भीष्मपितामह जी के धर्मोपदेश, श्री कृष्ण जी का गीता उपदेश तथा और भी बड़ी सुन्दर कथाएं हैं जिनके पाठ मात्र से पाठकों के सब पाप दूर हो जाते हैं और इसमें स्थान २ पर बहुरंगे और रंगीन चित्र (तस्वीरें) लगादी हैं जिनसे इस ग्रन्थ की चौगुनी शोभा हो गई है इन चित्रों को देखते २ मन नहीं भरता । प्रिय पाठको इस महाभारत को मंगाकर इसकी कथाओं का रस लेवो और झूठे किस्से कहानियों का पढ़ना छोड़ो इस ग्रन्थ को स्त्रियें भी पढ़ सकती हैं, और स्त्रियों के लिये तो यह ग्रन्थ भूषण है ऊपर सुन्दर सुनहरी जिल्द बंधी है । छापा बहुत मोटा बम्बई टाइप का है, इस पर भी मूल्य इतना थोड़ा रक्खा है कि गरीब अमीर सब मंगाकर लाभ उठावें अर्थात् मूल्य केवल ५) पांच रुपये मात्र डाकखर्च ।||=) अलग । (इस गीता जितने मोटे अक्षर हैं) ।

मिलने का पता—शामदास वधवा पुस्तकों वाला शहालमी दरवाजा लाहौर ।



भगवान श्रीकृष्ण जी का

तब
बने
तेरे
ाठ,
ाब
है,
ठां
ा-

* श्रीगणेशायनमः *



श्री ऊँनमो भगवते वासुदेवाय वासुदेव विश्वेश्वरो
आदि पुरुष अपरम्पार अलेखपुरुषायनमः ॥
दोहा-जगत बन्धु जोती स्वरूप जीय की जाननहार।
हरि जस मांगन आयो दास प्रभु के द्वार ॥ १ ॥
जो अर्जुन भगत को श्रीभगवानजी ने गीताज्ञान

दिया है मुजको मिले। हे भैभंजन भगवान् श्रीकृष्ण जी सो किशोरदास मांगता है। हे प्रभु गीता ज्ञान को उच्चारण करने से तेरे पूर्ण ब्रह्मको पावता है। हे प्रभु मैं आपके चरणों की शरण हूं आप परम प्रवीण हो और मैं आपकी शरण में पड़ा हूं, किशोरदास और कृष्ण-दास जी दीन गरीब हैं और आप कैसे हो सन्त की बेनती को मान लेते हो, हे कमलाबल्लभ ! श्रीकृष्ण भगवान जी कृपानिधान जी तेरे सन्तों भगतों के वास्ते मैं यह गीता ज्ञान भाषा में कहता हूं ॥

———:❋:———

श्रीगीता के ज्ञान की कथा प्रारम्भ ।

पहिला विषाध योग ।

जब कौरव और पांडव महाभारत के युद्ध को चले तब राजा धृतराष्ट्र ने कहा जो मैं भी युद्ध का कौतुक देखने को चलूं, तब श्रीव्यासदेवजी ने कहा, हे राजाजी ! तेरे तो नेत्र नहीं हैं नेत्रों बिना क्या देखोगे तब राजा धृतराष्ट्र ने कहा हे प्रभु जी देखूंगा नहीं तो श्रवण तो करूंगा, तब व्यासदेवजी ने कहा हे राजन् तेरा जो सारथी संजय है, सो मेरा शिष्य है जो कुछ महाभारत के युद्ध की लीला कुरुक्षेत्र में होगी संजय तुमको यहां बैठे ही श्रवण करा-

वेगा, जब व्यासदेवजी के मुखकमल से यह वचन सुने तब संजय श्रीव्यासदेवजी के चरणों पर नमस्कार करता भया और हाथ जोड़कर बेनती करी, हे प्रभुजी महाभारत के युद्ध का चरित्र कुरुक्षेत्र विषे होवेगा और मैं हस्तनापुर विषे हूंगा और आपने जो आज्ञा करी है कि राजन् तुझको यहां बैठे ही युद्ध का कौतुक संजय कहेगा सो हे प्रभु जी यहां हस्तनापुर में कुरुक्षेत्र की लीला कैसे जानूंगा। और राजे को किस भांत कहूंगा। जब इस प्रकार संजय ने व्यासदेवजी के आगे बेनती करी तब श्रीव्यासदेवजी ने प्रसन्न होकर संजय को यह

म[illegible]वन कहा कि हे संजय ! मेरी कृपासे तुझे सब दिखाई [illegible]हां ही देवेगा। और बुद्धि के नेत्रों कर सूझेगा जब [illegible]व्यासजी ने यह वर दिया, तिसी समय संजय की दिव्य दृष्टि भई और बुद्धि भी उसकी दिव्य भई। अब आगे महाभारत का कौतुक कहते हैं, सो सुनो सात क्षौनी सेना पांडवों की और ग्यारां क्षौनी सेना धृतराष्ट्र के पुत्र कौरवों की यह दोनों सेना इकट्ठी होकर कुरुक्षेत्र जाय एकत्र भई। अब राजा धृतराष्ट्र संजय से पूछे हैं॥

धृतराष्ट्रोवाच—हे संजय ! धर्म का क्षेत्र जो है कुरुक्षेत्र तिस विखे मेरे पुत्र और पांडव के पुत्र तिन्होंने क्या

किया सो मुझे कहो ॥१॥ राजाका वचन सुनकर संजय मुने
बोलता भय । संजय उवाच–हे राजाजी तेरा पुत्र जो
है दुर्योधन तिसने पाडवों की सेना देखी सो कैसी हैं
सेना भली भांति जिसकी पंगती बनी है तिस पांडवों
की सेना को देखकर राजा दुर्योधन अपने गुरुदेव द्रोणा-
चार्य के निकट जाकर यह बेनती करता भया ॥२॥
हे आचार्य जी देखो तो पांडवों की सेना का समूह
और सेना की कैसी भली भांति पंगती बनी है और
द्रुपद का पुत्र धृष्टद्युमन सो तुम्हारा शिष्य है कैसा
बुद्धिमान है जिसने पांडवों की सेना की पंगती कैसी

म[illegible]की भांति बनाई है ॥ ३॥ और जो पांडवों की सेना के
[illegible]मुख्य योधा हैं तिन के नाम दुर्योधन द्रोणाचार्य को
स[illegible]सुनावे है इस सेना विखे बडा धनुष धारनहारा भीम-
[illegible] सेन अर्जुन और राजा जुजुधान राजा विराट राजा
[illegible] द्रुपद ॥४॥ महारथी धृष्टकेतु चेकतान और बडा बल-
वान काशी का राजा और पुराजित कुंतीभोज मनुष्यों
में श्रेष्ठ शैव्य ॥५॥ युधामन्यु और विक्रांत बडा बल-
वान उत्तमोजा सुभद्रा का पुत्र अभिमन्यु और द्रोपदी
के पाचों बेटे सभी महारथी हैं ॥ ६ ॥ अब दुर्योधन
अपनी सेना के मुख्य जो योधा हैं तिनके नाम और

प्रमाण सुनाए हैं, हे आचार्य जी अब जो मेरी सेना मुखे मुख्य योधा हैं हे ब्राह्मणों विखे श्रेष्ठ द्रोणाचार्य जी तिनके नाम सुनो ॥७॥ प्रथम तो तुम और भीष्मजी, करण, कृपाचार्य, समातिंजय, अश्वत्थामा, विकरण और सोमदत्ति ॥८॥ इनसे आदि लेकर और भी योधा हैं सो कैसे हैं जिन्होंने मेरे निमित्त अपना जीवन त्याग दिया है और अनेक प्रकार के शस्त्र धारणहारे हैं, युद्ध करने को बडे प्रवीन और चतुर हैं ॥९॥ और हमारी सेना बहुत ग्यारां क्षोणी है और पांडवों की सेना थोडी सात क्षोणी है और हमारी सेना का अधिकारी और

म[illegible]कर्त्ता भीष्म है और पाडवों की सेना का अधिकारी [illegible]र रक्षाकर्त्ता भीमसेन है ॥१०॥ अब दुर्योधन अपनी सेना को कहे है जितने तुम हमारी सेना के लोग हो सो सभी भीष्मकी रक्षा करनहारे हो, और जितने शस्त्र आने के मार्ग हैं तिन सब मार्गों से भीष्म की रक्षा करो ॥११॥ दुर्योधन के मुख से भीष्म से आदि लेकर जो योधा हैं तिन्होंने यह वचन सुनकर दुर्योधन के सुख उपजावन अर्थ कौरवों विखे बडा जो है वृद्ध भीष्मपितामा सो प्रथमे सिंह की न्याईं गरजा, गरज कर अपना प्रतापवान शंख बजाया ॥ १२ ॥ तिसके

उपरान्त सारी दुर्योधन की सेना ने शंख बज
भेरी ढोल और रणसिंहे बजाए दमामे और गो
इत्यादि से लेकर और सभी बजंत्र अनेक प्रकार
सारी सेना ने एकत्र बजाए तिन बजंत्रों का भयं
शब्द होता भया ॥ १३ ॥ अब पांडवों की सेना
बजंत्र बजावने कहे हैं। प्रथम तो जिस पर श्रीकृष्ण
भगवानजी विराजमान हैं तिस बड़े रथ की सारी
सामग्री कंचन की है और सारी रत्नों से जडत है जैसे
वर्षा ऋतु का मेघ गरजे है तैसे ही रथ के पहियों की
अवाज है ऐसा तो रथ है अब घोडों की शोभा कहे

म जैसे गौ का दूध होता है ऐसा तो तिन घोडों का
दर रंग है और जैसा कार्त्तिक का फूला हुआ कमल
ता है ऐसा तो सुन्दर घोडों का मुख है और बहुत
न्दर हैं गरदनां जिन्हों कीयां और सुन्दर हैं कन्न
जिन्हों के सुन्दर हैं पूछां जिनां कियां स्वर्ण के घुंघ-
ओं की जल रेव है, और चरणों विखे नूपर स्वर्ण के
पडे हैं यह तो घोडों की शोभा कही है ऐसे सुन्दर
रथ पर सारथी भगतवत्सल सत्यस्वरूप आनन्द
मूरति जो हैं श्रीकृष्ण भगवान जी सो विराजमान हैं
और योधा के स्थान अर्जुन भगत विराजमान है तिन

ने भी दिव्य संख बजाये ॥ १४ ॥ प्रथम हृषिकेश जो
हैं श्रीकृष्ण भगवान जी तिन्हों ने अपना पंचजन्य
नामा संख बजाया और देवदत्त नामा संख अर्जुन ने
बजाया और पौंड्र नामा शंख भीमसेन ने बजाया
॥ १५ ॥ सो भीमसेन कैसा है जिसका उदर बडा
है और कमर भी बडी है और अनन्त विजय नामा
संख कुन्ती का पुत्र जो राजा युधिष्ठिर है तिसने
बजाया और सघोष नामा संख नकुल ने बजाया
मणिपुष्प नामा संख सहदेव ने बजाया ॥ १६ ॥ बडे
धनुष के धारनेहारा काशी का राजा तिसने भी संख

म...या और महारथी शिखंडी ने भी बजाया और ...ष्टद्युम्न ने भी बजाया और राजा विराट ने भी ...जाया और अजीत जो किसी से जीतिया ना जाये ऐसा जो सात्यकि यादव है तिसने भी बजाया ॥ १७ ॥ और राजा द्रुपद ने भी बजाया और द्रौपदी के पुत्रों ने भी बजाये और जितने पाडवों की सेना के राजे थे सब ने संख बजाये और महाबाहू जो है सुभद्रा का बेटा अभिमन्यु तिसने भी बजाया इन सब ने अपने २ भिन्न २ संख बजाये ॥ १८ ॥ तिन संखों का शब्द सुन कर धृतराष्ट के पुत्रों के हृदय विदीर्ण हुए विदीर्ण क्या

हृदय फट गए धरती और आकाश शब्दों के साथ
गया ॥१९॥ इसके उपरान्त धृतराष्ट्र के पुत्रों की सेन
अर्जुन ने देखी जब दोनों ओर की सेना के शस्त्र चलने
लगे तब अपना धनुष सिर ऊपर फेरकर अर्जुन पांडव
ऋषिकेश जो हैं श्रीकृष्ण भगवानजी तिनको बोलता
भया हे अच्युत अविनाशी पुरुषजी मेरा रथ दोनों
सेना के बीच लेजाकर खड़ा करो ॥ २० ॥ तब देखूं
हमारे साथ युद्ध करने को कौन २ आए हैं। प्राणों को
और धनको त्यागकर जो आए हैं तिन सब को मैं
देखूंगा ॥ २१ ॥ संजयउवाच-संजय राजा धृतराष्ट्र को

हे हे राजा जी ऋषीकेश जो श्रीकृष्ण भगवानजी
तिनको अर्जुन ने यह वचन कहे तब भगतवत्सल जो
हैं गोबिन्दजी तिन अर्जुन के घोडे प्रेरकर अर्जुन का
रथ दोनों सेना के बीच लेजाए खडा किया भीष्म और
द्रोणाचार्य के सन्मुख अर्जुन का रथ लेजाय खडा किया
और भीष्म द्रोणाचार्य की दाईं बाईं ओर और भी योधा थे
तब कृष्ण भगवानजी अर्जुन को बोले हे अर्जुन! तेरा रथ
मैंने कौरवों की सेना के सन्मुख खडा किया है तू इन
को देख ॥२२,२३,२४,२५॥ तब अर्जुन ने कौरवों की
सेना विखे जो योधे देखे सो कौन २ योधे देखे पिता-

मह देखे, गुरु देखे, मावले देखे,
सखा देखे, ससुर और मित्र देखे, पुत्र देखे, पौत्र दे[illegible]
सेनाओं विखे अपने ही कुटुम्बी देखे ॥ २६ ॥ इन दोनों
बहुत दया उपजी तब अर्जुन शोक के साथ देखकर अर्जुन को
भगवान्‌जी को बोलता भया ॥ २७ ॥ श्रीकृष्ण
अर्जुन श्रीकृष्ण भगवान् को कहे है हे श्रीकृष्ण भग-
वानजी ! इस सेना विखे मैंने सब अपने ही सज्जन
भाई बन्धु कुटुम्बी देखे हैं। जो योधे रण विखे आए
हैं, तिनको देखकर मेरा शरीर बहुत दुःख पाता है ॥२८॥
और मेरा मुख सूक गया है, और मेरा देह ठौर ते

ल गया है, मेरे रोम खडे होगये हैं ॥२९॥ गाण्डीव नामी धनुष मेरे हाथ से गिर पडा है और त्वचा जल उठी है मैं खडा भी नहीं हो सकता ॥३०॥ और मेरा मन भी भ्रमे है और हे केशवजी! मैं शकुन भी बुरे देखता हूं, और ऐसा निमित्त भी नहीं देखता यह विपरीत बुद्धि है, हे केशवजी ! इस युद्ध विखे भाइयों केमारेते मैं अपना कल्याण भी नहीं देखता ॥३१॥ हे श्रीकृष्ण जी ! मैं अपनी जय भी नहीं चाहता और मुझ को राजकी वाछा नहीं और न सुखकी है, हे गोविन्दजी राज किस काम है और राजके भोग किस काम हैं ॥३२॥

जिनके सुख निमित्त राज लीजे है, जो कुटुम्ब
लोग सुख पावें, सोई कुटुम्ब के लोग मारकर राज
लीजिये ? यह सभी कुटुम्ब के योधा लोग एकत्र भए हैं,
प्राण और धनको त्यागकर युद्ध के निमित्त खडे हुए
हैं ॥३३॥ सो यह कौन २ हैं ? गुरु हैं, पितामह हैं,
पुत्र हैं, ताए हैं, मावले हैं, सुसरे हैं, पोत्रे हैं, साले हैं
और कुडम हैं ॥३४॥ हे मधुसूदनजी ! इनके मारने
की मुझको इच्छा नहीं, इनपर मुझको बहुत दया उपजी
है, हे धरतीके धारणहारे श्रीकृष्ण भगवान्‌जी ! मैं इनको
मारकर त्रिलोकीका राज पाऊंगा, तो भी न मारूंगा,

कितनीक बात है ॥ ३८ ॥ हे जनार्दन
म मिवान उपजी
जी ४१ ॥ जब वर्णक पुत्रों को मारने से हमारी कल्याण
को पहुंचने से रह गया होगा, इनके मारने से हम को
पड़ेंगे ॥४२,४३॥ स कार यह महापापी भी हैं, पर तो
श्रेष्ठ श्रीकृष्ण भगवान्जी ! यह सभी पूजने योग्य हैं,
तिसने इतने पापकिये सो यह नहीं मारूंगा ॥ ३६ ॥
करनेहारे के सिर पर होते हैं, फिर हम इनको मारने
पापों का फल क्य पावे है सो सुनो ॥ यद्यपि राज
नरक भोगता है, न्याय-शास्त्र में मैंने यह यह धृतराष्ट्र
है ॥ ४४ ॥ अब अर्जुन और पछतावे है हा जे है, जो

कुछ मित्र साथ कपट करने मे दोष उ जो कुटुम्ब
इसको नहीं समझते सो क्या इनकी लोग मारकर राज
समझता ? जो कुलके नष्ट करने योधा लोग एकत्र भए हैं,
पापको मैं भलीभाति जान युद्ध के निमित्त खडे हुए
पाप कुलके नष्टकरने से हैं ? गुरु हैं, पितामह हैं,
भली भांति कहै, हे हैं, सुसरे हैं, पोत्रे हैं, साले हैं
कीजे तब जो लरे३८॥ हे मधुसूदनजी ! इनके मारने
का भी नष्ट होछा नहीं, इनपर मुझको बहुत दया उपजी
सारे कुरु धारणहारे श्रीकृष्ण भगवान्‌जी ! मैं इन
की त्रिलोकीका राज पाऊंगा, तो भी न मारूंगा

म... मिलें संतान उपजी वर्णसङ्कर कहिये पराए पुरुषकी संतान ...जी ॥ ४१ ॥ जब वर्णसङ्कर भई तब पिंड और जल पितरों को पहुंचने से रह गया, तो पितर स्वर्ग से गिर पड़ेंगे ॥४२,४३॥ तिस कारणसे हे यादव-वंशियों विषे श्रेष्ठ श्रीकृष्ण भगवान्‌जी ! जिसने कुलको नष्ट किया, तिसने इतने पाप किये सो यह सब पाप कुलके नष्ट करनेहारे के सिर पर होते हैं, फिर वह मनुष्य उन पापों का फल क्या पावे है सो सुनो । सो प्राणी सदा नरक भोगता है, न्याय-शास्त्र में मैंने यह श्रवण किया है ॥ ४४ ॥ अब अर्जुन और पछतावे है हाथ बजाकर

और सिरको फेरकर कहता है, हा हा देखो भाई मैंने कैसा पापका उद्यम किया था, राज्य-सुखके लोभ निमित्त अपने कुलको नष्ट करने लगा था ॥ ४५ ॥ अब मैं अपने हाथ विखे शस्त्र न पकड़ूंगा, और धृत-राष्ट्र के पुत्रोंके हाथ विखे शस्त्र होवेंगे, और मैं उनके सन्मुख हूंगा वोह मुझको मारेंगे इससे मेरी कल्याण होगी ॥४६॥ संजय उवाच–संजय धृतराष्ट्र को कहे है। हे राजन्! अर्जुन ने यह वचन कहकर धनुषबाण हाथ से छोड दिया है और शोक के समुद्र विखे मग्न होकर मूर्छा खाय कर बैठ गया ॥

इति श्रीभगवतगीता सूपनिष्पद्ब्रह्मविद्या० अर्जुन विषादयोगोनाम प्रथमो अध्याय ॥१॥

* प्रथम अध्याय का महात्म्य *

एक समय कैलास पर्बत महादेव और पार्वती की आपस में गोष्ट हुई पार्वती ने पूछा हे महादेवजी ! आप अपने मनमें किस ज्ञान कर पवित्र हुए हो जिस ज्ञानके बलकर आपको संसार के लोक शिवकर पूजते हैं और तुम्हारे कर्म यह दिखाई देते हैं मृगछाला ओढे अंगों में मसानोंकी विभूति लगाये गलेमें सर्प और मुंडों की माला पैहर रहे हो इनमें तो कोई कर्म पवित्र नहीं सो आप मुझे वह ज्ञान सुनाओ जिस ज्ञानकर तुम अन्तर से पवित्र हो, तब श्रीमहादेव जी ने कहा । श्रीमहादेव

उवाच–श्रीमहादेव जी बोले हे पार्वती ! सुन, जिस ज्ञानकर मैं पवित्र हूं और जिस ज्ञानकर मुझे बाहर के कर्म व्यापे नहीं सो गीता ज्ञान है, तिसका मैं हृदय विषे ध्यान करता हूं तिस ज्ञान कर मुझे बाहर के कर्म व्यापते नहीं,तब पार्वती ने कहा हे भगवन्! जो गीता ज्ञान ऐसा है जिसकी आप ऐसी उस्तुति करते हो तिस ज्ञान के श्रवण करने कर कोई कृतार्थ भी भया है? तब श्रीमहादेव जी बोले हे पार्वती ! इस ज्ञान को सुनकर बहुत जीव कृतार्थ हुए हैं और आगे भी होवेंगे तुझको एक पुरातन कथा कहता हूं तू श्रवण कर। श्रीमहादेव जी बोले कि

एक समय पाताल लोक में शेषनाग की शय्या पर श्री नारायणजी नैन मून्दकर अपने आनन्द में मगन भये थे और श्रीलक्ष्मी जी चरण झसती थी तिस समय विषे श्रीलक्ष्मी जी ने पूछा हे श्रीनारायणजी ! चौदां लोक के तुम ईश्वर हो जी क्या आप को निद्रा व्यापती है ? निद्रा से आलस तिन पुरुषों को व्यापता है जो जीव तामसी हैं और तुम तीनों गुणों से अतीत हो तुम श्री नारायण हो और प्रभु हो वासुदेव हो तुम नेत्र जो मूंद रहे हो यह मुझ को बड़ा आश्चर्य्य है। श्रीनारायण बोले सुन लक्ष्मी ! मुझ को निद्रा आलस नहीं व्यापता एक

शब्दरूप भगवत गीता है तिस विखे जो ज्ञान है तिस ज्ञानकर मैं आनन्द में मग्न रहता हूं और वह कैसा ज्ञान है जिस के उपजे ते यह जीव सदा आनन्द में रहता है कोई क्लेश दुःख इस जीव को व्यापता नहीं जैसे चौबिस अवतार मेरे आकार रूप हैं तैसे यह गीता शब्द रूप अवतार है तिस गीता विखे मेरे अंग हैं पांच अध्याय मेरा मुख हैं पांच अध्याय मेरिया भुजां हैं पांच अध्याय मेरा हृदय और मन है सोलहवां अध्याय मेरा उदर है सतारवां अध्याय मेरियां जघा हैं अठारवां अध्याय मेरे चर्ण हैं सर्व गीता के जो श्लोक हैं सो मेरियां नाड़िया हैं

और जो अक्षर हैं गीता के सो मेरे रोम हैं ऐसी जो मेरी शब्दरूपी गीता है तिसका अर्थ मैं हृदय विखे विचारता हूं और बहुत आनन्द विखे प्राप्त होता हूं हे लक्ष्मी ! तूं क्या जानती है तेरे मन में होगा जो मैं चरण मलती हूं तिस कर श्रीनारायण जी को आनन्द प्राप्त होता है। हे लक्ष्मी ! मैं जिस आनन्द विखे मग्न हूं सो गीता ज्ञान जो है तिस में मग्न हूं । तब श्रीलक्ष्मी जी बोली, हे श्रीनारायण जी ! जो ऐसा श्रीगीता जी का ज्ञान है, तिस को सुनकर कोई जीव कृतार्थ भी भये हैं, सो मुझ को कहो, तब श्रीनारायणजी ने कहा हे लक्ष्मी ! गीता

ज्ञान को सुनकर बहुत जीव कृतार्थ भये हैं सो तूं श्रवण कर ॥ श्रीनारायणोवाच– हे लक्ष्मी ! गीता के अध्याय का महात्म्य तो पीछे कहूंगा । अब श्लोक कहिता हूं श्लोक—सर्वशास्त्रमई गीता सर्वदेवो मयोहरी । सर्वतीर्थ मई गंगा सर्व धर्म्म मयोदया ॥ १ ॥ मनो जानत पाप पुण्यं देही जानत आपदा । गीता सर्व कृष्ण जानत माता जाने सुपिता । दोदोलोचन सर्वांनां विद्याना त्रई लोचनं । सप्तलोचनं धर्मानां ज्ञानी अनन्त लोचनं ॥ हे लक्ष्मी ! पहिले अध्याय का महात्म्य सुन, शिवजी पार्वती को इस भांति कहते हैं जिस भांति नारायणजी

की

ने लक्ष्मी को सुनाया था ॥ श्रीभगवानोवाच–हे लक्ष्मी ! शूद्र वर्ण एक प्राणी था । जो चाण्डालों के काम करता था और तेल लून का व्यापार करता था उसने एक बकरी पाली एक दिन वह बकरी चराने को गया बृक्षों के पत्र तोड़ने लगा तहां सांप ने उसको डासिया तत्काल प्राण निकल गये मरकर उस प्रणी ने बहुत नरक भोगे फिर बैल का जन्म पाया उस बैल को एक भिक्षुक ने मोल लिया वह भिक्षुक उस बैल पर चढ़ कर सारा दिन मागता फिरे जो कुछ भिक्षा मांगकर लावे वह अपने कुटम्ब साथ मिलकर खावे वह बैल सारी रात द्वारपर

बाधा रहे उसके खाने पीने की खबर न लेवे कुछ थोड़ा
जैसा भूसा उसके आगे डाल छोडे जां दिन चढ़े फिर
बैल पर चढकर मांगता फिरे कई दिन गुजरे तां वह
बैल भूख का मारा गिर पडा मरने लगा पर उसके प्राण
छूटे नहीं नगर के लोग देखा करें कोई तीर्थ का फलदे कोई
व्रत का फलदे पर बैल के प्राण छूटें नहीं एक दिन एक
गणका आई उसने मनुष्यों से पूछा यह भीड कैसी है
तो उन्होंने कहा इसके प्राण छूटते नहीं अनेक पुरायों
का फलदे रहे हैं तो भी इसकी मुक्ति नहीं होती तब गणका
ने कहा मैंने जो कर्म किया है तिसका फल मैं बैल के

निमित्त दिया इतना कहते ही बैल की मुक्ति हुई तब उस
बैलने आय के ब्राह्मण के घर जन्म लिया पिता ने उसका
नाम सुशरमा रखा जब बडा हुआ तब उसके पिता ने उस
को विद्यार्थी किया तां उसको पिछले जन्म की सुध रही
थी वह जाती सुन्दर हुआ उसने एक दिन मन में विचार
किया जिस गणका ने मुझ को बैल की जूनी से छुडाया
था तिस का दर्शन करीये विप्र चला चला गणका के
घर गया और कहा तूं मुझे पहचानती है ? गणका ने
कहा मैं नहीं पहचानती तूं कौन है मेरी तेरी क्या
पहचान है तूं विप्र मैं वेश्या हूं । तब विप्र ने कहा मैं

वही बैल हूं जिसको तैंने अपना पुण्य दिया था, तब मैं बैल की जूनी से छूटा था, अब मैं विप्र के घर आय जन्म लिया है तूं अपना वह पुण्य बता कि तैंने कौन पुण्य किया है। गणका ने कहा मैंने अपने जाने कोई पुण्य नहीं किया, पर घरमें एक तोता है, वह सवेरे पढता है, मैं उसके वाक्य सुनती हूं, उस पुण्यका फल मैंने तेरे निमित्त दिया था। तब उस विप्रने तोते मे पूछा, कि तू सवेरे क्या पढता है। तब तोतेने कहा, मैं पिछले जन्म विप्र का पुत्र था। पिता ने मुझे गीता के पाहिले अध्याय का पाठ सिखाया था, एक दिन मैंने कहा, मुझ को गुरु

तब ता...
की ि...

ने क्या पढाया है, तब गुरुजी ने मुझ को शाप देदिया कि
जा रे तू सूआ हो, तब मैं सूआ भया। एक दिन फन्दक
मुझे पकड लेगया। एक विप्रने मुझे मोल लिया, वह
विप्र भी अपने पुत्रको गीताका पाठ सिखाता था, तब मैंने
भी वह पाठ सीख लिया। एक दिन उस ब्राह्मणके घर
चोर पडे, उनको धन तो प्राप्त न हुआ, मेरा पिञ्जरा उठा
लेगये। उस चोरकी यह गणका मित्र थी, वह मुझे इस
को देगया। सो मैं नित्य गीताजी के पाहले अध्याय का
पाठ करता हूं, यह सुनती है, पर इस गणकाकी समझमें
नहीं आता, जो मैं पढता हूं, वही पुण्य तेरे निमित्त

किया, यह श्रीगीताजीके पहिले अध्यायके पाठका फल है, तब उस विप्रने कहा, हे तोते ! तू भी विप्र है, मेरे आशीर्वाद कर तेरा कल्याण हो । सो हे लक्ष्मी ! इतना कहनेसे तोतेकी मुक्ति हुई, और उस गणकाने भी भले कर्म करने ग्रहण किये। नित्यप्रति स्नान करे और गीता के पहिले अध्याय का पाठ करे, इस करके भलेभले विप्र, क्षात्रिय, वैष्णव, अतीतउस वेश्या की पूजा करने लगे, और विप्र अपने घर गया। श्रीनारायनजीने कहा, हे लक्ष्मी! जो कोई अज्ञान कर भी गीता का पाठ पढ़ें, श्रवण करे, तिनको भी मुक्ति मिलेगी, और इसका

फल कितना कहिये, अतुल फल है, सो पहिले अध्याय का महात्म्य मैंने कहा है और तू श्रवण किया है ॥१॥

इति श्रीपद्म पुराणे सती-ईश्वरसम्वादे उत्तराखण्डे गीतामहात्म्यनाम प्रथमोऽध्यायः सम्पूर्ण ॥१॥

दूसरा अध्याय

सांख्य योग

सञ्जय उवाच–सञ्जय धृतराष्ट्र को कहे है, हे राजा जी ! दयाकर भरा जो है अर्जुन, अश्रुपातों से पूर्ण हैं नेत्र जिसके सो रुदन करताहै। ऐसे विषादसे व्याकुल जो है अर्जुन तिसको श्रीकृष्ण भगवान्‌जी बोलते भये ॥१॥ श्रीभगवानुवाच–हे अर्जुन ! ऐसी बिखड़ी युद्धकी ठौर

पर तुझको यह दुःख कहा से आया है, यह नीचोंकी बुद्धि तुझको न चाहिये। इस बाट से स्वर्ग भी नहीं पाइये है, और संसार विखे कीर्त्ति भी न होवे है ॥२॥ इसलिये हे अर्जुन ! यह नपुंसक जैसी तुझको प्रकृति नहीं चाहिए और तू तत्त्व की बात समझता नहीं, हे परन्तप अर्जुन हृदय से इस नीचबुद्धिको त्यागकर उठ खड़ा हो ॥३॥ श्री कृष्णभगवान्‌के मुखकमलसे वचन श्रवणकरके अर्जुन कहता है। अर्जुनोवाच—हे मधुसूदनजी ! भीष्म और द्रोणाचार्य यह तो पूजा के योग्य हैं, इनकी पूजा कीजे और कुछ भली वस्तु इनके आगे भेटा रखिये, इनको

बाणों का प्रहार किस भाति करिये, यह तो बड़े महागुरु हैं
बड़े महानुभाव हैं ॥४॥ इनको मारेसे मेरी कल्याण कहां
है, इन्द्रियोंके भोगों निमित्त इनको घात करिये, तोइन
को मार कर जो राजके भोग भोगिये, सो भोग इनके
रुधिर साथ लपेटे हुए भोगिये ॥५॥ और यह बात भी
निश्चयकर नहीं जानी जाती, जो सर्वथा हमारी ही
जीत होए, पर यह बात मैं निश्चय जानूं हूं, जो यह हमारे
सन्मुख धृतराष्ट्रके पुत्र जो खड़े हैं सो इनके मारे से
हमारा जीवना भला नहीं ॥६॥ और आपने जो कहा है
कि नीचता विखे मत प्राप्त हो, सो मैं नीच बुद्धि के पाप

को मानता नहीं, और मैं ऐसा मूर्ख होगया हूं, जो धर्म अधर्मको नहीं समझता, जो धर्म मुझको किस करके है और अधर्म कैसे है हे प्रभु जी ! मैं शास्ना योग हूं मनसा वाचा कर्मणा कर तुम्हारी शर्ण आया हूं जिस करके मेरा कल्याण हो सो बात कृपाकर मुझको कहो ॥७॥ हे प्रभुजी ! ऐसे शोक कर मेरियां इन्द्रियां सूक गई हैं सा बात मैं कोई नहीं देखता जिस से मेरा शोक दूर होवे, हे प्रभु ! जो शत्रुओं को मारकर निष्कंटक राजपाऊं सारी भूमिको और देव लोक जो है स्वर्ग तिस की भी राजसामग्री मैं पाऊं इनको मारकर तौभी मेरा शोक नहीं

जायेगा मैं जो इनको मारूं सो भूमि राजकी कितनीक
बात है ॥८॥ संजय उवाच। राजन् यह बात ऋषिकेश जो
है केशवजी तिनको गुडाकेश जो है अर्जुन कहता है, हे
गोविन्दजी! मैं युद्ध इनकेसाथ किसी भांति न करूंगा यह
कहकर अर्जुन चुप करगया ॥९॥ संजय धृतराष्ट्रको कहता
है हे राजाजी ! ऐसे दुःखविखे प्राप्त जो है अर्जुन तिसको
कृष्णभगवानजी हंसकर यह बात कहते हैं ॥१०॥ अब
सांख्य शास्त्र का मत अर्जुन को कहते हैं । श्री भग-
वानोवाच—हे अर्जुन ! जो विवेकी पुरुष हैं तिनको किसी
वस्तु की चिंता करनी नहीं आई वह किसी वस्तुकी चिन्ता

नहीं करते ॥ ११ ॥ जिन के मरने की चिन्ता तूंने करी है सो तेरे कहे मारे नहीं जाते क्या यह अभी उपजे हैं? ये पीछे भी थे और अब भी हैं और आगे भी होएंगे ॥१२॥ यह जो बोलने हारा आत्मा है सो अविनाशीहै और देहकी जैसी तीन अवस्थाहैं बाल, योवन वृद्ध तैसी चौथी अवस्था देह की मरना है यहतो देह के धर्म हैं सो विवेकी पुरुष आत्मा को अविनाशी जानते हैं और देह का मरना ही धर्म है यह जान कर बुद्धिमान किसीका शोक नहीं करते ॥१३॥ हेकुंतिनंदन अर्जुन ! तुझ को इंद्रियां का ज्ञान प्राप्त भया सो यह ज्ञानसुख दुःख

शीत उष्णाका दाता है इसे सुख दुःख प्राप्त भी होता है और
मिटभी जाताहै अंतवतहै हे अर्जुन! तूइनको सहार॥१४॥
हे श्रेष्ठ अर्जुन! जिसको इंद्रियों के सुख और दुख अपनी
निश्चलतासे चलाये न सकें तिनहीं पुरुषोंने अमृतपान
कियाहै सोई पुरुष अमर हुएहैं।१५।हे अर्जुन!यहतो समस्त
देही विखे आत्मा व्याप्या है तिस को तूं अविनाशी
जान यह किसी के कहे मारिया नहींजाता यह अंतवत
है शरीर उपजते भी हैं और विनसते भी हैं और
आत्मा नित्य है अमर है फिर कैसा है निराहार है कुछ
खाता पीता नहीं और यह आत्मा की मर्यादा भी नहीं

कि कितना है ॥१९॥ तिस कारण से हे अर्जुन! युद्ध करके
कोई कहे अमुके को मैंने मारिया है सो वह दोनों कुछ
नहीं समझते नाही मूआ और न किसे मारिया है आत्मा
कैसा है कभी जन्मता नहीं और मरता भी नहीं है।१७।
और यह भी नहीं जो कभी होता है कभी नहीं होता
और यह भी नहीं आत्मा कैसा अजर है जन्म मरणसे
रहित है नित्य है अविनाशी है शाश्वत है और पुरातन
है और किसी के कहे मारिया नहीं जाता ॥१८॥ शरीर
मरते जन्मते हैं तिनका मरना ही धर्म है परन्तु मरना
आत्मा का धर्म नहीं ॥१९॥ हे अर्जुन ! जिन ऐसा

अविनाशी आत्मा नहीं जानिया पछानिया सो पुरुष किस
को कहे है कि कोई मारिया कि अमुक ने हमें मारिया
यह न जान ॥२०,२१॥ देह और आत्मा का संयोग
इकट्ठा होना सो किस भांत है सो सुन जैसे पुराना वस्त्र
उतारिया और नया पहर लिया इसी भांति आत्मा पुरा-
तन देह को छोड़ कर नया देह लेता है ॥ २२ ॥ फिर
आत्मा कैसा है शस्त्रों कर काटा नहीं जाता अग्नि विखे
जलता नहीं और जल विखे गलता नहीं और पवन कर
सूकता नहीं ॥ २३ ॥ आत्मा छेदन काटन से रहित है
जलने से रहित है गलने से रहित है सूकने से रहित है

अविनाशी है सर्व व्यापी है सर्व देहों में भरिया है इसी
से स्थान नेहचल कहिये सनातन पुरातन है ॥२४॥ फिर
कैसा है आत्मा अव्यय है किसी ने देखिया भी नहीं
अचिंत है चितव्या नहीं जाता और अकर्त्ता है कुछ
कृत कार्ज भी नहीं करता। हे अर्जुन ! जिन्होंने ऐसा
आत्मा पछानिआ है सो किसकी चिन्ता करे। आत्मा
तो ऐसा कहिये है जैसा मैंने तुझे कहा है हे महाबाहु ! जो
तू आत्मा को ऐसा न जाने है, तौ भी चिंता किसीकी
नहीं करनी आई ॥२५॥ क्यों जो जन्मया है सो निश्चय
कर मरेगा जो मरे है तिसका निश्चय कर जन्म है। इस

भांति समझ कर भी चिन्ता नहीं करनी आई ॥२६॥ अब
और सुन, यह सभी भूत प्राणी शरीर धारी इनका आदि
अन्त जाना नहीं जाता जो कहां से आए कहां जावेंगे।
बीच ही से तो देखने लगे हैं जब शरीरों को छोड़ते
हैं तो नहीं जानते जो कहां गए, जिनका आदि अन्त
न जाना जाए, जो कहां से आए, कहां को गए, तिनकी
चिन्ता क्या कीजे इस भांति कर भी चिन्ता करनी
नहीं आई॥२७॥अब औरसुन जो इस बोलनेहारे आत्मा
को देखिया चाहे सो आश्चर्य होकर देखे और जो कोई
कहे सो आश्चर्य कर कहे ॥२८॥ आश्चर्य क्या कहिये,

जिसका कुछ निर्णय न किया जाये कि यह क्या है
जिसका देह विखे रहते भी मर्म न जानिये जो क्या है
तो इस भांति भी चिन्ताकरनी नहीं आई॥२९॥और ए
बात इस आत्मा की निश्चय कर जानिये है अविनाशी
है इस कारण से हे अर्जुन! तूं किसी भूत प्राणी की चिन्ता
मतकर॥३०॥तूं क्षत्रिय है युद्ध करना तेरा धर्म तूं अपने
धर्म से मत गिर ऐसे युद्ध विखे कल्याण क्षत्रियों को
दुर्लभ है।३१।अपनीइच्छा कर यह सभीयोधा आये प्राप्त
हुए हैं स्वर्गके द्वार इनके उघड़ पड़े हैं, हे अर्जुन ! इस
युद्ध के मार्ग कर सुखनही स्वर्गको जाये प्राप्त होवेंगे३२

और जो तूं यह धर्म का संग्राम न करेगा तो तेरा धर्म भी जाता रहेगा और तेरी कीर्त्ति भी जाएगी॥३३॥अपने धर्म और कीर्त्ति को छोड़कर पाप विखे प्राप्त होवेगा। जो लोग तेरी कीर्त्ति करते हैं सोई लोग तेरी निन्दा करेंगे जो अर्जुन कुछ नहीं,बलहीन लोगों विखे जिसकी निन्दा चली तिसका जीवने से मरना भला है ॥३४॥ और जो योधा तेरे से डरते हैं तुझको महारथी योधा कर मानते हैं सोई योधा तुमको कहेंगे अर्जुन कुछ नहीं, बलहीन है, तुझे बुरे बचन कहेंगे ॥ ३५ ॥ तेरे पराक्रम की निन्दा करेंगे। इस से उपरान्त तुझे और

बडा दुःख न होगा ॥३६॥ जो तूं युद्ध विखे शरीर छोड़ेगा
तो स्वर्ग में जाए प्राप्त होवेगा। जो जीतेगा तो पृथ्वी
के राज का सुख प्राप्त होगा। इस लिये हे अर्जुन! तूं
उठ खड़ा हो युद्ध को निश्चय कर ॥३७॥ सुख और
दुःख को एक समान जान लाभ और हानि को एक
समान जानकर युद्धकर तो तुझे पाप नहीं लगेगा॥३८॥
हे अर्जुन! मैं तुझको यह सांख्यशास्त्र का मत सुनाया है,
अब बुद्धि योग सुन, सो कैसे बुद्धि योग है जिसके सुने
समझे से जन्म मरणके बन्धनको काट डारेंगा मुक्ति
पावेंगा ॥ ३९ ॥ अब प्रथम तूं मेरी बुद्धि सुन, जो मैं

अपने भगतों साथ कैसा हूं। जो मेरे भगत मेरी सेवा पूजा भक्ति स्मरण भूलकर भी करे हैं आगे का पीछे और पीछे का आगे तो तिस का पाप कुछ नहीं, मैं क्यों कर मानूं हूं जो मेरा भगत मेरे प्रेम साथ मग्न हुआ है इसको सुर्त नहीं है, तिसकी साख सुन, जैसे राम अवतार में भिलनी की गति, प्रेम साथ जूठे बेर भोजन किये हैं हे अर्जुन! मेरी गति देखने में थोडी है, क्या थोडी है कि एक तुलसीदल अथवा पुष्पमाला मुझे समर्पण करे अथवा एक बार नमस्कार करे अथवा एक बार मेरा नाम लेवे, सो यह देखने को तो थोडी है पर इनका

फल बडा है ॥४०॥ क्या फल है, जन्म मरण के दुःख को काटकर मेरे अबिनाशी पद विषे लै होता है यह जो भक्तों साथ मेरी प्रीति है सो कही है और भक्ति का फल भी कहा, अब जैसा मेरे साथ मेरे भक्तों की बुद्धि है सो सुन, मेरे भक्तों की केवल एक मेरे चरण कमलोंकी सेवा साथ प्रीत है, मुझ बिना किसी और दूसरे को नहीं मानते और मेरे नाम बिना कुछ मुखसे और कहते भी नहीं और ना सुनते ही हैं केवल दृढ निश्चय है॥४१॥ और जिनका निश्चय मेरे साथ नहीं, तिनकी बात सुन, उनकी मत अनेक ओर भरमती फिरे है जिस ओर किसे लगाई तिसी

ओर लगी और वह कैसे हैं जिनका निश्चय मेरे साथ नहीं ॥४२॥ मीठी २ बाणी कर श्लोकोंको पढ़ पढ़ लोगों को सुनावते हैं और देवताकी भगती उपदेश करे हैं वह अन्धे मूर्ख अपने आपको पण्डित कहाते हैं॥४३,४४॥हे अर्जुन! वेदके विवाद करआप भी मोहे हुए हैं और लोगों को भी मोहित करते हैं। बहुड कैसे हैं इन्द्रियों के भोगों विखे है कामना जिनकी, तिनां स्वर्ग को ही परमपद समझ रखा है सो स्वर्ग जाए के गिर पड़ते हैं सो वह अनिश्चक बुद्धि जिनकी निश्चय मेरे साथ नहीं सो सोई कर्म करते हैं जिनके किये से बारम्बार संसार विखे

जन्म मरण होवे और जिन के करने से कष्ट बहुत होवे और तिस कर्म का तुच्छ फल स्वर्ग गये बहुड़ गिर पड़े ऐसे जो बुद्धि हीन हैं जिनकी कामना इन्द्रियों के भोगों विखे हैं और संसार विखे अपनी प्रभुता चाहते हैं इन बातों कर बुद्धि अन्ध भई है जिनकी तिनकी बुद्धि का निश्चय मेरे विखे नहीं, वह लोग परम सुख जो है समाधि सुख कल्याण सो कभी नहीं पाते ॥ ४५ ॥ अब अर्जुन वेद का वृत्तान्त सुन, वेद की बुद्धि भी तीनों गुणों विखे है तू इन तीनों गुणों से अतीत हैं। कैसा है जहां न शीत होए ना उष्ण होए और ना जन्म मरण

होए ऐसा जो आत्मा है सो सत्य स्वरूप और नित्य है
तूइसके साथ जुड़, आत्मा सुख और इन्द्रियों के भोगों
का सुख, तिन विखे बड़ा भेद है। तिनका दृष्टांत सुन,
जैसे जल का पात्र कुंवा, तालाब, टोभा, नदी इन के
विखे एक २ ही कार्य होए है। जो कूप के निकट जाय
तो यत्न करे जल निकाले तब पान कीजे पर भली
भांति कूप विखे इश्नान नहीं होता है वस्त्र भी धोये नहीं
जाते और जो तालाब टोबे नदी विखे जावे तहां जल
पीने का नहीं स्नान कर वस्त्र धोवते हैं और जब महाप्र-
लय के विखे जहां सातों ही समुद्र एक ही समुद्र हो

जाता है ऐसे अनन्त जल विखे भली भांति स्नान भी होए जलपान भी होए वस्त्र भी धोए इसी भांति आत्म-ब्रह्म साथ जुड़ अनन्त सुख पावे है ॥४६॥ इस सुख को मेरे उपासक जो हैं ब्रह्मा नारद आदि तपस्वी सब जानते हैं, तिसका कारण हे अर्जुन! ऐसा है जो तूं आत्मा का सुख जो है तिस साथ जुड़, तेरा जो क्षत्रियधर्म है सो कर, फल कुछ बांछ नाहीं। हार जीत एक समान जान कर युद्ध कर। हर्ष शोक से रहित हो इसका नाम समता योग कहिए ॥४७॥ हे अर्जुन! ऐसे युद्ध योग साथ जुड़ कर पाप पुण्य दोनों को काट डार और बुद्धि योग

कर आत्मा साथ जुड़, इसका नाम कल्याण योग कहिये
है ॥४८॥ ऐसे जो विवेकी पुरुष हैं सो फल किसी बात
का नहीं बांछते मुझ साथ जुड़ते हैं जो लोग फल बांछते
हैं सो नीच माति हैं ॥४९॥ हे अर्जुन! जब तूं मेरे साथ बुद्धि
का निश्चय नेहचल करेगा तब जन्म मरण के बन्धन को
काट कर मेरे अविनाशी पद विखे जाय प्राप्त होवेंगा।
हे अर्जुन! जब मोह के जाल को तेरी बुद्धि तोड़ेगा तब
जितने शास्त्र सुनें हैं तिनसे भी विरक्त होवेगा। जब
तेरी बुद्धि निर्मल होवेगी तब तूं समाधि योगके सुखको
जानेगा ॥५०॥ श्रीकृष्ण भगवानके वचन सुनकर अर्जुन

प्रश्न करे है। अर्जुनोवाच–हे केशवजी! जिसकी निहचल बुद्धि भई है तिसके लक्षण कृपा कर कहो जी तिसकी बोली कैसी है लोगों साथ बात किस भांति करे है और वह चलता किस भांति है और बैठता किस भांति है सो मैं किस भांति समझूं जो यह निश्चल बुद्धि है।५१,५२,५३,५४ इतना सुन कर कृष्ण भगवान जी कहे हैं। श्रीभगवानोवाच–हे अर्जुन! जिसकी कामना किसी बात करने पर नहीं उठती अपने आत्मा को पायकर सन्तुष्ट अघाय रहा है तिसको तू निश्चल बुद्धि जान। फिर कैसी है बुद्धि जिस की देह को दुःख लगे तो चिन्ता न करे और सुख की

वांछा न करे किसी साथ जिसका मोह नहीं और किसी का डर नहीं और किसी साथ बैर नहीं और किसी साथ प्रेम नहीं तिसको तूं निश्चल बुद्धि जान ॥५५॥ फिर कैसा है जिसकी किसे साथ प्रीति नहीं भली वस्तु पायकर हर्ष नहीं और बुरी वस्तु पाय ते शोक नहीं तिसकी बुद्धि निश्चल जान ॥५६,५७॥ फिर कैसे है जैसे कमठ जो है कच्छू सो अपने हाथ पाओं मुख सभी इन्द्रियां अपनी खोपरी में चढ़ाय लेता है तैसे जिस सभी इन्द्रियां विषयों ते वरज के बंध राखी हैं तिसको तूं निश्चल बुद्धि जान ॥५८॥ हे अर्जुन! यद्यापि विवेकी पुरुष इन्द्रियों को

जीतनेका यत्न करे है पर तो भी इन्द्रिया बलवान हैं मन को ठौर ते चलायेदेती हैं हे अर्जुन ! तिन सब इंद्रियोंको तूं बसकर किस भांति बसकर सो सुन, मनका निश्चल चेता मेरे विखे राख मन ही कर इन्द्रिया सुरजीत हैं सोई मन मेरे विखे निश्चल राख तब इन्द्रिया आपही जीतियां जावेंगी जिस के वश इन्द्रिया हैं तिसकी बुद्धि निश्चल जान ॥ ६१ ॥ और जो मेरे नाम मेरे ध्यान बिना कुछ चितवनी बात करनीहै इसते इस मनुष्यका किस भांत काज बिगड़े है सो सुन, जो मनुष्य विषयों की बात करे, तिसका संग कीजे अथवा अपने मन विखे

विषयों का ध्यान कीजे, तब विषयों का संग इस ते होता है, तिस संग से मन विखे काम ते आदि लेकर कामना उपजे हैं, काम ते क्रोध उपजे है ॥६०,६१,६२ क्रोध ते लोभ और लोभ ते मोह मोह ते चैतन्य का नाश होता है,चैतन्य का नाश हुआ तब बुद्धिका नाश हुआ,बुद्धि नाश होने से इसका अपना नाश होजाता है बुद्धि नष्ट हुई तब जैसे और पशु जून तैसेयह पशुहुआ तिस कारण ते जो मेरे भगत हैं सो संसारी मनुष्योंका संग कभी नहीं करते ॥६३॥ और मेरे नाम ते बिना और बात नहीं करते नाम की चितावनी बिना कुछ

और संकल्प नहीं करते यह मेरे भक्तोंको मेरी आज्ञा है। अब अर्जुन मेरे भगत छादन भोजनका अंगीकार कैसे करें हैं सो सुन, जैसे मेरी आज्ञा से आए मिलिया तैसे ही भोग लिया शोक ते रहित ॥६४॥ और जिनके मनका निश्चल चेता मेरे विखे होताहै तिन पर मैं कृपा करूं हूं मेरी कृपा ते तिनके छोटे बडे जो दुख हैं तिनका नाश होता है तब तिसका मन अति प्रसन्न होता है तिनकी बुद्धिका निश्चय मेरे विखे होंता है ॥६५॥ अब जिनकी नास्तिक बुद्धि है तिनकी बात सुन,हे अर्जुन! नास्तिक बुद्धि किसकी कहिते हैं । जो

कहते हैं कि कहां परमेश्वर है किने देखया भी है ? तिनकी
श्रद्धा मेरे विखे नहीं लगती मेरे विखे श्रद्धा लागे बिना शान्ति
नहीं और शान्ति ते बिना कोई सुख नहीं नास्तिक बुद्धि
सदा दुःखी रहते हैं ॥६६॥ हे अर्जुन ! जो कोई इन्द्री विषे
को चले तिस के पीछे मन को न जाने दीजे जो जावे तो
तिसकी बुद्धि किस भान्त की है सो सुन, जैसे नौका जो है
बेडी नदी में पारले किनारे चलती है और झखड आवता
है तो नौका को किनारे लगने देता नहीं जिधर किधर जाए
लगती है इसी भान्त इन्द्रियों के पछि मनके जाने से जीव
पार नहीं लागे है, सो ना जाने दीजै ॥६७॥ हे अर्जुन !

प्रथम तूं इन्द्रियोंको बसकर जिन पुरुषों ने इन्द्रिया अपने अपने अरथों ही ते वर्ज राखी हैं अपने बस करी हैं तिन की बुद्धि तूं निश्चल जान ॥६८॥ हे अर्जुन ! अब और सुन, मेरे स्मरण भजन की बारता का स्वाद जो है तिसकी संसारी मनुष्यों को सुर्त नहीं, तिन के भाने मेरी भजन रात है मेरी ओर ते सोए रहे हैं और संसार के विषयों को सावधान हैं तिनको यह दिन होते हैं जिस विखे मनुष्य जागते हैं और सयमी जो मेरे भक्त सो तिस ओर ते सोए रहे हैं तिनके भाने संसार की बात रात्रि है॥६९॥ और मेरे भक्त मेरे भजन विखे जागते हैं सावधान

5

हैं मेरा जो पूर्ण भक्तहै तिन के लक्षण सुन, जैसे समुद्र अपने जल कर पूर्ण है और नेहचल है तैसे ही मेरा भक्त पूर्ण और नेहचल चाहिये ॥७०॥ वह कैसा है? जिसका कामना मेरे भजन बिना किसी बातको नहीं चाहती, ऐसा जो निस्प्रेही और अबांछी निरअहंकार ममता से रहित सो शान्ति पद विखे लीन है और शान्ति तिस विखे लीन है ॥७१॥ हे अर्जुन! यह मैंने तुझको ब्रह्म स्थित कहा है, जो ब्रह्म में है तिसका यह स्थित स्वभाव है जिसको यह स्थित स्वभाव प्राप्त हुआ है सो फिर माया के मोह कर कभी नहीं मोहता, क्यों नहीं मोहता? सो

सुन, वह माया के पार निर्वाण ब्रह्मपद विखे जाय प्राप्त हुआ है ॥ ७२ ॥

इति श्रीमद्भगवद्गीता श्रीकृष्ण अर्जुनसंवादे सांख्य योगो नाम द्वितीय अध्याय ॥ २ ॥

* अथ दूसरे अध्याय का महात्म *

श्रीनारायणोवाच–नारायणजी कहैं हैं हे लक्ष्मी ! तूं श्रवण कर दाक्षिण देश में एक पूरण नामा नगर है वहा एक देवसुशर्मा बडा धनपात्तर रहिता था और साधु सेवा करता था एक दिन साधु को कहिने लगा हे संत जी ! मुझको श्रीनारायणजी के जानने का ज्ञान उपदेश करो जी जिस करके मेरा कल्याण होवे मैं मोक्ष पदवी

पाऊं, ऐसे सन्त सेवा करते बहुत दिन बीते तहां एक बाल
नामा ब्रह्मचारी आया उसकी सेवा बहुत करी और
बेनती करी हे सन्तजी! मुझे कृपाकर श्रीनारायणजी के
पावने का ज्ञान उपदेश करो जिस कर मेरे जीव का
कल्याण होवे मुक्ति होवे तब बाल ब्रह्मचारी ने कहा मैं
तुझे गीताजी के दूसरे अध्याय का पाठ सुनाता हूं
उसके सुनने से तेरी कल्याण होवेगी, तब देवसुशर्मा
ने कहा श्रीगीताजी के दूसरे अध्याय के सुनने से कोई
आगे भी मुक्त हुआ है ? तब बाल ब्रह्मचारी ने कहा मैं
तुझे एक पुरातन कथा सुनाता हूं, तूं श्रवण कर, एक

अयाली बनमें बकरियां चरता था और वहा मैं भजन किया करता था एक दिन रातको अयाली बकरियां लेकर घरको चला रास्ते में एक सिंह बैठा था। एक बकरी सबसे आगे चली जाती देखकर सिंह दौड़गया, तब वह अयाली यह आश्चर्य देखकर बडा चकित हुआ, और मैं भी वहां आय खडा हुआ, उस चरवाहे ने मुझे देख कर कहा, मैंने एक आश्चर्य देखा है, बकरी को देखकर सिंह डरके भाग गया है, तुम सन्त त्रिकालज्ञ हो यह वृत्तान्त मुझे कह सुनाओ, यह क्या चरित्र भया है, तब ब्रह्म-चारी ने कहा, अयाली मैं तुझे एक पिछली वारता

सुनाता हूं, यह बकरी पिछले जन्म डैन थी, जाती इसकी सुन्दर थी, जब इसका भर्ता मर गया, तब यह बडी डैन भई जिस सुन्दर बालक को देखे, तिसको खा लेवे और यह सिंह पिछले जन्म फन्दक था, वह पंछी पकडने बाहर गया, और डैन भी बन को गई थी, तहां डैन ने उस फन्दक को खालिया अब वोही फन्दक सिंह भया, और वोह डैन यह बकरी भई, सिंह को पिछले जन्म की खबर थी इस निमित्त इस बकरी को देखकर सिंह ने जाना, कि अब भी मुझे खाने आई है, तब अयाली ने कहा, मैं पिछले जन्म कौन था

तब ब्रह्मचारी ने कहा, तू पिछले जन्म चाण्डाल था, तब अयाली ने कहा, हे ब्रह्मचारीजी ! कोई ऐसा उपाय भी है ? जिसकर हम तीनों ही इस अधम देह से छूटें, तब ब्रह्मचारी ने कहा, हम तुम्हारे तीनों का उद्धार करते हैं एक बारता मेरे से सुनो, एक पर्वत की कन्दरा में एक शिला थी तिस पर श्रीगीता जी का दूसरा अध्याय लिखा हुआ था, मैंने तिन अक्षरों को उस शिला पर देखा था अब मैं तुम्हारे को मन, बच कर्म करके सुनाता हूं, तुम श्रवण करो, तब ब्रह्मचारी ने गीताजी के अक्षर सुनाये तब उसी समय तत्काल

ही आकाश ते बिमान आये तिन सभनों को विमान पर चढाकर बैकुण्ठ लोक को ले गये अधम देह से छूट कर देव देही पाई और देव सुशर्मा भी गीता ज्ञान को सुनकर मुक्त हुआ देव देही पायकर बैकुण्ठ को गया तब श्रीनारायण जी ने कहा, हे लक्ष्मी ! जो मनुष्य श्रीगीताजी के ज्ञान को पढे सुने तिस का फल क्या वर्णन करिये। श्रीगीताजी के श्रवण या दर्शन के करने से जीव मुक्ति को प्राप्त होते हैं, और पाठ का फल तो और भी अधिक॥२॥

इति श्रीगीतामहात्म्य द्वितीयोध्यायः समाप्तः ॥ २ ॥

* तीसरा अध्याय *

कर्म योग ।

अर्जुनोवाच–अर्जुन श्रीकृष्ण भगवान्‌जी से प्रश्न करे है। हे जनार्दनजी! हे केशवजी, यह जो निर्वाणपद ब्रह्मपद सभ ते श्रेष्ठ है इसके बिना घोर भयानक कर्म जो यह युद्ध है इस विखे मुझको क्यों जोडते हो॥१॥ मिले हुए बचन कहकर मेरी बुद्धि क्यों मोहते हो कहां निर्बाण पद कहां युद्ध करना एक बात निश्चय कर कहो, जिसते मेरी कल्याण होए॥२॥ अर्जुन के बचनसुनकर श्रीकृष्ण भगवान्‌जी बोलते भये। श्रीभगवानोबाच-हे निष्पाप अर्जुन

पहले ही जो मैंने लोगोंको ज्ञानयोग कहा है, योग साथ जुड़ रहना कहा है, योगियों का कर्म्म योग कहा है ॥३॥ हे अर्जुन जो कोई सब कर्म्म करने त्याग बैठे, कुछ आरम्भ न करे और कहे कि मैं नेहकर्म्मी हूं, संन्यासी हूं, सो पुरुष भूलकर कहे है, न वह संन्यासी है, न नेह-कर्म्मी है ॥४॥ जो कोई देहधारी है, सो एक क्षण भी नेह-कर्म्मी नहीं, माता के गर्भ में आवने से लेकर मरने प्रयन्त सदा कर्म ही करे है, नेहकर्म कभी नहीं एह माया की रची हुई जो देह है सो इसके वश नहीं, माया के वश है हे अर्जुन! अब ऐसे योगी जो हैं, वैरागी तिन

की बात सुन ॥५॥ कैसे है जो इन्द्रियां संयम करके रोकते
हैं, और चौकड़ी मारे बैठे हैं और मनकर इन्द्रियों के
भोगों को चितवना करते हैं, कि होवे तो खावें, और
पहरें, सो ऐसे योगीश्वर पाखंडी हैं ॥६॥ और जो ऐसे हैं
सो तिनसे भले है, कैसे ? जो बाहर कियां इन्द्रियां कर
कर्म करे है और मनका निश्चल चेता मेरे विखे रखते
हैं वो श्रेष्ठ हैं ॥७॥ तिस कारण से तूं क्षत्रिय है युद्ध करना
तेरा धर्म है इन्द्रियों कर युद्ध को कर और मन का
निश्चल चेता मेरे में राख, हे अर्जुन ! कर्म किये बिना देह
भी नहीं रहती और क्या ॥८॥ श्लोक–जगन्नाथ निमित्त

कर्म्म सो नेहकर्म्म निरबन्धनः। लोक कर्म्मा हठ सन्देह
जन्म जन्म वहु भोगते ॥१॥ हे अर्जुन ! यज्ञ रूप जो
भगवान है सो मैं हूं जो मेरे ते भिन्न कर्म्म करे हैं
सो बन्धन में पड़ते हैं तिस कारण ते हे कुन्तीनन्दन
अर्जुन ! मेरी आज्ञा मान कर तू कर्म्म कर और फल
कुछ वांछ नहीं, अव यज्ञ मार्ग कर जगत पुरुष
भगवान का जो जन पूजन करते हैं तिनका प्रकार
कहिते हैं सो सुन ॥९॥ हे अर्जुन ! जब ब्रह्मा जी ने इस
संसार की उत्पत्ति की तब सर्व यज्ञ करने की रचना
बनाई और यज्ञों की सामग्री भी उपजाई और ब्रह्मा

जी मनुष्यों को यह आज्ञा करी जो हे मनुष्यो ! इ
यज्ञोंकी सामग्री कर यज्ञ पुरुष भगवान को पूजो ॥१०
और साथ ही जो भगवान के अंग हैं सब देवता तिन
को भी पूजो और जो कुछ तुम वांच्छोगे सो देवत
तुमको मन वांच्छित फल देवेंगे सो मनुष्य लगे देवताओं
को पूजने और मनुष्यों की कल्याण देवता ते है॥११
श्लोक—जो भजन करहि प्राणी लाये पूजा देवता। ते
मुक्त सकल पापहि एह वचन मन कर्म सह ॥ १ ॥
अनहोय पूजा करहिं भोजन ते मानुषी पाप करें। क्षेत्र
बाड़ी जाय मृतक ते पाप आये भोगते ॥२॥ हे अर्जुन

देवता मनुष्यों के मन वांच्छित फल देने को सामर्थ्य हैं और मनुष्यों का कल्याण देवता ते है जो कोई मनुष्य देवता के दिए बिना आप ही भोजन करे सो देवता का चोर कहिये है ॥१२॥ और जो मनुष्य मुझको भोग लगाय कर मेरा प्रसाद जान कर अन्न भोजन करे है सो सब उपाधि ते मुक्त है और जिस प्राणी मेरे समर्पण किए बिना आप ही भोजन कर लिया है सो प्राणी सब पापों को भोगता है।१३। कौन पाप? सो सुन, जो जीव खेती करते समय मूए हैं और चक्की विखे, उखली विखे, चूल्हे विखे, बुहारी साथ, पैरीं चलते समय सोवने समय इन ठाहरों

विखे जीव घात होते हैं तिनका पाप तिनके माथे प
होता है जो प्राणी मेरे स्मरपे बिना आपही भोजन क
है अब हे अर्जुन ! परमेश्वर के पूजने ते संसार की जो
कल्याण होती है सो सुन,सब शरीरधारी जो भूत प्राणी
हैं तिनकी उत्पत्ति अन्न से होती है प्रथम एह अन्न
पुरुष खाते हैं तिससे वीर्य होता है और जो स्त्रिया
अन्न खाती हैं तिससे रज उपजे है तिस ही वीर्य्य और
रज के सङ्ग देह की उत्पत्ति होती है इस प्रकार अन्न
से देह उत्पत्ति होती है और अन्न की उत्पत्ति मेघ से
होती है मेघ यज्ञ करने से उत्पत्ति होते हैं और यज्ञ

कर्म्म कीये से उपजे है ॥१४॥ और यज्ञ करने की विधि
वेदोंसे जानी जाती है और वेद पारब्रह्म विष्णु से उपजे
हैं तिस कारण ते सर्वव्यापी जो है ब्रह्म सो नित्य ही यज्ञ
करके पूजने योग्य है ॥१५॥ जिसके पूजन कीये ते संसार
की कल्याण होती है जो ऐसे कल्याण रूप पारब्रह्म को
पूजे नहीं और अपनी इन्द्रियोंके लिए रसोई करते हैं तिन
का जीवना निष्फल है ।१६। अब जिनकी प्रीति आत्मा
साथ लगी है सो आत्म लोभी हैं और जो आत्माके लाभ
को पाय कर तृप्त होरहे हैं और जो आत्मा लाभ कर
संतुष्ट भये हैं तिनको कोई कर्म करना नहीं चाहिए ॥१७

तिनको किसी भले बुरे कर्म्म किए का फल नहीं अन
कीये ते कुछ पाप भी नहीं किए ते कुछ पुण्य नहीं ज
प्राणी आत्माके लोभी हैं तिनका संसार के मनुष्यों साथ
कुछ प्रयोजन नहीं रहा ॥१८॥ अब अर्जुन और कर्म
कहे हैं सो सुन, जो भले कर्म्म हैं अश्नान आदि से लेकर
कर्म सो नहीं त्यागने चाहिए जो सत्कर्म करे और फल
की वांच्छा न करे सो पुरुष इन सत्कर्मों के मार्ग कर पार-
ब्रह्म को प्राप्त होते हैं।१९।हे अर्जुन! भले कर्म जो हैं सत्कर्म
अश्नान से आदि लेकर इन सत्कर्मों को करते करते
राजा जनक विदेही से आदि लेकर बहुत मनुष्य सिद्ध

अवस्था को प्राप्त हुए हैं तो भी लोगों की कल्याण क निमित्त कर्म करते ही रहे।२०।जो कर्म श्रेष्ठ मनुष्य करते हैं तिन को देखकर वही कर्म और भी लोग करते हैं इस कारण से महाभाव विदेह अवस्था विखे प्राप्त भए हैं तो भी सत्कर्म नहीं त्यागे क्यों जो और लोगों को सिद्ध अवस्था नहीं प्राप्त हुई और सत्कर्मों का त्याग करेंगे तब लोगों के सब कर्म भ्रष्ट होजायेंगे पशु पंछी जून की भांति मनुष्य होवेंगे इसी कारण से महाभाव शुभ कर्म करते रहते हैं।।२१।।हे अर्जुन!मुझ को देख जो मुझ को त्रिलोकी विखे किसी कर्म करने के साथ प्रयोजन नहीं पर जो कुछ

मैं सत्कर्म करूंगा तब मुझ को कुछ पुण्य न होगा औ
अनकीये से कुछ पाप न होगा पर मैं लोगोंकी कल्याण
निमित्त अश्नान गायत्री सन्ध्या तर्पण करता हूं औ
ब्राह्मणों की, गौ की, माता पिता की, सेवा करता हूं औ
भी शुभ कर्म करता हूं लोगों को सत्कर्म सिखावने
निमित्त।२२।और मैं जो आलस करके सत्कर्मोंको त्यागक
बैठूं तब मुझको देखकर सभी लोग सत्कर्मोंका त्यागक
बैठेंगे हे अर्जुन! जिस मार्ग मैं चलता हूं सो मुझको देख
मेरे मार्ग विखे समस्त मनुष्य चले हैं।२३ और जो तू क
कि लोगोंके निमित्त एह कर्मोंका जञ्जाल क्यों करते है

लोगों साथ तुम्हारा क्या प्रयोजन है, तिसका उत्तर सुन, हे अर्जुन ! एह मनुष्य नारायण की मूर्ति है जब एह सभी कर्म भ्रष्ट होवे तब जैसे और पशु हैं तैसे ही मनुष्य भी पशुवत् होजावे तब अपनी प्रजा की हानि होनेसे अपनी भी हानि होएगी एह निमित्त अपनी प्रजा के कल्याण के लिये सत्कर्म करता हूं और प्रयोजन मुझ को कुछ नहीं॥२४॥तिस कारण से हे अर्जुन ! जो कोई विवेकी पुरुष होवे सो सिद्ध अवस्थाको भी प्राप्त भया है,तो भी चाहिये जो लोगों के कल्याण निमित्त सत्कर्मों का त्याग न करे और अपनी बुद्धि सिद्ध अवस्था को प्राप्त हुए का और

संसारी लोगोंको भेद न देवे ॥२५॥ और लोगोंको यह भी न कहे जो सत्कर्म करने कुछ नहीं सत्कर्मों की निन्दा न करे क्यों लोग तो सिद्ध अवस्था को प्राप्त हुए नहीं और सत्कर्मों का त्याग कर देवें, तब कर्म्म भ्रष्ट हो जावेंगे। इसी ते जो प्राणी सिद्ध अवस्था को प्राप्त भए हैं, वह पुरुष और संसारी लोगों को सत्कर्मों ते भ्रष्ट न करे, एह मेरी आज्ञा है, सिद्ध को भी सत्य कर्म्म करने चाहिये ॥२६॥ अर्जुन ! और सुन, जिन पुरुषों के भले बुरे कर्म्म होते हैं, सो एह देह इन्द्रियां और मन माया प्रकृति ते उत्पत्ति हुए हैं, माया भी एही

है,अहङ्कार और जो अहङ्कार बुद्धि कर पुरुष मूढ़ हुआ है जो मनुष्य अहङ्कार से कहता है कि एह कर्म्म मैंने किया है ॥२७॥ हे महाबाहु अर्जुन! इन गुणों और कर्मों का तत्त्व तूं मुझसे श्रवण कर,एह देह इन्द्रियां जैसे जैसे इनके स्वभाव हैं, तैसा तैसा कार्य्य इनसे होता है, और आत्मा साक्षी भूत है और कर्त्ता है, गुणों विखे वरते है इतना समझकर, हे अर्जुन! तूं न्यारा का न्यारा रहो ॥२८-२९॥ अब अर्जुन और सुन! श्लोक॥ भाव अभावी कर्म कर राखे हर प्रभु चीत। उश्न शीत व्यापै नहीं कारण करते कीत ॥१॥ आत्म है सर्वत्र में घट घट

भोगी आप । सभ में अधिकारी प्रभु तिस ही को तूं
जाप ॥२॥ मन राखहु चरणारविन्द त्यागो आशा रीत।
हो अचिंत पेखो दरस निरवासन प्रभु कीत ॥३॥ चरण
कमल मनमें वसे इच्छा धरहु न कोय । चिंता ममता
त्याग कर बुद्धि सुफल यूं होए ॥ ४ ॥ एह मार्ग तुझको
कहूं सुनियो हित चित्त लाय । प्रीत भाव कर मांहि
वसै दुख पाप सभ जाय ॥५॥ जो एह कथा माने नहीं
निन्दा दुतीया जान। ते अज्ञानी अन्ध मत बांधे किरत
कमान ॥६॥ हे अर्जुन ! तूं सर्व अपने कर्म मुझ विखे
अर्पण कर और जितने देहधारी आत्मा राम हैं तिन

का ठाकुर प्रभु जो मैं हूं, इस कारण से मेरा नाम अध्यात्म है अध्यात्म कहिये सर्व आत्माका अधिकारी ऐसा ईश्वर जो मैं हूं, सो तूं मन का निश्चल चेता मेरे मैं राख और निराश ना हो आशा किसी फलकी ना कर और चिन्ता ममताको त्यागकर युद्ध कर ॥३०॥ एहमार्ग जो मैंने तुझको कहा है, सो इस मेरे मार्ग को श्रद्धा संयुक्त मन विखे रखकर मुझको निरसंशय ही आए मिलेगा ३१ और जो प्राणी इस मेरे मार्ग को मानते नहीं और निन्दा करते हैं, सो कैसे हैं, सो सभ से अज्ञानी अंध मत मूढ़ मूर्ख हैं ॥३२॥ अब अर्जुन और सुन, जैसी

प्रकृति का जीव माया ने उत्पन्न किया है तैसा ही तिस से कर्म होता है, सभी भूत प्राणी स्वभाव के बस हैं, अपने बस नहीं, इस बात को समझकर ना किसी को भला कहिये, और बुरा भी ना कहिये, कोई भला करे कोई बुरा, सबका साखी भूत होकर संसार का कौतुक देखे, इससे सदा आत्मपद विखे लीन रहवे ॥३३॥ अब अर्जुन और सुन, एह असाधरूप जो इन्द्रियां हैं, तूं इनके भोगों की ओर मत जा, एह हर्ष शोक की दाती हैं ॥३४॥ और जैसे बाट मारनेहारे चोर होते हैं तैसे ही इस मेरे मार्ग के मारनेहारी एह इद्रियां चोर हैं, तूं इनके

भोगों की ओर मत जा ॥३५॥ श्रीकृष्ण भगवान् के वचन सुनकर अर्जुन बोलता भया। अर्जुनोवाच—हे यादवों के पति कृष्ण भगवानजी! इस बातको तो सभी मनुष्य जानते हैं, कि पाप किये ते दुख पाइये है, हे प्रभुजी पाप कर्म इन मनुष्यों से बलकर कौन करावे है, सो मुझ को कृपा कर कहोजी ॥३६॥ श्रीभगवानोवाच—हे अर्जुन! काम और क्रोध इनकी रजोगुण से उत्पत्ति है, इनका आहार भी बहुत है, एह कभी तृप्त नहीं होते और एह पापरूप हैं मनुष्योंके एह शत्रु हैं, दोनों मनुष्यों को बांधकर पाप कराते हैं॥३७॥ अर्जुनोवाच—हे भगवान

इनका वृत्तान्त मुझको विस्तार-पूर्वक कहो जो इनका जन्म किस प्रकार होता है। और जन्म कर बड़े कहां होवें हैं और इनका आत्मा कौन है इनका आचार कैसा है सब विस्तार-पूर्वक कहो। अब इसका उत्तर श्रीकृष्ण भगवान् जी कहते हैं। श्रीभगवानोवाच—हे अर्जुन! एह सूक्ष्म शत्रु हैं और देह इन्द्रियां मन इन विखे इन का निवास हैं सूक्ष्मरूप धार कर देह विखे आगये हैं एह तो इन का निवास कहा है। अब इनकी उत्पत्ति सुन, भले स्वाद खाए से उत्तम सुगन्धता के सूंघने से और भले वस्त्र पहरने से काम की उत्पत्ति होती है।

अब क्रोध की उत्पत्ति सुन, अहङ्कार अभिमान करना कि मेरे जैसा दूसरा कोई नहीं इससे क्रोध की उत्पत्ति होती है,हे अर्जुन! एह बड़े दुष्ट हैं। अब इनकी करतूत सुन। पहिले हर्ष प्रसन्नता से कामउपजिया तब अपनी स्त्री से सङ्ग किया जब वीर्य्य गिरा तब मृतककी न्याईं चिंतातुर होए कर गिर पड़ा सोए गया एह अपनी स्त्री के सङ्ग किये का फल है फिर संतान हुई तिस से अति मोह को प्राप्त होय के अज्ञान अन्धकारमें अंधा हुआ जन्म मरण का अधिकारी हुआ एह अपनी स्त्री के सङ्ग का फल है। और कदाचित परनारी साथ प्रीति

करी संग किया किसी दूसरे पुरुषने देखा तो भी ख्वारी राजाके हाथ आया तो दंड देता है धन छीन लेता है कैद करता है राज दण्ड भरना पड़ा परलोक की शासना बहुत सहारनी पड़ी जम जंदार शासना देवेगा परलोक बिगड गया बाकी कुछ ना रहा एह तो कामकी करतूत कही अब हे अर्जुन ! क्रोधके लक्षण और करतूत सुन, अहङ्कार कर मन्द कर्म्म से अन्ध भई जो देह मनुष्य की है विषयां के वास्ते या दूसरे किसी कार्य्यंके वास्ते किसी को मारिया या किसी को कष्ट दिया तब राजे ने पकड़कर खूब दंड दिया बांधिया पदार्थ छीन लिया

और परलोक में जम की शासना सहेगा एह क्रोध की करतूत कही, हे अर्जुन! काम भी और क्रोध भी दोनों भय के दाता हैं। बारम्बार मनुष्य को मोहते भ्रमावते रहिते हैं। फिर कैसे हैं दोनों पाप रूप हैं और निपट नीच हैं हे धनञ्जय अर्जुन! एह मनुष्यों के सदा ही छिद्र तकते रहिते हैं जैसे चोर अपना समय देखता रहिता है जो कब घर का धनी सो जावे कब मैं द्रव्य लेऊं इसी भांति छिद्र तकते रहते हैं और रजोगुणसे इनकी उत्पत्ति है और आत्माके मरने को सावधान हैं मनुष्यों में एही दोनों उपद्रवी हैं। जिस प्रकार मेरे ना मानने का ज्ञान

इन्हों में छाया है सो सुन, ज्यूं धूएं करके अग्नि छाई जाये है ज्यों आरसी मैल करके अछादी जाये और जैसे जाली विखे लपेटा हुआ बालक जन्मता है इसी भांत इन दोनों ने मेरा ज्ञान अछाद लिया है और नित्य ही एह ज्ञान के वैरी हैं ॥३८॥ हे कुन्तीनन्दन अर्जुन! दोनों काम और मदकर पूर रहे हैं परपूर्ण कभी नहीं होते और पापरूप हैं ॥३९॥ इंद्रियां और मन और बुद्धि इनके विखे काम का निवास है इनमें बस कर मनुष्यों को मोहित करे है ॥४०॥ तिस कारण से हे कुरुवंशियों में श्रेष्ठ अर्जुन! प्रथमे तूं इन्द्रियों को वस कर, इन्द्रियों से आदि

लेकर मन बुद्धि चित्त को वस कर, यह पाप रूप हैं, ज्ञान
और विज्ञान को नाश करने हारे इस काम पापी को
तूं मार डार ॥४१॥ अब जिस प्रकार इंद्रियां जीतियां जावें
सो सुन, एह देह जड़ है, इस विखे जो चैतन्य रूप इन्द्रियां
हैं। और इन्द्रियो से परे मन है, मन कर इंद्रियां सुरजीत
हैं मन से परे बुद्धि है, बुद्धिसे परे आत्मा है ॥४२॥ सो
बुद्धिकर तिस आत्माके ध्यान साथ जुड कर हे महाबाहू
अर्जुन ! इसका रूप बड़ा बलवान होजावे है, तिस अपने
बल कर महा दुष्ट काम क्रोध तिनको तू मार डाल, तिन
को मार कर जय को प्राप्त हो ॥४३॥ इति तृतीयोऽध्याय समाप्तः॥

* अथ तीसरे अध्याय का महात्म *

श्रीनारायणोवाच—हे लक्ष्मी! एक शूद्र महा मूर्ख अकेला ही एक बन विखे रहता था बड़े अनर्थों कर कितना ही द्रव्य इकट्ठा किया था किसी कारण कर यूंही वह पदार्थ जाता रहा पदार्थ के जानेसे वोह शूद्र बहुत चिन्तावान रहे और लोगों से पूछे कोई ऐसा कर्म बताओ जहां पृथ्वीमें द्रव्य होवे मैं निकाल लूं मुझे फिर वह पदार्थ हाथ आवे किसी को कहे कोई अंजन बताओ जिस से नेत्र पाकर पृथ्वी का पदार्थ निकाल लूं किसी ने कहा मास मदरा खाया पिया कर वोह वही

खोटा कर्म करने लगा चोरी करने लगा एक दिन धन की लालसा कर चोरी करने गया रास्ते में चोरों ने मार दिया इस मृत्यु कर मरा हुआ प्रेत की जून पाई वोह एक बट के बिरछ पर रहा करे बड़ा दुःखी हुआ हाये हाये करके रुदन करे और विरलाप करे ऐसे हाहाकार करता रहे कहे कोई ऐसा भी होवे मेरी कुल में जो इस अधम देह से कुड़ावे ऐसा हाहाकार करता रहे कुछ दिन बीते तब इतने में उस शूद्र की देह से पुत्र जनमिया जब उसका पुत्र बड़ा हुआ एक दिन अपनी माता को उसने पूछा मेरा पिता क्या व्यापार करता था और देह हत

किस प्रकार हुआ है तब उसकी माता ने कहा हे बेट
तेरे पिता पास पदार्थ बहुत था सो यूंही जाता रहा व
धन के चले जाने से बहुत चिन्तावान रहे एक दिन व
को गया कहे किसे का धन चुरा लाऊंगा मार्ग में चोर
ने मारा तब उसने कहा हे माता ! उसकी गति कराई थी
तब माताने कहा नहीं, फिर कहा हे माता ! उसकी गति
करावनी चाहिये, उसने कहा भली बात है तब पंडित
से पूछने गया जाकर प्रार्थना करी हे स्वामी ! मेरा पित
एक दिशा जाकर मृत्यु हुआ है इसका उपाय कृपा कर
कहिये, जो उसका उद्धार होए। तब पंडित ने कहा त

गयाजी जाकर उसकी गया करा, तब पितरोंका उद्धार होगा। तब उसने आज्ञा मानकर माता की आज्ञा ले कर गयाको गमन किया। प्रयागराज का दर्शन स्नान करके फिर आगेको चला, रास्तेमें एक वृक्षके तले बैठा वहांसे उसको बड़ा भय प्राप्त हुआ। वह वृक्ष वोही था, जहां उसका पिता प्रेतकी जूनमें प्राप्त हुआ था, उसी जगहमें चोरोंने उसको मारा था। तब उस बालकने अपना गुरु मंत्र पढ़ा और एक उसका और भी नेम था जो वह एक अध्याय श्रीगीताजी का भी नित्य पाठ किया करता था, उस दिन उसने श्रीगीताजीके तीसरे

अध्याय का पाठ किया, उस वृक्षके तले बैठकर उसके पिता ने प्रेत की जून में सुना, सुन के उसकी प्रेत देह छूट गई देव देही पाई स्वर्ग ते विमान आए वह विमान पर चढ़कर उसके सामने आया, आयकर आशीर्वाद दिया और कहा, हे पुत्र! मैं तेरा पिता हूं जो मरकर प्रेत हुआ था, इस तेरे पाठ श्रवण करनेसे मेरी एह देवदेही हुई, अब मेरा उद्धार हुआ है तेरी कृपासे स्वर्गको चलिया हा, अब तूं गयाजीमें अपनी खुशी जाह मेरा उद्धार हो गया है। वहां जायके भी तुमने मेरा उद्धार करना था जो तैंने यहां पाठ मुझको सुनाया है इसीसे मेरी कल्याण

हुई है। इतना सुनकर पुत्रने कहा, हे पिताजी! कुछ और आज्ञा करो, जो मैं आपकी सेवा करूं, तब उस देवदेही ने कहा, हे पुत्र! देख मेरे सात पीढियां पितर नरकमें पडे हैं, बडे दुःखी हैं। अब तूं श्रीगीताजी के तीसरे अध्याय का पाठ करके उनको फल दे, ओह इस दुःख से मुक्ति पावें, वह सब बड़े नरकों से निकल कर स्वर्गमें पहुंचेंगे, इतना बचन कहकर वह देवदेही स्वर्ग को गया तब उस बालकने वहां ही तीसरे अध्यायका पाठ किया, सब पितरोंको पुण्य देकर बैकुठगामी किया, तब राजा धर्म्मराजजी के पास यमदूतों ने जाकर कहा, हे राजा

जी ! नरक में तो बहुत से लोक हैं नहीं, नरक में तो
उजाड़ पड़ी है, जो कई जन्मों के पापकर्मी थे, तिन
को विमानों पर बैठाय कर श्रीठाकुरजी के पारखद ले
गए हैं । तब इतना सुनते ही धर्म्मराज उठ कर श्री
नारायणजी पास गया, जहां पाताल में शेषनाग की
शैय्या बनाय के श्रीनारायणजी सोये हुए थे, और
श्रीलक्ष्मीजी चरण झस रही थी, वहां जाय धर्मराजने
दण्डवत करी और हाथ जोड़कर कहा, हे त्रिलोकीनाथ
श्रीमहाराजजी ! जो जीव जन्म-जन्मान्तरों के पापी थे,
तिनको तुम्हारे पारखद विमानों पर चढ़ाय के बैकुंठ

को लेगए हैं तब नरकोंका भुगावना एह दंड किसको देवें और किस प्रकार दंड दिया करें, तब श्रीनारायण जी ने बहुत प्रसन्न होकर कहा, हे धर्म्मराज़! तूं दुःखी मत हो, तूं अपने मनमें कुछ बुरा न मान, मैं तेरे पास एह वृत्तान्त कहता हूं, श्रवण कर, एह जो जीव पापी थे, इनका पिछला धम्म कोई उदय हुआ है, उस अपने धर्म्म कर कई महापापी जीव बैकुंठ को गए हैं, और एह आज्ञा मैं तुझे देता हूं, जो जीव श्रीगीताजी का पाठ करे, अथवा श्रवण करे या कोई किसी को पाठ किये का फल दान करे, तिन जीवों को तूने कभी

नरक नहीं देना। एह तुझको मेरी आज्ञा है, एह बात सत्य कर निश्चय से सुन याद रख, इतना सुनकर धर्मराज अपनी पुरीको पधारा, आयकर अपने दूतों को बुलाकर कहा हे यमदूतो! जो प्राणी श्रीगीताजी का पाठ करे अथवा श्रवण करे या पाठ किये का किसी को पुण्य देवे, तिस प्राणीको तुम कभी नरक में नहीं पावना, गीताजी के पाठ करने से श्रवण किये से पापी जीव भी बैकुण्ठको प्राप्त होवेंगे, जो जीव श्रीगीताजी का पाठ करे या श्रवण करे, तिसका फल कहा तक कहें कहनेमें नहीं असक्का। तब श्रीनारायणजी ने कहा,

हे लक्ष्मी ! यह तीसरे अध्याय का फल मैं तेरे ताईं कहा है सो तैंने सुनिया है ।

इति श्री पद्मपुराणे सतीईश्वसंवादे उत्तराखण्डे गीतामहात्म्यनामतृतीयोध्यायः ॥ ३ ॥

* अथ चतुर्थ अध्याय *

कर्म संन्यास योग ।

श्रीभगवानुवाच-श्रीकृष्ण भगवान्‌जी अर्जुन को कहे हैं, हे अर्जुन ! एह जो तुझे ज्ञान उपदेश किया है, सो पहिले मैंने सूर्य्य को कहा था, सो यह योग अविनाशी है, सूर्य्य ने अपने पुत्र मनु को कहा था, मनु ने इक्ष्वाकु को कहा था ॥१॥ एही ज्ञान-योग परम्परा पुरातन

आया है, इसको राजऋर्षि जानते हैं इसको समझ कर राज करके ही परमपद को प्राप्ति होते हैं ॥२॥ दृष्टान्त- आवत हर्ष न उपजता जावत शोक न होए। ऐसी रहिनी जो रहे गृह बिन योगी सोए। हे परन्तप अर्जुन! इस योग को बहुत चिरकाल व्यतीत हो गया है अब पुरातन होगया संसार से नष्ट होगया मिट गया है अब सोई पुरातन योग तेरे प्रति कहता हूं इस करके तेरे प्रति कहता हूं जो तूं मेरा भक्त है और मेरा सखा है इस वास्ते एह गोप वारता तुभ्क को कहता हूं सो चित्त एकाग्र कर सुन आई वस्तु का हर्ष न कर चली जावे

तब उसका शोक न कर एक ही जैसा जान हर्ष शोक
से असङ्ग रहे चित्त को स्थिर राख ॥३॥ अर्जुनोवाच—
अर्जुन श्रीकृष्ण भगवानजी के एह बचन सुनकर प्रश्न
करता है हे महाप्रभुजी ! तुम्हारा जन्म तो अब वासुदेव
के घर हुआ है और सूर्य्य पुरातन है आगे का प्रगट
हुआ २ है तुम ने कब सूर्य्य को एह ज्ञान कथन कराया
था सो कृपा कर मुझको समझावो जी ॥४॥ अर्जुन के
प्रश्न का उत्तर श्रीकृष्ण भगवानजी कहते हैं । श्री
भगवानोवाच-हे अर्जुन ! तेरे और मेरे बहुत जन्म व्य-
तीत हुए हैं सो मैं उन सब जन्मों को जानता हूं तूं नहीं

जानता ॥५॥ सो मैं कैसा हूं जन्म मरण से रहित हूं
अविनाशी हूं आत्मा हूं समस्त भूत प्राणियों का ईश्वर हूं
प्रभु हूं मैं ऐसा हूं और अपनी माया के ओहले होकर जन्म
भी लेता हूं ॥६॥ माया का ओहला क्या कहिये ज्यों
कोई राजा अपना राज लिबास उतार कर और भेख कर
लेने से लोग उसको पछान न सकें इसी भांत मैं देह
धारकर संसार में आवता हूं हे अर्जुन ! मैं देहधारी नहीं
देह से परे हूं मेरी देह शिवरूप है जैसे मिशरी की झारी
होय तिस विखे मिशरी का शर्बत भी घोलिया हुआ
होय तैसे मेरी देह और आत्मा एक ही स्वरूप हैं हे

अर्जुन ! मैं जन्म कब लेता हूं और किस निमित्त लेता हूं सो सुन, जब धर्म विखे ग्लानी उपजे है अधर्म उठकर धर्म के मार्ग को अच्छाद लेवे है तब मैं प्रकट होता हूं ॥७॥ साधों की रत्ता निमित्त और दुकृति जो पापी जीव हैं तिनको नाश करने के निमित्त आत्म प्रमात्म को बंधावने निमित्त मैं युग २ विखे अवतार धारण करता हूं ॥८॥ अब जो मेरे जन्म और कर्म दिव्य जो हैं तिन को जान सो दिव्य क्या कहिये जैसे और देहधारी रक्तबिंद से उपजे हैं तैसे मेरी देह नहीं जैसे और जीव कर्मों के बन्धन साथ बन्धे देह लेते हैं जैसा जीव ने कर्म किया है तैसे

ही देह पावे है अर्जुन मैं ऐसे नहीं जन्म लेता मेरा जन्म स्वच्छ है अपनी इच्छा से प्रगट होता हूं जन्म तो मेरे ऐसे दिव्य ज्योति स्वरूप हैं और मेरे कर्म भी ऐसे दिव्य हैं जो मैं करता हूं। सो और किसी से करे नहीं जाते। जो मन की चित्तवना कर भी न किए जायें तिसका दृष्टान्त दिखावे हैं जैसे प्रहलाद भक्त की रक्षा हेतु नृसिंह रूप होकर थम्भ से निकल कर प्रगट होता भया तो कहो किसी ने जाना भी नहीं हरनाकस की छाती बज्जर से भी कठोर सो नखों से विदीर्ण कर फाड़ डाली कोमल घास की न्याईं और गोकुल के भक्तों

की रक्षा नमित्त सात दिन गोवर्द्धन पर्बत एक हाथ की
छोटी उंगुली पर धारन किया और जो मैंने अनेक
कर्म्म किए हैं सो दिव्य ही किए हैं जैसे कोई मनुष्य
मेरे जन्म और कर्म्म जो हैं दिव्य तिनको जाने सो क्या
फल पावे सो भी सुन, हे अर्जुन ! सो मनुष्य देह को
त्याग कर मेरे परमानन्द अविनाशी पदविखे जाए प्राप्त
होता है। फिर जन्म मरण के बंधन में नहीं आवे है ॥९॥
अब अर्जुन, जिसको मेरे चरणारबिंद की भक्ति उपजी
है तिसकी बात सुन, जिस के बहुत जन्म बैरागी होय
कर बीतें और कई जन्म बीते राग बैरागी होयकर निर-

मय होयकर क्रोध से रहित होयकर और मन का चेता मेरे विखे राखकर बहुत जन्म इस भात जो मेरी उपासना करता रहा होय इन साधनों कर जिन का मन पवित्र हुआ हो तिन को मेरी प्रेम भक्ति उपजती है, जिसको प्रेम लक्षणा भक्ति उपजी है, हे अर्जुन! तिसके रोम रोम विखे मैं आए निवास करता हूं ॥१०॥ अब अर्जुन और सुन, जिस प्रकार कोई मेरा भजन स्मरण करे उसी प्रकार मैं तिस का स्मरण भजन करता हूं और मनुष्य सर्व ही जिस २ प्रकार से मैंने लगाय हैं तैसे ही ओह लग रहे हैं, अब और सुन, मैं अपने भक्तों साथ कैसा हूं, जिस

प्रकार मेरे भक्त मुझ साथ हैं ॥११॥ और जो तूं कहे जो
सभी मनुष्य तुम्हारा ही भजन क्यों नहीं करते, और
देवता की उपासना क्यों करते हैं, तिनकी बात सुन, देवतों
की उपासना करके मनुष्य फल मांगते हैं, जो मुझे पुत्र
मिले धन मिले सो देवता तिनकी कामना पूरी करते हैं
सो देवता थोड़े यत्न किए ते प्रसन्न होते हैं इस निमित्त
देवतों की उपासना करते हैं और मेरे में तिस पुरुष की
श्रद्धा लागे है जिसके नेत्र ज्ञानरूपी अञ्जन कर उघडेहुए हैं
जिसको सब कुछ देह प्रपंच झूठा ही दृष्टि आवे है और
मेरे को ही सर्वव्यापक सत्यरूप जानता है तिसकी श्रद्धा

मेरी उपासना विखे लगी है ॥१२॥ अब अर्जुन ! यहजो चारों वर्ण ब्राह्मण छत्री वैश्य शूद्र हैं सो यह मैं ही उपजाए हैं और इनके भिन्न २ आपो अपने कर्म्म मैं ही कहे हैं इन चारों वर्णों से इनके कर्म्मों का कर्त्ता अकर्त्ता अविनाशी और अजन्मा तूं मुझको जान ॥१३॥ और जो कोई कर्म करता है सो तिसको तिस कर्म किएका सर्वथा कर लेप लगता है और मुझको किसी कर्म किएका लेप नहीं लगता सो इस वास्ते नहीं लगता जो मुझको वाछा नहीं किसी बात की अवांछी हूं जैसे बालक माटी के खिलौने बनाता है फिर तोड डालता है और

बालक को कुछ लेप नहीं लगता, और हर्ष शोक कुछ नहीं करता तैसे ही मुझको किसी कर्म का लेप नहीं लगता, और जो प्राणी इसी भांत कर मुझको ऐसा कर जाने जो श्रीकृष्ण भगवान् जी की किसी कर्म कियेका लेप नहीं सो मन कर सब कर्मोंसे अलेप रहेगा ॥१४॥ अब हे अर्जुन ऐसा मुझको पहिचान कर, तेरा जो युद्ध कर्म है सो तूं कर, अवांछी हो, अपना कर्म करने से तुझ को भी किसी कर्मका लेप ना लगेगा निर्लेप रहेगा और और जो तुझसे आगे हो गयेहैं जिनको मुक्ति की बांछा थी सो भी मेरी आज्ञा मानकर कर्म करते भए ॥१५॥

श्लोक—सत्त कर्मों की भावना करते सदा सदीव । कर्म पंथ निहकर्म होए मुक्ति प्राप्त थीव ॥१॥ एही बात तुझको कहूं युद्ध तुम्हारा धर्म । पंडित भेद न पावहीं क्या अकर्म क्या कर्म ॥२॥ सुर ते सुरत ना कर सकें लोगों कहा पछान । सोई कर्म तुझको कहूं मान लेहु परवान ॥३॥ जिन जाने तै दुख हरे बंधन होवे खलास । गुह्य कथा तुझ को कहूं तुम सुनहु ब्रह्म के दास ॥४॥ हे अर्जुन ! एक तो कर्म है, एक विकर्म है, एक अकर्म है, तिनकी बात सुन । जिस भांति शास्त्रकी आज्ञा है, इस भांत अश्नान से आदि लेकर कर्म करनेसे कर्म कहाते हैं और जो भूल भूल के

करने हैं सो विकर्म कहाते हैं और जो आलस से अथवा अज्ञानसे अश्नान से आदि मब कर्मों का त्यागकर देना है, सो अकर्म कहाते हैं ॥१६॥ जो पुरुष इन तीन ही कर्मों को समझ कर ज्यों शास्त्र की आज्ञा है त्यों करे सो बुद्धिमान् पुरुष श्रेष्ठ सतकर्मी कहावे हैं, एह तो कर्म करने की बात कही ॥१७॥ अब और सुन, जो कोई मनुष्य ऐसा है, कैसा ? कि जिसको मेरी महिमा के जानने का ज्ञान उपार्जिया है तिस ज्ञान कर तिसका किसी कर्म का आरंभ नहीं उपजता काम क्रोद्धसे रहित हुआ है, ज्ञान अग्नि कर जिसकेसब कर्म सड़ गये हैं ऐसा जो होवे तिस

को विवेकी पुरुष पंडित कहते हैं ॥१८॥ फिर कैसा है वोह ज्ञानी पंडित जिसने सभ ही कर्म त्यागे हैं, और कर्मों के फल भी त्यागे है, सो पुरुष ज्ञान रूपी अमृत को पान कर तृप्त होय रहिया है, ऐसा जो प्राणी होवे, उस पुरुषको किसी कम किये का लेप नहीं, निरलेप है। किसी कर्म का बन्धन नहीं निरबन्धन है ॥१९॥ फिर कैसा है, जो एक परमेश्वर बिना किसी की आशा नहीं करता, निराशी है, संसार कीयां वासनां जिस रोक रखीयां हैं, अविनाशी, चित्त जिसका, जीतया है आत्मा जिसने ॥२०॥ और किसी वस्तु का संचना नहीं जिसके सदा

ही एकान्त और अकलङ्करूप है, शरीर-मात्र जिसका रहा है शरीर की रक्षा के निमित्त जो कुछ करे है सो तिस को तिन कर्म्मोंका कुछ पाप नहीं॥२१॥ फिर कैसा है,जो ईश्वर इच्छासे भोजन छादन आए प्राप्त होवे, तिस कर सन्तुष्ट रहे, शीत उष्ण हर्ष से रहित और किसी की जिसको बखीली नहीं, और भली बुरी वस्तु पानेसे एक जैसा है ऐसा जो है निरबन्धन कहावे है॥२२॥ फिर कैसा है, दूसरेका जिसको सङ्ग नहीं ऐसा जो प्राणी है, सो मुक्ति रूप है और मेरी महिमा केज्ञान विखे सदा निश्चल है चित्त जिसका, जितने कर्म हैं उतने सभी ज्ञान

के समुद्र विखे डूब गये हैं ॥२३॥ फिर कैसा है, जिसको सर्वत्र ब्रह्म ही दृष्टि आया है जहां कहां लेन देन खान पान पहिरना जो कुछ देखना सुनना उपजना विनसना इत्यादिक ब्रह्म ही दृष्टि आया है जिसको, सो प्राणी ब्रह्मरूप है, वोह पुरुष ब्रह्म से उपजकर ब्रह्म विखे लीन हुआ है, ऐसी समाधि जिसको प्राप्त हुई है, सो प्राणी ब्रह्म ही कहावे है ।२४। अब अर्जुन! बहुत प्रकारके योग सुन, जिस २ योग के मार्ग मुझको मेरे भगत पूजते हैं सो सुन, एक सारयोग ब्रह्मज्ञान योग कर मुझको पूजते है जो पीछे कहा है, सर्व रूप ब्रह्म इस भांत ।२५। और

एक प्राणी सब इन्द्रिया जो नेत्र करण आदि हैं, इन सबको मेरे स्मरण के निमित्त संयम करते हैं एक तो यह योग है और एक मौन कर रहते हैं एक यह योग है।२६। और एक सर्व इन्द्रियों को रोक कर प्राण दसवें द्वारमें रोकते हैं एक यह योग है और एक प्राणी सन्तों साधों देहधारियों की सेवा अन्न वस्त्र कर शीत उष्णका निवारण जलअग्नि कर सेवा करतेहैं सो यह द्रव्ययोग है और एक तपयोग है सोतपका प्रकार सतारवें अध्याय विखे कहूंगा और एक यज्ञयोग है, जो मुझ साथ जुड़ रहना और मेरी महिमा करना एक

यह भी योग है, क्या महिमा? वेदके पढने शास्त्र पढने बिष्णुपदे गावने मेरे नामका कीर्तन, राम कृष्ण गोविन्द हरी नारायण परमानन्द अच्युत अविनाशी करुणाकर इत्यादिक नाम जपने वाले जो हैं सो नरकसे बच जाते हैं यह भी योग है। २७। हे अर्जुन! श्रद्धा ही यज्ञ कहावे है सब मनुष्य मेरी महिमा अपने मन में ही एकान्त वासी होकर करते हैं तिनको भी किसी कर्म का लेप नहीं, हे अर्जुन! यह मुझको समझ कर तेरा कर्म युद्ध करना है सो कर क्यों तूं क्षत्री है सो तू अवांछी होकर युद्ध कर यह तेरा कर्म है तुझ को भी किसी कर्म का दोष नहीं लगेगा। श्लोक–

जिस जाने ते दुख मिटे होवे बन्द खलास । गुह्य कथा तुझ को कहूं सुनहु ब्रह्म के दास ॥ १ ॥ अब अर्जुन और सुन, जिस के जाने मूर्ख जीव पण्डित होते हैं और बड़े बडे पण्डित भी जानते नहीं और की क्या कथा, सो कर्म्म मैं तेरे ताईं कहिता हूं, जिस के जाने से दुःखदायक जो संसार बंधन है तिस से मुक्ति होवेंगा, हे अर्जुन ! जो विचार कर अस्तुति करना इसका नाम ज्ञान यज्ञ है एक यह यज्ञ है और एक पान अपान वायु को इकट्ठा कर प्राणायाम करते हैं एक यह यज्ञ है ॥२८॥ और एक क्रम २ से एक २ ग्रास घटावते हैं यह इतने

प्रकार के सभी यज्ञ कहे हैं यह सब पापों को नाश करते
है इन सब यज्ञों में से जिस यज्ञ कर पूजे तिसी कर मुझको
प्राप्ति होवेंगे तिनका जीवना अमृत के समान है ॥२९॥
मेरी कृपा कर और जो कुछ वह भोजन करता है तिसको
वह भी अमृत रूप है और देह को त्यागकर जो सनातन
परे ते परे है तिससे परे और कुछ नहीं सो ऐसे मेरे सनातन
ब्रह्म को पावेंगा ॥३०॥ हे कुरुबंसियों में श्रेष्ठ अर्जुन ! मेरे
पूजे बिना इस लोक विखे भी सुख नहीं परलोक की बात
तो क्या कहिये ॥३१॥ हे अर्जुन ! एह बहुत प्रकार के यज्ञ
मैंने पहिले जो कहे हैं इनके जानने से अर्जुन मुक्ति पावेंगा

अब इन यज्ञों विखे श्रेष्ठ यज्ञ जो हैं सो सुन ॥३२॥ हे परं-
तप पाडव ! एह दर्व यज्ञ से आदि लेकर सभी यज्ञ मैंने
कहे हैं तिन समस्त यज्ञों से श्रेष्ठ मेरी महिमा जानने
को जो यज्ञ है सो श्रेष्ठ है और जितने और यज्ञ कहे हैं
सो ज्ञान पावने के निमित्त कहे हैं और जब ज्ञान उपजे
तब सभी यज्ञ उदय हो जाते हैं जैसे फल लगे से फूल
गिर जाते हैं तैसे ही मिट जाते हैं। अब जिस को मेरी
महिमा का ज्ञान मेरी कृपा से होवे है तिस से और
कोई ज्ञान पाया चाहे सो क्या विध करे सो सुन ॥३३॥
प्रथम तो सत गुरु जो हैं तिस की शरण आय कर

दोनों हाथ जोड़ परम नम्रता से तिस के चरण कमलों को नमस्कार मुख से मेरा नाम लेवे श्रीराम कृष्ण जी की जय श्री गोपाल जी ॐ नमो नारायण जी राधाकृष्णजी की जय परमेश्वर की न्याईं जान कर अधीन होवे तिस आगे विनती करे हे प्रभु जी हे गुरुदेव जी कृपा करो जी श्री भगवान जानने का ज्ञान मुझे दान करो जी तब ज्ञान के देने हारा जो है ज्ञानी तिसको ज्ञान श्रवण करावे ॥३४॥ और ज्ञान किस तरह श्रवण करावे सो सुन, हे पांडव अर्जुन ! जिस ज्ञान के जानने से फिर माया मोह व्याप नहीं सक्का सो ज्ञान जिस

के जाने से सब भूत प्राणियों विखे एक ही आत्मा ब्रह्म व्यापिया जानेगा दूसरा भेद मिट जाएगा सो ज्ञान है ।३५। अब इस ज्ञान का फलसुन, जितने पाप जान अजान किये हैं तिन पापों का फल जो है दुःख सो तिन दुःखों से ज्ञान नाव पर चढ़ कर पार पड़ेगा ॥३६॥ जिस प्रकार लकड़ियों के अंबारों को अग्नि जलाए के भस्म करे है तैसे ही ज्ञान अग्नि मोह को जलाए के भस्म करती है ॥३७॥ ज्ञान के समान दूसरा पवित्र कुछ नहीं ॥

श्लोक—ईंधन ज्ञान सकेलीये पावक रंचक लाय । ज्ञान बसंत्र प्रगट होय कर्म पाप जल जाय ॥१॥ हे अर्जुन !

ज्ञान महा पवित्र है ज्ञान के समान कुछ नहीं लगता सो ज्ञान कब उपजता है, मेरे योग साथ जुडने के प्रसाद कर चिरकाल तक जो मेरे ध्यान साथ जुडे रहे तब तिसको आत्मा से ही ज्ञान उपज आवे है ॥३८॥ जिस को मेरे ज्ञान पावने की श्रद्धा हो सो सावधान हो कर पढे सुने समझे इन्द्रियों को वस करे सो पुरुष ज्ञान को पावे, ज्ञान पाय से परम शांत जो परम सुख है तिस को तत्काल ही प्राप्त होवे है ॥ ३९ ॥ और जो ज्ञानी पुरुष नहीं है तिनको मेरे ज्ञान पावने की वांछा नहीं तिन के आत्मा विखे संशय है उन पुरुषों

का आत्मा नाश को प्राप्ति होता है, न तिन को इस लोक में सुख न परलोक में ॥४०॥ और जो मेरे योग साथ जुड़े हैं तिनसे कोई कर्म नहीं उठता और न तिन को कोई संशय ही व्याप सकता है, ऐसा जो है योगी ज्ञानी तिस को कोई चलाये हलाये नहीं सकता ॥४१॥ तिस कारण ते हे अर्जुन ! तुझको तेरे हृदय ही से अज्ञान का कारण संशय संदेह उपजता है सो तूं हृदय ही से ज्ञान नामा खड़्ग लेकर इस संशय संदेह को काट डार और उठ खड़ा हो युद्ध कर ॥४२॥

इति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषद० श्रीकृष्ण अर्जुन सम्वादे कर्मसंन्यासयोगो नाम चतुर्थो अध्याय

* अथ चौथे अध्याय का महातम *

श्रीनारायणोवाच–हे लक्ष्मी ! जो पुरुष श्रीगीताजी का पाठ करते हैं तिन के साथ छूए से अधम देह से छूट कर विवेक को प्राप्त होवे है तब लक्ष्मी जी पूछे हे श्री महाराजजी ! श्रीगीताजी के पाठ करने वाले साथ छूकर कोई जीव मुक्ति भी हुए हैं ? श्रीभगवान जी ने कहा हे लक्ष्मी ! तुमको एक कथा मुक्त हुए की पुरातन सुनावता हूं तूं श्रवण कर भागीरथ गङ्गा जी के किनारे पर श्री काशी जी नगर है वहां एक वैष्णव रहता था नित्य श्रीगंगा जी में अश्नान कर श्रीगीताजी के चौथे अध्याय

का पाठ किया करता था और उस साधूके पास तपस्या
हीं धन था माया का जंजाल कुछ नहीं था एक दिन
वहां बड़ी छाया थी वह साधू वहां बैठ गया और बैठते
ही उसको नींद आगई एक बेरी से उसके पांव लगे और
दूसरी के साथ सिर लग गया वह दोनों बेरियां आपस
में कांप कर पृथ्वी पर गिर पड़ी पत्ते सूक गये परमे-
श्वरके करने से वह दोनों बेरियां ब्राह्मण के घर जाय
पुत्रियां हुई, हे लक्ष्मी ! बड़े उग्रपुण्योंकर मनुष्यदेह मिलती
है फिर ब्राह्मणके घर जन्म उन दोनों लड़कियोंने तपस्या
आरम्भ की जब वोह दोनों बडी हुई तब उनके माता

पिता ने कहा हे लडकियो ! हम तुम्हारा विवाह करते हैं तब उन दोनों ने माता पिता से कहा हम विवाह नहीं करातीं उनको अपने पिछले जन्म की खबर थी वोह जाती सुन्दर जन्मीं थीं उन्हों ने कहा एक हमारे मन में कामना है जो परमेश्वर वोह पूर्ण करे तब बहुत भली बात है उनके मन में यही था कि वोह साधु जिसके स्पर्श करने से हमारी अधम देह छूट कर यह देह मिली है वोह मिले तब बहुत भला है इतना विचार कर उन दोनों लड़कियों ने माता पिता से तीर्थ यात्रा करने की आज्ञा मांगी तब माता पिता ने तीर्थ यात्रा

की आज्ञा दी कि करो, तुम को श्री परमेश्वर जी की आज्ञा है तब उन दोनों कन्याओं ने माता पिता के चर्ण बन्दना करके गमन किया तीर्थ यात्रा करतीं करतीं बनारस में पहुंची वहां जाकर देखा वह तपस्वी बैठा है जिसकी कृपा से हम बेरियों की देह से छूटी हैं तब उन दोनों कन्याओं ने जाय दंडवत करी चरण बन्दनाकर के बेनती करी हे सन्त जी! तुम धन्य हो, हमको कृतार्थ किया है जी, तब उस तपस्वी ने कहा तुम कौन हो? मैं तुम को पहिचानता नहीं, तब कन्याओं ने कहा हम आपको पहिचानती हैं हम पिछले जन्म बेरियां की

जून में थीं तुम एक दिन बन में आए तुम को बहुत धूप लगी थी तब बेरियों की छाया तले आए बैठे लम्बासन होने से एक बेरी को आपके चरण लगे दूसरी को सिर लगा उसी समय हम बेरी की देह से मुक्त हुई थी अब ब्राह्मण के घर जन्म लिया है हम ब्राह्मणी हैं बडी सुखी हैं तुम्हारी कृपा से हमारी गती हुई है तब तपस्वी ने कहा मुझे उस बात की खबर नहीं थी अब तुम कुछ आज्ञा करो तुम्हारी सेवा करूं तुम ब्रह्मरूप उत्तम जन्म श्रीनारायण जी का मुख हो तब उन कन्याओं ने कहा हम को श्रीगीताजी के चौथे अध्याय

का फलदान करो जिसको पायकर हम देव देही पाकर सुखी होवें तब तपस्वी ने चौथे अध्याय के पाठ का फल दिया, देते ही उनको कहा के तुम आवागमन से छुट जावो, इतना कहते ही आकाश विमान आए उन दोनों ने देव देही पाकर वैकुण्ठ को गमन किया फिर तपस्वी ने कहा मैं नहीं जानियां था जो श्रीगीता जी के चौथे अध्याय का ऐसा महात्म है, तब वोह मन वच कर्म कर नित्य प्रति पाठ करने लगा श्रीनारायण जी ने कहा हे लक्ष्मी ! एह चौथे अध्याय का महात्म है जो तुम ने सुनया है । इति चतुर्थो अध्याय महात्म समाप्त ॥

* अथ पांचवा अध्याय *

संन्यास योग ।

अर्जुनोवाच–अर्जुन श्रीकृष्ण भगवान जी पै प्रश्न करे है हे श्रीकृष्ण भगवान जी! कर्म्मों का त्याग संन्यास कहो जी और कर्म योग भी कहो जी यह भी निश्चय कर कहो जो जिस ते मेरा कल्याण होवे जी ॥१॥ अर्जुन के प्रश्न का उत्तर श्रीकृष्ण भगवान जी कहे हैं । श्री भगवानोवाच–हे अर्जुन! संन्यास योग, कर्म योग, एह दोनों ही कल्याण के दाता हैं। इसमें कर्म जो त्यागते हैं संन्यास, तिससे कर्म करने कर्म योग भला है ॥२॥ और

जो प्राणी ऐसी ज्ञान की बात को समझने हारा है सोई संन्यासी है, सो कैसा है, जो सर्वबातों के हर्ष शोकसे रहित है, हे महाबाहु अर्जुन ! ऐसा जो निरद्वन्द है सो सुखैन ही संसार के बन्धनों से मुक्ति होता है ॥३॥ अब अर्जुन और सुन, सांक्ष और योग को भिन्न भिन्न बालक अज्ञानी कहते हैं, पण्डित नहीं कहते। योग कहिये मेरे सिमर्ण साथ जुड़ रहना और सांक्ष कहिये मेरा ज्ञान गोष्ट कथा वार्त्ता करनी सो यह दोनों एक ही हैं और इन दोनों का फल भी एक ही है ॥४॥ जिस मेरे परम अस्थानों को सांक्ष वाला पावे है, तिसी अस्थान को योगी जाय प्राप्त

होता है, जिन सांक्ष और योग एक ही कर जानिया है, तिन ही यथार्थ ज्यूं का त्यूं जानिआ है ॥५॥ हे अर्जुन ! संन्यास जो है संसार के कर्म सभी त्यागिये देह कर और मन कर भी त्यागिये इस का नाम संन्यास कहिये है हे महां बाहू अर्जुन यह संन्यास पावना ब्रह्म योग साथ जुड़े बिना कठिन है, जब स्मरण साथ जुड़ता है, तब सुखैन ही संसार के सुखों की बात भूल जाता है, सो इसी का नाम संन्यास कहिये है जो स्मरण योग साथ जुडे, ऐसा जो मुनीश्वर है, सो तत्काल ही पारब्रह्म को जाय प्राप्त होता है ॥६॥ ऐसा जो प्राणी योग साथ जुडया और

निष्काम निर्मल है आत्मा जिसका संसार की वासना से निवारिया है आत्मा को जिस ने और समस्त इन्द्रियां जिसने पकड राखी हैं। और सब भूत प्राणियों विखे एक ही आत्मा ब्रह्म दृष्टि आया है ऐसा जो प्राणी है सो कर्म कर्त्ता भी अकर्त्ता है निर्लेप है ॥७॥ वह क्या समझता है कि जो आत्मा है सो कुछ नहीं करता नेत्र देखते हैं श्रवण सुनते हैं स्पर्श देह का धर्म है नासिका सूंघती है स्वाद जिह्वा लेती है पवन आवे जावे है हाथ पकडते हैं छोडते हैं चरण चलते हैं निमख नेत्रों के लगते हैं सोवती जागती देह है ॥८॥ जो इस प्रकार समझे

जो यह सब इन्द्रिया अपने अपने विषयों में वरतती हैं
और मैं जो आत्माराम हूं इन इन्द्रियों के परे हूं इस
भात आत्मा को समझे है ॥९॥ और इन्द्रियों कर कर्म
करे सो तिस पुरुष को किसी कर्म किये का दोष नहीं,
जैसे जल विखे कमल निर्लेप न्यारा है, तैसे ही वह
पुरुष न्यारा है ॥१०॥ हे अर्जुन ! जो कोई योगीश्वर पुरुष
हैं सो देह कर इन्द्रियों कर सत्य कर्म जो स्नान से आदि
हैं सो करते हैं और फल कुछ वांछते नहीं तिसका फल
निश्चल शाति को पावे हैं ॥११॥ और जो कामना के
निमित्त कर्म करते हैं, ते बन्धन को प्राप्त होते हैं ॥१२॥

अब अर्जुन सदासुखी कौन है ? तिन की बात सुन, जो प्राणी आत्मा साथ जुडिया है और किसी इन्द्रियों का उद्यम नहीं उठाता सो सदा सुखी है ॥१३॥ अब अर्जुन मेरी बात सुन, जो मैं कैसा हूं, मैं संसार को उपजाता हूं और प्रतिपालना सो मैं नहीं करता, मेरी मायाका यह स्वभाव है यह संसार माया का खेल है ॥१४॥ और मुझको इस संसार से कुछ प्रयोजन नहीं नां किसी से पाप कराता हूं ना पुराय कराता हूं अज्ञान कर जीवों का ज्ञान ढकिया गया है तिस अज्ञान कर जीव मोहित हुए हैं, ते पाप करते हैं ॥१५॥ और जो मुझ ईश्वर को

न्यारा निर्लेप समझते हैं तिनके कभी अज्ञान नहीं उपजे है जैसे सूर्य्य को अन्धकार नहीं तैसे ज्ञानी निर्लेप है॥१६॥ सो कैसा है, श्लोक—तत बुद्धि वस आतमा निश्चल निज घर सोय। सब किलबिख उतरें ज्ञान कर बौहड जन्म नां होय ॥१॥ अति अडोल कर चेतनां सब जाने प्रभु सोय। सब में वर्ते सो प्रभु सब से न्यारा होय॥२॥ ध्यान रूप गुरु ज्ञान कर अवर न पेखहु कोय। मनुआ निश्चल बुद्धि थिर आपे आप सुहोय ॥३॥ स्वास स्वास सिमृत रहो आतम राम सुचीत। शर्णं एक की पकड कर हो दृढ़ चित्त सुनीत ॥४॥ तन धन तुमरा मन

तूंही मोह नहीं सब तोय। ऐसा निश्चल दृढ करे विघ्न
ना लागे कोय ॥८॥ फिर कैसा न्यारा निर्लेप मुझ
को जान के मेरे विखे ही परम प्रीति रहे, मेरी ही
शरण हो और स्वास स्वास मेरा भजन सिमर्ण कर ऐसा
मुझको जानकर जो मेरा भजन करता है हे अर्जुन! जो
ऐसा बुद्धिमान् सो मेरे परमानन्द अविनाशी पद विखे
जाय प्राप्त होता है वहां गये गिरता नहीं ते पूर्ण ज्ञानी
है॥१७॥ऐसा जो होय ब्राह्मण, कैसा? जन्म से ऊंच ब्राह्मण
के घर का और विद्या कर पूर्ण होय तिस ब्राह्मण को
जन्म का गर्भ भी नहीं होय सब साथ नम्रता रखे ऐसा

साधु ब्राह्मण और गो हाथी स्वान जो है कुत्ता और चंडाल ऊंच नीच तिस को सभ एक ही समान हो ऐसा समदृष्टि पण्डित कहिए है॥१८॥ फिर कैसा है इस प्रकार जिसको समता दृष्टि आई है सो जन्म मरन के बन्धन से मुक्ति हुआ है और आत्म ब्रह्म जो सभ विखे निरलेप है, ऐसा जिसको ब्रह्म दृष्टि आया है॥१९॥ फिर कैसा? भली वस्तु पाये से प्रसन्न नहीं होए और बुरी वस्तु पाए से बुरा नहीं माने है ऐसा जो स्थिर बुद्धि ज्ञानी ब्रह्म को जानने हारा है जिसके हृदय विखे कुछ अज्ञान नहीं रहा बाहर की इन्द्रियां के सुख तिस को विसर

गये हैं और आत्मा के सुख विखै जाय मग्न हुआ है
हे कुन्ती नन्दन अर्जुन ! जिसका आत्मा ब्रह्म योग
साथ जुड़या है तिनही अविनाशी सुख पाया है ॥२०॥
और भोगों का सुख अन्तवन्त है सो विषे के भोगों
को त्याग के आत्मा का सुख भोगते हैं इन्द्रियों के
भोगों विखे नहीं रमते ॥ २१ ॥ इन्द्रियों के भोग
दुखों को उपजावने हारे हैं इन्द्रियों के भोगों की
ओर नहीं जाते ॥ २२ ॥ अब जिस को आगे जन्म
नहीं तिस की बात सुन जैसे वलटोही से एक दाना
निकाल देखते हैं वह एक ही गला है तो सभी दाने

गले हैं जो एक कच्चा है तो सभी कच्चे हैं इसी प्रकार जिस ज्ञानी को काम क्रोध नहीं उपजता तिसको फिर जन्म नहीं जिन काम क्रोध दोनों शत्रु जीते हैं तिस ने ही योग की जुगती जानी है और सोई मनुष्य संसार विखे सुखी है ॥२३॥ जिसको काम क्रोध नहीं उपजते तिस की बात सुन आत्मा जो है ज्योति स्वरूप तिस साथ जाय जुड़िया है तिस आत्मा साथ जुडने का जो है निर्बाण सुख तिस निर्बाण सुख विखे जाये मग्न हुआ है तिस कार्ण ते तिस को काम क्रोध नहीं उपजते सो आत्म ब्रह्म निर्बाणसुखको प्राप्त हुआ है ॥२४॥ तिससे

पाप मिट गए हैं और दूसरी दृष्टि तिस पुरुष की दूर
हुई सो ब्रह्मदर्शी हुआ है।।२५।। और सब भूत प्राणियों के
कल्याण विखे है प्रीत जिसकी शीतल स्वभाव है
और काम क्रोध तिस के नहीं ऐसा जो है ज्योति
स्वरूप ब्रह्म निर्बाण सुख तिस विखे मग्न हुआ है।२६।।अब
जो देह साथ होते ही मुक्ति रूप है तिस की बात सुन
जिन बाहर की इन्द्रियां विषयों से बर्ज राखी है और नेत्रों
कर त्रिकुटी का ध्यान करे और प्राणवायु ऊपर की ओर
समान वायु तले की इकट्ठी कर नासका विखे आनी है
।।२७।।और जीतिया है जन्म जिसने और नहीं है किसी

वस्तु की वाछा जिसको और नहीं है जिसको किसी का डर और क्रोध भी नहीं ऐसा जो मेरा भगत है सो जीवन मुक्ति कहिये है ॥२८॥ अब मेरी बात सुन, हे अर्जुन! कई कोट लोग मेरे पावने के निमित्त यज्ञ करते हैं और कई कोट लोग तपस्या करते हैं और यज्ञ भी करते हैं सो तिन यज्ञों का और तपस्या का भोगता भी आप है और सब लोगों का ईश्वर और सब भूत प्राणियों का मित्र ऐसा जो प्रभु है सो कोई ऐसा जाने कि श्रीकृष्ण भगवान जी ऐसे हैं तिसके जानने का फल क्या पावे हैं सो परमात्म सुख को पावे है।

इति श्रीभगवत गीता श्रीकृष्णा अर्जुन सम्वादे पंचमो अध्याय ॥५॥

* अथ पाचवें अध्याय का महात्म्य *

श्रीभगवानोवाच—हे लक्ष्मी ! पांचवें अध्याय का महात्म सुन । एक ब्राह्मण पिंगला नाम अपने धर्म से भ्रष्ट हुआ था कुसंग में जाए बैठे मच्छी मास खावे मदरा पान कर जुआ खेले तब उस ब्राह्मण को भाई चारे में से छेक दिया तब वह किसी और नगर में चला गया देवयोग कर वह पिंगला एक राजा के नौकर जा हुआ राजा के पास और लोगों की चुगलियां किया करे जब बहुत दिन बीते तब वह धनवन्त होगया तब उसने अपना विवाह कर लिया सो स्त्री व्यभिचारणी आई

जैसा वह था तैसी ही स्त्री आई जो कुछ वह ब्राह्मण कहे सो न करे ब्राह्मण कहे तू बाहर न जा वह रहे नाहीं जहां भावे तहां जावे भर्त्ता को जाने नहीं वह कल्पना करे और स्त्री को मारे एक दिन स्त्री को बडी मार पडी उस स्त्री दुःखी हुई ने दुरबुद्धि करके भर्त्ता को विष देदी वोह ब्राह्मण मर गया उस ब्राह्मण ने गीध का जन्म पाया, कितने काल पीछे वह स्त्री भी मर गई उस ने तोती का जन्म पाया, तब वोह एक तोते की स्त्री हुई वोह तोता एक बन में रहता था, एक दिन उस तोती ने तोते से पूछा, हे तोता ! तैं तोते का जन्म क्यों

पाया, तब उस तोते ने कहा हे तोती ! मैं अपने पिछले
जन्म की वारता कह सुनाता हूं मैं पिछले जन्म में
ब्राह्मण था अपने गुरू की आज्ञा नहीं मानता था
मेरा गुरू विद्यावान था उन के पास और विद्यार्थी
रहिते थे सो गुरू जी किसी और विद्यार्थी को पढ़ावें
मैं उनकी बात में बोल पडा कई बार हटका भी पर मैं नहीं
माना मुझको गुरू ने श्राप दे दिया कहा जा तू तोते का
जन्म पावेगा इस कारण से मैं तोते का जन्म पाया है अब
तू कहो कि किस कारण से तोती हुई उसने कहा मैं पिछले
जन्म ब्राह्मणी थी जब व्याही तब भर्त्ता की आज्ञा नहीं

मानती थी भर्त्ता ने मुझे एक दिन मारा मैं भर्त्ता को
विष दिया वह मर गया जब मेरी देह छूटी तब बडे घोर
नरक में मुझे गिराया कई नरक भुगाय कर अब मुझे
तोती का जन्म हुआ तोते ने सुन कर कहा तू बुरी है
जिन अपने भर्त्ताको विष दीनी तोती ने कहा नरकों के
दुःख भी तो मैंने ही सहे हैं अब तो मैं तुझे भर्त्ता जानती
हूं एक दिन वह तोती बन में बैठी थी वही गीध आया
तोती को उस गीध ने पहिचाना जो वोही मेरी भार्य्या
है जिसने मुझे विष दीनी थी वह गीध तोती को मारने
चला आगे तोती पीछें गीध जाते जाते तोती एक

मसान भूमिका में थककर गिर पडी वहा एक साधु को
दाह दिया था उस साधु की खोपडी पडी थी मींह के
जल साथ भरी हुई उसमें गिरी इतने में गीध आया
उस तोती को मारने लगा उस खोपडी के जल साथ
उनकी देह धोई गई वह आपस में लडते २ मर गए
अधम देह से छूट कर देव देही पाई विमान आये तिन
पर बैठाकर दोनों को बैकुंठ ले चले। गीध ने कहा
पुण्य कौन किया है जो बैकुंठ को चले हैं हम ने
तो जन्म में पुण्य कोई नहीं किया मैं इस पुण्य
को नहीं जानता इतने में दोनों धर्म्मराज की पुरी में

गए धर्म्मराज ने कहा क्यों रे गीध तू पीछे कौन था उसने कहा ब्राह्मण था मुझे मेरे भाइयों ने देशसे निकाल दिया था मैं और देश में जाय बसा वहां मैंने विवाह किया दुराचारणी स्त्री मिली उसने मुझे विष देकर मारा और वह भी मरकर तोती हुई मैं गीध हुआ मैं बन विखे इसको पहिचान के मारने लगा वहां एक मसान में मनुष्य की खोपडी जल साथ भरी हुई थी तिस में तोती गिरी मैं भी वहां पहुंचा उसको हम दोनों को स्पर्श हुआ तत्काल हमारी देह छूटी । देव देही पाई विमानों पर चढ़ा कर हम दोनों को बैकुंठधाम को लेचले

हैं यह कौतुक हमको कुछ मालूम नहीं हुआ तब धर्म्मराज
ने कहा खोपडी एक साधू की थी वह गंगा जी में
स्नान करके नित्य श्री गीता जी के पांचवें अध्याय का
पाठ करता था खोपडी परम पवित्र थी उसके स्पर्श
साथ तुम बैकुंठबासी हुए हो और अपने पारखदों को
धर्म्मराज ने हुक्म दिया कि जो प्राणी श्रीगङ्गा जी
का स्नान करके गीता का पाठ करते हैं तिनको मेरे
पूछे बिना बैकुंठ को ले जाया करो जो संतों की सेवा
करते हैं तिनको भी बैकुंठ ले जाओ तब वह पार-
खद दोनों को बैकुंठ में ले गये। नारायण जी ने

कहा है लक्ष्मी ! यह गीता जी के पाचवें अध्याय का महात्म्य है सो तैने श्रवण किया है ।

इति श्री पद्मपुराणे सती ईश्वर सम्वादे उत्राखण्डे श्री गीतामहात्म नाम पंचमो अध्याय ॥५॥

* अथ छठवा अध्याय *

आत्म संयम योग !

श्रीभगवानोवाच—हे अर्जुन ! जो कर्मयोग कर मेरे साथ जुडे हैं और फल कुछ वांछते नहीं तिनको संन्यासी जानें जो मेरे साथ जुडे हैं इसीसे योगी कहिये है फल कुछ वाछते नाहीं इसी से संन्यासी कहिये हैं हे अर्जुन ! कुछ जटा के धारे से भस्म के लगाए से अग्न धूनी

जलाए बैठे से संन्यासी नहीं होते॥१॥ हे पाडव ! जिस को संन्यासी कहते हैं तिसीको तूं योगी जान संन्यासीतिस को कहते हैं जिसके मन में मेरे चर्ण कमल बिना और कुछ वांछा नहीं मेरे सिमर्ण साथ जुडे बिना अवांछी होता नहीं ॥२॥ अवांछी हुए बिना मेरे सिमर्ण साथ जुडता नहीं जब मेरे सिमर्ण साथ जुडे तब अवांछी होए सो बिना योगी कोई नहीं जुडता ॥३॥ इस कारण से संन्यास और योग यह कहे हैं और जो कोई मेरे योग साथ जुडिया तिस को मेरे जानने के जो हैं सत्य कर्म अश्नान से आदि लेकर सो करने चाहिये॥४॥जब सत्य

कर्म कर निर्मल होए तब मेरे साथ जुड़े और जो कोई योग आरूढ़ हुआ तिसको कोई कर्म नहीं करना आया जो कुछ उसकी इच्छा होए सो करे सोवे तब सोय रहे जो बैठे तब बैठा रहे योग आरूढ इच्छाचारी मुक्तरूप है सो योग आरूढ तब होता है तिसके लक्षण सुन । इन्द्रियां किसे विषे को न उठें और मन विखे मेरे स्मरण बिना कोई चिन्ता भी नहीं होए जब ऐसा होय तब योगारूढ़ कहिये तिन अपने आत्मा का उद्धार किया संसार के विषयों के स्वादों में नहीं रमा और अपना ही आत्मा मित्र है अपना ही शत्रु है ॥५॥

जिन विषयों से वरज कर अपना आत्मा मेरे भजन साथ जोडिया है तिसका अपना आत्मा मित्र है जिन मुझको विसार कर अपना आत्मा विषयों में लगाया है तिसका आत्मा शत्रु है फिर न कोई मित्र है न शत्रु है ॥६॥ जिन आतमा वरज कर विषयों से परमात्मा पारब्रह्म अविनाशी साथ जोडिया है सो परम शान्ति सुख को प्राप्त हुआ है और उसको शीत उष्ण भी नहीं व्यापता और मेरी कृपा से और कोई दुख भी नहीं व्याप सक्ता ॥७॥ जो आदर करने से प्रसन्न और अनादर करने से बुरा नहीं मानता ज्ञान जो है अपने

आपका जानना है मैं क्या वस्तु हूं यह क्या खेल है और विज्ञान कहिये परमेश्वर का जानना यह दोनों ज्ञान विज्ञान हैं ॥८॥ इनको मैं तेरवें अध्याय में कहूंगा जिन्होंने ज्ञान विज्ञान रूप अमृतपान किया है तृप्त हुआ है आत्मा जिसका सो इन्द्रियों को निवारण करे सदा एकसा रहे कंचन माटी शत्रु मित्र एक सम कर जाने धर्मी पापी एक से देखे राग द्वेष न करे निरन्तर एक ध्यान मित्र शत्रु न करे यह पूरण लक्षण योग के कहे हैं॥९॥ इस जुगत से रहे योगी आत्मा से जुडे अभय रहे परमानन्द रूप रहे दूसरे की आस न करे माया के मोह से

रहित होय तो परमपद को पावे है ॥१०॥ हे अर्जुन ! जो कोई और भी योग आरूढ़ हुआ चाहे तिसकी बात सुन, वोह क्या करे, प्रथम तो एकांत ठौर एक घड़ी चार उंगली ऊंची जिसमें कंकर काटा टोया टिब्बा न होय सो बनाये, कैसी एक जैसी साफ थड़ी बनाकर तिसपर गोबर का चौंका फेरे, तिसपर कुशा बिछावे कुशापर मृगछाला बछावे ऊपर कपास का धोया हुआ वस्त्र विछावे ॥११॥ ऐसे पवित्र सुखाले आसन पर चौकड़ी मारकर बैठे, मन को निश्चल करे, इन्द्रियां वसकरे, ऐसा होय कर मेरे साथ जुड़े॥१२॥और सारी देह को

भी सीधा रखे बांका टेढा न बैठे सिर ग्रीवा को भी
सीधा रखे ऐसा निश्चल होय के बैठे ॥१३॥ अपनी
नासका का अग्र भाग देखे और किसी दिशा को न देखे
अपने आत्मा को परमात्मा विखे लीन करे किसी का
डर न करे गोविन्द को गहि राखे॥१४॥ और मन को
संयम कर मन का निश्चल चेता मेरे विखे राखे इस भांति
मुझ साथ योग जुडे, इन लक्षणों साथ जुडे तो परम
शांति सुख जो है निर्बान पद तिसको प्राप्त होय॥१५॥
हे अर्जुन ! और भी तिसकी युक्त सुन, जो प्राणी उदर
भरके भोजन खावे तब भी योग नहीं होय, जो भूखा

रहे तब भी योग नहीं होये, योग किस भाति होये सो सुन, युक्तका आहार करे कैसा अथवा दो ग्रास भूखा रहे, जिस से स्वास सुखी चलें ॥१६॥ जल्दी न चलें मस्त हाथी की नाईं चले मन्द २ जुती ना पावे दृष्टिकर पृथ्वी को देखता चले जहां कोई जीव जन्तु कंकर कांटा न होय तहां चरण धरे अपवित्र ठौर पर पैर न धरे जागता रहे तौ भी योग नहीं होय, सोय रहे तौ भी योग नहीं होय, सोना जागना सहज करे, पहर रात पहिली जागे पहर रात पिछली जागे, जो ऐसी युक्ति कर योग करे तिसको योग प्राप्ति होय ॥१७॥ ऐसी युक्तकर देह को कोई रोग भी नहीं

व्यापता, इसका नाम दुख नाशन योग है, विवेकी पुरुष
योगी का मनजब आत्मा साथ जाय जुडे है तब इसके मन
विखे किसी वस्तु को वांछा रहे नहीं, तिसको योगयुक्त
कहते हैं ॥१८॥ अब योगी को एकात बैठना क्यों कहा
है ? तिसका दृष्टान्तसुन, जैसे दीपक पवन लगने से ठहर
नहीं सक्ता, निर्मल अडोल जोत प्रकाश नहीं करे
है और जो पवन लगने की ठौर ना राखिये तो तिसकी
जोत अडोले है, इस कारण से योगी का एकात बैठना
कहा है ॥१९॥ एकांत बैठकर मुझ को चितव्या करे तब
योगी का चित्त मेरी सेवा युक्त कर निश्चल होय और

तिसको आत्मा का दर्शन होता है, आत्मा का दर्शन कर
अति सुख को पावे है आत्मा के दर्शन का सुख कैसा
है ?अति अविनाशी सुख है, तिसको बुद्धि जानती है।।२०।।
वोह सुख बुद्धि गोचर हैं इन्द्रियां उस सुख को नहीं
जानती ।।२१।। इस कारण से इसका नाम जितेंइन्द्रै सुख
है और जिस सुख के पाये से वह योगी निरलेप निश्चल
होता है और जिस सुख के उपरान्त और कोई लाभ
नहीं मानता।।२२।।जिस सुख के पाये से कोई शरीर को
बड़ा दुख लगे और शस्त्रों साथ काटे अग्नि में जलावे तौ
भी तिसको कुछ दुख नहीं लगे ।।२३।। तिस की साखी

प्रहलाद जानो जैसे प्रहलाद को हरनाकश ने अनेक प्रकार की शासना दीनी पर प्रहलाद को कुछ कष्ट न हुआ ऐसा सुख है, जिस सुख के पाये से सभी दुख भाग जायें हैं॥२४॥ ऐसा सुखानिधान योग संसार से विरक्त हो कर अवश्य कीजिये, विलंभ ना कीजियें सभी कामना विसार कर और सब इन्द्रियां वस करके योग कीजै॥२५॥ शनैः शनैः मन को बुद्धि साथ पकड कर आत्मा विखे निश्चल करे और कुछ ना चितवे यह मन चञ्चल है जिस२ बात को चितवै तिसते निवारन करके आत्मा साथ लगावे॥२६॥ जब मन जाए जुडे आत्मा साथ तब कैसे परम शात सुख

को पावे है जो तीन गुणों को काटजावे है निर्मल पापरहित तब ब्रह्म साथ मिल के ब्रह्मको ब्रह्म रूप हुआ जाने॥२७॥ कपट माया दूर करकेइस प्रकार जिसने योग जाना है सो नहीं डोलता। आपसेती आप जुडिया, पाप तिसका सभी झडिया, सहिजे ही तिसयोग पाया, तबसुख ब्रह्मका प्रकाश हुआ, आत्मा का संग किया, परम सुख को पाया, सकल घट में आप देखिया, आत्मा में सकल पेखिया, आप पर का कुछ ना व्यापे, आत्मा समदृष्टि देखिया, आप मध्ये ब्रह्म देखिया, जुगत निर्मल योग पाया, केवल ब्रह्म प्रताप ते ॥२८॥ हे अर्जुन ! सभी भूत प्राणी तिसको

अपने आत्मा विखे दृष्टि आते हैं और सब भूत प्राणियों विखे अपना आत्मा तिसको दृष्टि आता है तिस की ऐसी समदृष्टि भई है ॥२९॥ आप विखे भी मुझको लगा देखने जो सभनां विखे मुझे आत्मा ब्रह्म को देखे और सभी भूत प्राणी मुझ विराट पुरुष पर बैठे देखे ऐसी जिस की दृष्टि आई है॥३०॥ सो तिस ते मैं भिन्न नहीं मुझसे वोह भिन्न नहीं मैं और वोह एक ही रूप हैं, सो भी भूत प्राणियों विखे मुझको व्यापिया पहिचान कर जो मेरा भजन करते हैं तिनको फिर जन्म नहीं और जो सभनों विखे मैं व्यापा हूं तिनों विखे मेरा भजन क्या करना है

सो सुन ॥३१॥ हे अर्जुन ! जैसा अपने आत्मा विखे
दुःख सुख लगता है तैसे ही अगले को जाने यह जान
कर किसी को दुखावे नहीं सब का सुखदायक मित्र
होए वरते मेरे मत विखे सब योगियों से वोह योगी
श्रेष्ठ है जो सब का सुखदायक है ॥३२॥ अर्जुनोवाच-
अर्जुन श्रीकृष्ण भगवान जी से प्रश्न करे है, हे
मधुसूदन जी ! तुम जो यह योग मुझे उपदेश किया है
हे प्रभु जी, यह योग तो बड़ा कठिन है और मैं ऐसा
योग कर भी नहीं सकता ॥३३॥हे भगवान जी ! मन
तो चञ्चल है तिस मन को पकडना मैं पवन से भी

अपने आत्मा विखे द्दष्टि आते हैं और सब भूत प्राणियों विखे अपना आत्मा तिसको द्दष्टि आता है तिस की ऐसी समद्दष्टि भई है ॥२९॥ आप विखे भी मुझको लगा देखने जो सभनां विखे मुझे आत्मा ब्रह्म को देखे और सभी भूत प्राणी मुझ विराट पुरुष पर बैठे देखे ऐसी जिस की द्दष्टि आई है॥३०॥ सो तिस ते मैं भिन्न नहीं मुझसे वोह भिन्न नहीं मैं और वोह एक ही रूप हैं, सो भी भूत प्राणियों विखे मुझको व्यापिया पहिचान कर जो मेरा भजन करते हैं तिनको फिर जन्म नहीं और जो सभनों विखे मैं व्यापा हूं तिनों विखे मेरा भजन क्या करना है

सो सुन ॥३१॥ हे अर्जुन ! जैसा अपने आत्मा विखे
दुःख सुख लगता है तैसे ही अगले को जाने यह जान
कर किसी को दुखावे नहीं सब का सुखदायक मित्र
होए वरते मेरे मत विखे सब योगियों से वोह योगी
श्रेष्ठ है जो सब का सुखदायक है ॥३२॥ अर्जुनोवाच–
अर्जुन श्रीकृष्ण भगवान जी से प्रश्न करे है, हे
मधुसूदन जी ! तुम जो यह योग मुझे उपदेश किया है
हे प्रभु जी, यह योग तो बड़ा कठिन है और मैं ऐसा
योग कर भी नहीं सकता ॥३३॥ हे भगवान जी ! मन
तो चञ्चल है तिस मन को पकडना मैं पवन से भी

कठिन जानता हूं ॥३४॥ अर्जुन के प्रश्न का उत्तर श्रीकृष्ण भगवान जी कहे हैं। श्रीभगवानोवाच-हे महा-बाहू अर्जुन! इस बात में कुछ संदेह नहीं, मन जो चञ्चल है पकड़िया नहीं जाता, पर इसके पकड़ने के दो उपाय हैं सो सुन, मेरे साथ प्रीत, संसारके विषयों से वैराग, यह दोनों उपाय हैं, इन कर मन निश्चल होता है ॥३५॥ सो जिन मुझ साथ प्रीति नहीं करी, संसार के विषयों से वैराग्य नहीं किया, सो मुझ को नहीं पावेंगे, जिन्होंने अभ्यास कर मन मुझ साथ नहीं जोड़िया तिनको योग कहां है? अभ्यास कहिये के मेरे सिमर्ण विना जो कुछ

और चितवन मन चितवे है मन को बुद्धि साथ पकड़ कर मुझ ही को सिमरे, इसका नाम अभ्यास है, जिन वैराग्य अभ्यास कर दोनों उपाय नहीं किये, तिन को योग कठिन है, जिन्होंने अभ्यास और वैराग्य करके मन मुझ साथ जोडिया है, तिनको योग पावना सुखाला है, अभ्यास वैराग्य दोनों उपाय मन पकडने के हैं॥३६॥
अर्जुनोवाच—अर्जुन प्रश्न करे है हे महाबाहू प्रभु जी! जिन तुम्हारे साथ योग जोड़िया है, देह छूटने के समय तिन की श्रद्धा जो है प्रीति सो तुम्हारे योग से छूट कर किसी और बात पर गई हो, सो प्राणी योग की विधि

को क्या नहीं प्राप्त हुआ है?हे श्रीकृष्ण भगवानजी! सो किस
गति को प्राप्त हुआ, सो तुम्हारे योग से भ्रष्ट हुआ, के
नहीं,उसकी सारी सिद्धि निष्फल हुईके तिसकी कुछगति
भी भई॥३७॥जैसे मेघ उमढ कर आवे संसार में वर्षाके
निमित्त किसी ओर से और पवनने आयेके मेघको खंड२
कर दिया वर्षा न हुई तिस मेघ की भांति योगी का योग
नष्ट हुआ कि उस की गति हुई ॥३८॥ हे महाबाहू प्रभु
जी ! श्रीकृष्ण जी, सो तो तुम्हारे योग को नहीं पहुंचा
तुम्हारा ब्रह्म पद जो है मुक्तिपद बैकुंठ तिस मार्ग में ओह
फिर अंध हुआ तिसकी गति कहो,हे प्रभु!और मेरे मन

का संशय काटो । तुम बिना इस संशय को छेदनहारा
कोई नहीं ॥३९॥ श्रीभगवानोवाच—हे अर्जुन ! तिस
योगीका योग तूं नाश हुआ मत जान, हे महाबाहो! जिन
एक वार मेरा नाम लिया और नमस्कार किया है मैं
सत्यपुरुष जो अविनाशी हूं सो सदा कल्याणरूप हूं॥४०॥
अब योगी जो मन देह छूटने के समय मेरे सिमर्ण को
त्याग के और बात पर गया है तिसकी गति सुन, जिस
स्वर्ग पावनेके निमित्त मनुष्य बड़े दान करते हैं यज्ञ करते
हैं तपस्या करते हैं सो स्वर्ग मेरे योगी को दण्ड है सो
भ्रष्ट योगी स्वर्ग जाए भोगे है सो स्वर्ग का वृतान्त

सुन, तहां देवता ही बसे हैं तहां ना किसी की कोई स्त्री है ना कोई किसी का भर्त्ता है तहां अप्सरां भोगने को हैं कैसी हैं जिन की देह से सुगन्धता आवे है और दिव्य गन्धर्व गायन करते है खाने को अमृत भोजन हैं सूंघने को दिव्य पारिजात के फूलहैं, पहिरनेको दिव्य वस्त्र और अनेक प्रकारके दिव्य भोगहैं सो भ्रष्ट योगी तहां जाकर पहुंचे है ॥४१॥ जब वोह भ्रष्ट योगी उन दिव्य भोगों को भोगकर आजावे है और तिन भोगों से तिसका मन विरक्त होए तब तिस स्वर्ग लोक को त्यागकर मनुष्य लोक विखे आए जन्म पावे है .किस

के घर पावे है? सो सुन, पवित्र कुल ब्राह्मण वा क्षत्रिय की लक्ष्मीवंत कुल में जन्में है जिन थोड़े दिन योग साधना करी, मरने के समय योग से चल गया होए, सो स्वर्ग के भोग भोगकर ब्राह्मणक्षत्रिय द्रव्यवान के घर जन्म लेकर फिर वोही योग की साधना तिसके मन विखे जाग उठती है । तिसपर दृष्टान्त, जैसे कोई कार्य करता २ सो जावे जब जागे तब वोही कार्य करने लगता है इसी भान्ति तिसके मन में योग उपजै है तब मेरे साथ योग जुड़के मेरे परमानन्द अविनाशी पद विखे प्राप्त होता है, एह तो जिन थोडे दिन साधन

किया था और मरने के समय तिसका मन योग से चलिया था तिसका वृत्तांत है॥४२॥अब जिसने बहुतदिन योग साधन की होय और मरने के समय मन भी चलिया नहीं,तिसकी बात सुन॥४३॥वोह योगी भी स्वर्ग के भोग भोगकर फिर मनुष्य जन्म पावे तो बडे बुद्धि-मान मेरी महिमा जानने हारे ऐसे योगी जो हैं मेरे, तिनके घर जन्म पावे है जो अति दुर्लभ से दुर्लभ है॥४४॥तहां जन्म लेकर जो कुछ पूर्व जन्म में योगाभ्यास किया था सो यत्न से बिना ही तिस से अभ्यास होता है, जैसी पिछले जन्म तिसकी बुद्धि थी,सोई तिसकी बुद्धि प्राप्त

हुई है सो है।।४३।। कुरुनंदन ! योग का अभ्यास तिससे जाग उठे है सो वोह योगी शब्द ब्रह्म जो वेदों का तत्त्व है सो तिसमें मेरी महिमा को जानने लगा पारिग्रामी हुआ और यत्न बिना ही मेरे साथ जुड़जाता है और सब पापों को काटकर मेरे योग की साधना को प्राप्त होता है ।।४४।। हे अर्जुन ! इस योग मार्ग की सिद्धि एक जन्म विखे नहीं होती अनेकजन्म बहुत बार योग करता आवे तब सो मेरी परमगति परमपद अविनाशी धाम तहा जाय प्राप्त होता है ।।४५।। अब अर्जुन योगी भी तीन प्रकार के हैं एक तप योगी हैं सो उनकी

वारता सतारवें अध्याय में कहूंगा सो तप योगी से
ज्ञान योगी श्रेष्ठ है एक ज्ञान योगी है एक कर्म योगी
मेरी पूजा करने हारे तप योगी से ज्ञान योगी अधिक
श्रेष्ठ है ॥४६॥ तिसकी बात सुन, जिस योगी की आत्मा
मेरी प्रीति साथ मेरे विखे मग्न हुई क्या डूब गयी
और नित्य ही श्रद्धा से मेरी पूजा करता है और
स्वास स्वास श्रद्धा से मेरा स्मरण भजन करता है सो
मेरे मन विखे सर्व योगियों से श्रेष्ठ है उस से अधिक
मुझे और कोई प्यारा नहीं ॥४७॥

इति श्रीभगवद्गीता श्रीकृष्ण अर्जुन सम्वादे आत्म संयम योगो नाम छटवां अध्याय

* अथ छठवें अध्याय का महात्म *

श्री भगवानोवाच—हे लक्ष्मी! छठवें अध्याय का महात्म सुन। गोदावरी नदी के किनारे एक नगर है वहां एक राजा का नाम जानसुरत था बड़ा धर्मज्ञ था धर्म अर्थ काम मोक्ष का साधक था तिस की प्रजा भी धर्मज्ञ थी लोग राजा की स्तुति करते थे एक दिन उस नगर में हंस उड़ते उड़ते आए निकले उनमें से एक बैठता ही उतावला उड गया तब नगर के पण्डितोंने कहा हे हंस! तू ऐसा उतावला उड़ा है क्या तू राजे जानसुरत से आगे ही स्वर्ग को जाया चाहता है तब

उन पक्षियों में जो सरदार था उसने कहा इस राजा से भी एक रईयक मुनी ऋषीश्वर श्रेष्ठ है वह बैकुंठका अधिकारी होवेगा बैकुण्ठ लोक स्वर्ग से ऊंचा है यह वारता राजा ने श्रवण करी तब मनमें विचार करी कि मेरे से उसका पुण्य बड़ा होवेगा जिसकी यह हंस स्तुति करते हैं विचारा कि उसका दर्शन करिये राजाने सारथी से रथ मंगवा कर सवारी की प्रथम बनारस श्रीकाशी जी में जाकर गंगा में स्नान किया दान किया शिवजी महाराज का दर्शन किया फिर लोगों से पूछा यहां कोई रईयक मुनि भी है लोगों ने कहा नहीं तब

राजा दक्षिण देश को गया श्रीरंगनाथ को परसा वहा स्नान ध्यान कर दान किया लोगों से पूछा यहां कोई रईयक मुनि भी है उन्होंने कहा नहीं तब राजा पश्चिम दिशा को गया द्वारिकानाथ को पूजा जहां तीर्थों पर जावे तहां तहां जाय दान स्नान कर रईयक मुनि को पूछे फिरे राजा उत्तर दिशा को गया बद्रीनाथ जाये परसा तहां से राजे का रथ चले नाहीं तब राजे ने कहा मैं सगली धरती की प्रदक्षणा करी है किसी स्थान रथ नहीं अटका यहां रथ अटका है यहां कोई ऐसा पुण्यात्मा रहे हैं जिस के तेज कर मेरा रथ नहीं चलता

तब राजा उतर कर रथ से आगे चला, देखे तो एक पर्वत की कन्दरा में अतीत बैठा है उसके तेज से बहुत प्रकाश होरहा है, जैसे सूर्य्य की किरण होती हैं, तब राजा ने देखते ही कहा यही रईयक मुनि होगा राजा ने दण्डवत कर चरणबन्दना करी हाथ जोड़ के स्तुति करी, हे गुसाईं जी ! आपके दर्शन कर मेरा कल्याण हुई आज मेरा जन्म सफल हुआ आज मैं कृतार्थ हुआ हूं। तब रईयक मुनि ने राजा का आदर किया और कहा हे पृथ्वीपति ! तू चार धाम के परसनहारा धर्म्म के साधनहारा है तू पुण्यात्मा है सत्कार सहित

राजा को अपने पास बिठलाया मेवा कन्द मूल मंगवा कर राजा को दिये तब राजा ने मुनी से पूछा कि आप का तेज ऐसा किस के बल कर है तब मुनी ने कहा हे राजा! मैं तो अतीत जटाधारी भस्म लगाये कुपीनधारी हूं पुण्य क्या करना था माया मेरे पास नहीं पर हमारे यहां एक बात है कित्य प्रति गीता के छठवें अध्याय का पाठ करता हूं इस कन्दरा में इसी का उजाला है यह सुन कर राजा ने अपने पुत्र को बुला कर कहा हे पुत्र! आज से तू राज कर मैं अब तीर्थ सेवन करूंगा इतना कह कर राज त्याग दिया रईयक मुनी से छठवें

अध्याय गीता जी का पाठ करना आरम्भ किया पाठ करने लगा इसी पाठ के प्रताप से राजा त्रिकालदर्शी हुआ इस प्रकार बन में रहते २ बहुत काल बीत गया एक दिन प्राणायाम करके मुनि और राजा दोनों ने देह त्याग किया स्वर्ग से विमान आये तिन पर बैठ कर बैकुण्ठ को गये। श्रीनारायण जी कहें हे लक्ष्मी! यह छठवें अध्याय का महात्म्य है सो तूने श्रवण किया है।

इति श्रीपद्मपुराणे सतीईश्वरसम्वादे उत्राखडे श्रीगीतामहात्म नाम छठवां अध्याय ॥६॥

---

* अथ सातवा अध्याय *

प्रकृति भेद योग ।

श्रीभगवानोवाच—चित राखहु चरणारबिन्द भगवन्त भगति को पाये । एक टेक डोलत नहीं यह विध योग कमाये । मेरे ही आसरे योग धारे हे अर्जुन! मेरा आसरा क्या कहिये कि हे महाप्रभु श्रीकृष्ण भगवानजी मैं तेरे स्मरण साथ योग कर जुडिया हूं सो तुमारी कृपा से जुडिया हूं आप से नहीं जुडिया ॥१॥ एह विधि सगली समझ के पाया योग का राह । तुमरी कृपा से स्थिति भई सच्चे बेपरवाह। हे अर्जुन ! मेरे योग जानने के प्रसाद से

तिस को जो ज्ञान उपजे है सो ज्ञान मैं तुमको कहिता हूं जिस ज्ञान के जानने मे फिर कुछ जानना नहीं रहे॥२॥ जो कोई पुरुष संसार से विरक्त होता है वा जितने विरक्त होते हैं उन विरक्तों में कोई एक मुक्ति पद को प्राप्त होता है और जितने मुक्त होते है तिनमें कोई एक मेरी महिमा के ज्ञान को पहिचाने है जो कोई कोटों मुक्त होनहारों मैं कोई एक महिमा जानता है सो मेरी महिमा तूं मुझसे श्रवण कर॥३॥ हे अर्जुन! आप तेज वायु पृथ्वी अकाश और मन बुद्धि हंकार यह आठ प्रकृति हैं॥४॥सो इन को उपजानहारी मेरी माया है यह आठों शरीर धारियों

के बाहर भी हैं और भीतर भी हैं जिस भाति सारे जगत
विखे हैं सो भांत सुन ॥ ५ ॥ धरती का अंश मांस है,
जल का अंश रुधर है, वायु का अंश स्वास, तेज का अंश
अग्नि जो उदर में अन्नपचावे है, आकाश का अंश पुलाड़
है, मन बुद्धी और हंकार यह सब मेरी माया है, हेमहाबाहू
अर्जुन ! नौवां इसमें जीव भूत है, सारा जगत संसार इन्हों
का ही है, सभी चुरासी लक्ष जून इन्हों की बनाई है।
मैं ही सब का मूल कारण हूं ॥ ६ ॥ और बात सुन,
मैं कैसा हूं, सब संसार के रचनेहारी जो मेरी माया है
तिस को भी उत्पत्ति करता हूं, पालना करता हूं, लय

भी करता हूं, सब से न्यारा हूं, हे अर्जुन ! मुझसे न्यारा कुछ नहीं, सब भूत प्राणी मेरे साथ पिरोये हैं ज्यों धागे साथ मणी प्रोई है॥ ७ ॥ हे अर्जुन ! यूं कोई मत समझे जो वासुदेव तो देवकी के घर जन्मे हैं जो सारे देह विखे जहां कोई त्वचा पाडे तहां ही पीडा होती है इसी तरां सब के समीप जो देखिये है सुनिये है सब में ब्रह्म मैं ही हूं ज्यों मेरे आधार सब लोक हैं सो भी सुन, हे कुन्ती नन्दन ! सब देहधारी जल के आसरे हैं जल का जीव रस है इस जल के रस को खाय जीवते हैं जैसे दूध विखे घी है तैसे जल विखे रस है सो जल

का जीव रस है जल रस के आधार है सो रस मेरे आधार हैं, सभी लोक चन्द्रमा सूरज के आधार हैं चन्द्रमा सूरज ज्योति के आधार हैं। जितने ब्रह्मा से आदि लेकर विद्या के पढ़नेहारे हैं जो वेदों में मेरी महिमा रूप अमृत है सो ब्रह्मा से आदि लेकर जितने वेदपाठी हैं सो उनका आधार मेरी महिमा है और वेदपाठी वेद के आधार हैं वेदों का जीवना जीव रूप ओंकार है सो वेद ओंकार के आधार हैं सो ओंकार मेरे आधार है और सभी लोक आकाश के आधार हैं और आकाश का जीव शब्द है आकाश शब्द के

आधार है शब्द मेरे आधार है सब मनुष्य बल के आधार है सो बल मेरे आधार है॥८॥सब लोक धरती के आधार हैं धरती का जीव गन्ध है जो वाश्ना है सो धरती वाश्ना के आधार है वोह वाश्ना मेरे आधार है यह सभ लोग अग्नि के आधार हैं अग्नि का जीव तेज है अग्नि तेज के आधार है सो तेज मेरे आधार है और सभ भूत प्राणियों का जीवन मैं हूं जितने तपस्वी हैं सभ तपस्या के आधार हैं तपस्या मेरे आधार है ॥९॥ हे पुरुषों में श्रेष्ठ अर्जुन ! सभ भूत प्राणियों का बीज तूं मुझको जान और सनातन पाहिले

से पहिले तूं मुझको जान और जो कुछ बुद्धवन्तों में बुद्धी है सो तूं मुझको जान तेजवालियों में जो तेज मुझ को जान ॥१०॥ जो बलवन्तों में बल है सो मेरा ही जान जो मुझको किसी वस्तु की वांछा नहीं अपने आनन्द कर पूर्ण हूं किसी साथ मेरा मोह नहीं है कुरु-वंशी अर्जुन ! जो शुभ कर्म्म का मार्ग मारनहारा जो है काम सो भी मैं हूं ॥११॥ यह जो तीनों गुण है सांतक राजस तामस तिन्हों में सभ मेरी ही शक्ति की सत्ता है और मेरे में यह नहीं है इनते मैं न्यारा हूं ॥१२॥ त्रिगुण महा माया प्रजा मोह उत्पन्न ते । मोह मग्न मूढ

अन्धा महा प्रभु नहीं गम्मते । देवी त्रैगुणमई माया देवीआंकि अर्थ कह । रच रच खेल करतीं देवी अं यह अर्थ कह ॥१॥ ऐसी माया प्रभु की तरनी कठिन अपार। एक देव की शर्ण होय सो जन उतरे पार ॥२॥ हे अर्जुन ! और उपाय माया के तरणको कोई नहीं॥१३॥ महां मूढ पापी जिनो ने शर्ण प्रभु की नहीं लईं और बहुत माया के भरम में भूलेहैं तिनको ज्ञान ने अच्छाद लिया है परन्तु जो पुरुष मेरे को निरन्तर भजते हैं वह इस माया को तरजाते हैं॥१४॥ और स्वभाव तिन के जैसे हो रहे हैं खोटे वह मेरे को नहीं भजते ॥१५॥

हे अर्जुन ! चार प्रकार के जीव पुण्यात्मा हैं एक तो रोगी मेरा सिमर्ण करते हैं मनुष्य रोग मिटावने के अर्थ मेरा भजन करते हैं तिन का रोग ही गुरु है एक जज्ञासु बोध पावने के निमित्त मेरा भजन करते हैं एक अरथी मन की कामना पावने के निमित्त पुत्र वा धनसे आदि मुझ को सिमरते हैं हे अर्जुन ! चौथे ज्ञानी भजन करते हैं ॥१६॥ तिन सभों म ज्ञानी श्रेष्ठ है किसकार्ण ज्ञानी श्रेष्ठ है ॥१७॥ सत्य स्वरूप स्वामी प्रभु अविनाशी सदा अनन्त । सुख दाता दुःख हर्ण प्रभु ऐसा कमला-कन्त ॥ १ ॥ इस प्रकार पहिचान कर चर्ण कमल को

ध्यान। सो ज्ञानी अति श्रेष्ठ है मुझ में भेद न मान॥२॥
हे अर्जुन! मुझ को ज्ञानी प्यारे हैं और मैं ज्ञानियों
को प्यारा हूं पर यह जो रोगी से आदि लेकर मुझको
सिमरते हैं तिनको भी तू बुरा मत जान सो भी बड़े
उदार हैं बड़े श्रेष्ठ हैं जो मुझ ईश्वर को सिमरते हैं पर
ज्ञानी मेरा आत्मा है तिन ज्ञानियों ने केवल मेरे चरणों
साथ दृढ़ निश्चय बांधिया है और तिनों ने उत्तम
ठाकुर ईश्वर जानिया है ॥१८॥ हे अर्जुन! बहुत जन्म
प्रयन्त भजन करते करते साधना से इनकी बुद्धि
निर्मल होती है तब उनको मेरे जानने का ज्ञान उत्पन्न

होता है कैसा ज्ञान उत्पन्न होता है सो सुन जो तिन को सभी वासुदेव ही दृष्ट आवे है सो ज्ञानी महापुरुष महन्त कहिये है पर ऐसे ज्ञानी संसार में दुर्लभ हैं।१६। जो मुझको त्याग कर मनुष्य और देवता की उपासना करते हैं तिनकी बात सुन, कामना कर तिनका ज्ञान अच्छादिया है कामना के पावने के निमित्त और देवता की उपासना करते हैं ॥२०॥ और जिस देवता की उपासना करते हैं सो तिनके हृदय विखे बैठ कर उस देवता के विखे दृढ़ श्रद्धा लगाता हूं तिसकी श्रद्धा तिस देवता में निश्चल करता हूं सो मनुष्य प्रीती साथ

देवता की पूजा करता है और मैं ही तिस देवता विखे अन्तरयामी होकर मनुष्यों को देवतियों मे कामना वर दिलाता हूं ॥२१॥ पर देवतियों का दिया जो वर है सो अनित्य है अविनाशी है अन्तवंत है बिनस जाता है ॥२२॥ और जिनकी निपट थोड़ी बुद्धि है सो देवतियों की उपासना करते हैं ॥२२॥ अब अर्जुन और निर्णय की बात सुन, देवतियों के पूजनहारे देवतियों के लोक में जाय प्राप्त होते हैं और मेरे भक्त मेरे परमानन्द अविनाशी पद विखे जाय प्राप्त होते हैं ॥२३॥ अब अर्जुन और सुन, मैं अविनाशी हूं, एकांती हूं,

किसी प्रकट नहीं किया किसी जानिया भी नहीं किसी सवारिया भी नहीं अपनी कला कर मैं आप ही पूर्ण हूं दुर्बुद्धि जो मत के हीन हैं सो मुझ को किसी से प्रगटिया जानते हैं सो मेरे प्रताप को नहीं जानते जो मैं कैसा हूं। अति उत्तम वह ऊंच प्रभु तिस समान नहीं कोय। निर्मल निश्चल अति अगम यह प्रताप प्रभु होय ॥२४॥ हे अर्जुन ! विचारे मनुष्य क्या करें तिनका ज्ञान मेरी योगमाया ने अच्छाद लिया है सो माया प्रकाश होने नहीं देती ॥२५॥ मोह माया महा मदरं अधम नीच विमोह कह। अविनाशी अजन्मा

हित प्रताप अनलखतह ॥१॥ हे अर्जुन! एक मेरा नाम वेदों में चैतन्य पुरुष है तिसका अर्थ सुन, ब्रह्मा से आदि चीटी पर्यन्त सब भूत प्राणी वर्तमान जो अब वरते हैं और जिन्होंने आगे होना है और पीछे होय वरते हैं सो तिनको मैं भली भात जानता हूं मुझको एक तूं । जानता है और कोई नहीं जानता ॥२६॥ क्यों नहीं जानता इन्द्रियों के भोगों में तिनकी कामना है भली वस्तु पाये से प्रसन्न और बुरी वस्तु पाये से दुखी होते हैं ऐसे हर्ष शोक कला क्लेश कर मोह को करते हैं इस कर मुझको नंहीं पाहचानते मूढ़ हुए हैं ॥२७॥

इसी कर जन्मते मरते हैं और जिनके पाप काटे गए हैं सो ऐसे पुण्यकर्मी परम पुण्यात्मा हैं सो संसार के हर्ष शोक कला क्लेश से मुक्ति होय कर मन दृढ निश्चय साथ मेरा भजन करते हैं ॥२८॥ मेरे ही आसरे हैं सो मेरे भजन के ज्ञान का फल क्या पावेंगे सो सुन, जरा जो बुढ़ापा और जन्म मरण तिन दुःखों से मुक्ति होवेंगे तिनके मन में मेरे जानने का ज्ञान उपजे है ॥ २९ ॥ सा कैसा ज्ञान मुझको ही ब्रह्म जानते हैं मुझको ही अद्भुत जानते हैं मेरे को ही अध्यात्म देव जानते हैं ऐसा मुझको जान कर प्राण त्यागने के समय मनका

निश्चल चेता मेरे में राख कर मेरा स्मरण करते देहको त्यागते हैं इसी से प्राणी परमानन्द अविनाशी पद विखं जाय प्राप्त होते हैं ॥ ३० ॥

इति श्रीमद्भगवद्गीता श्रीकृष्ण अर्जुन संवादे प्रकृतिभेद योगोनाम सप्तमो अध्याय ॥७॥

* अथ सातवें अध्याय का महात्म्य *

श्रीनारायणोवाच—हे लक्ष्मी! अब सातवें अध्याय का महात्म्य सुन। एक पटलनामा नगर है तिसमें शंकूकर्ण वैश्य रहता था वह व्यापार करने को नगर से बाहर कहीं को जाता था रास्ते में शंकूकर्ण को सर्प ने डसा वह मरगया उसके साथियों ने उसकी दाहकृत्यकरी और

आगे को सिधारे जब फिर के घर में आये तिसके पुत्र ने
पूछा मेरा पिता शंकूकर्ण कहां है उन व्यापारियों ने कहा
तेरे पिता को सर्प ने डसा था वह मर गया, और यह पदार्थ
तेरे पिता का है तू ले ले एक करोड रुपया दिया और
तिसकी गति करने को कहा क्यों जो वह अवगति मरा
था उस बालक ने अपने घर जायकर ब्रह्मणों से पूछा
कि सर्प के डसे से मरे की क्या गति करनी चाहिये
पंडितों ने कहा नारायणबिल कराओ उर्द के आटे का
पुतला बनाये उसके नेत्रों में चूनिया जडाये जैसी विधि
पण्डितों ने कही तैसी करी बडा यज्ञ किया बहुत ब्रह्मण

जिवाये श्राद्ध पिंड पत्तल कराये बाकी द्रव्य जो रहा चारों भाइयों ने बांटा एक पुत्र ने कहा जिस सर्प ने मेरे पिता को काटा है मैं तिसको मारूंगा उन व्यापारियों से पूछा वह ठौर मुझे बताओ जहां मेरा पिता शंकूकर्ण मरा है व्यापारियों ने कहा चल वह ठौर तुझे बताइये वहां ले जाय कर खडा किया देखे तो वहां एक वर्मी है तिसको कुदालों नाल खोदने लगा जब छेद बडा हुआ वहां से एक सर्प निकला कहा तूं कौन है मेरा घर क्यों खोदिया है उस बालक ने कहा मैं शंकूकर्ण का पुत्र हूं जिस सर्प ने मेरे पिता को मारा है मैं तिसको मारूंगा

तब उस सर्प ने कहा हे पुत्र ! मैं तेरा पिता हूं तूं मुझे इस अधम देह ते छुडाये और मुझे मत मार यह मेरा पूर्बला कर्म्म था सो मैंने भोगा तब लडके ने कहा हे पिता ! कोई यत्न बताओ जिससे तुमारा उद्धार होए तब उस सर्प ने कहा हे पुत्र ! किसी गीता पाठी ब्राह्मण को घर में भोजन करावो और उसकी सेवा करो उसकी आशीर्बाद कर मेरी कल्याण होवेगी तब उस बालक ने अपने घर आकर अपनी स्त्री को समाचार कहा तब उस की स्त्री ने कहा अवश्य करो जी साधूओं को जिवाओ संतो की सेवा करने से उद्धार होए तो करो तब खोजना

करी उस नगर में जितने पाठ गीता का करते थे तिन सब को बुलाय कर श्री गीता जी के सातवें अध्याय के पाठ कराये और उन को भोजन करवाया और बहुत सेवा करी तन मन कर के उनकी प्रदक्षणा करी बेनती करी हे महां पुरुषो ! आप आशीर्वाद करो जो मेरे पिता शंकूकर्ण का उद्धार होवे अधम देह ते छूटे तब उन सब ब्राह्मणों ने आशीर्वाद करी सो तत्काल उस ने अधम देह से छूट कर देव देही पाई बिमान पर चढ कर आकाश मार्ग को जाता हुआ अपने पुत्र को धन्य धन्य करता बैकुण्ठ धाम में जाय प्राप्त हुआ । श्री

नारायण जी ने कहा हे लक्ष्मी ! सातवें अध्याय का यह महात्म्य है जो तैने श्रवण किया है जो पढ़े सुनेगा सो सद्गति पावेगा ।

इति श्री पद्म पुराणे सतीईश्वर संवादे गीता महात्म्य नाम सप्तमो अध्याय ।।७।।

* अथ आठवां अध्याय *

अक्षर ब्रह्म योग ।

अर्जुनोवाच-श्रीकृष्ण जी के बचन सुनकर अर्जुन प्रश्न करे है, हे पुरुषोत्म जी ! तुमको जो तुम्हारे भगत ब्रह्म जानते हैं सो ब्रह्म क्या कहिये, अध्यात्म क्या कहिये है, कर्म क्या कहिये है, अद्भुत क्या कहिये है, अद्वैत

क्या कहिये है ॥ १ ॥ हे मधुसूदन जी ! अधियज्ञ क्या कहिये है और जो प्राण त्यागने के समय तुमको ऐसा जानते हैं तिनकी गति क्या है, इन सब अपने नामों को कृपा करके मुझको समझावो जी ॥२॥ अर्जुन के प्रश्न का उत्तर श्रीकृष्ण भगवान जी कहे हैं । श्रीभगवानोवाच–हे अर्जुन ! मैं सबसे न्यारा और अविनाशी हूं इस कारण से मेरा नाम ब्रह्म है और मुझको अपने प्रताप से ही प्रताप है अपने बल कर ही बल है और अपने ज्ञान कर ही ज्ञान है और जितने भूत प्राणी हैं तिन सब को मेरे बलकर ही बल है मेरे प्रताप कर ही प्रताप है मेरे ज्ञान कर ही

ज्ञान है सब मनुष्यों का अधिकारी ठाकुर प्रभु हूं इस कारण से मेरा नाम अध्यात्म है और सब भूत प्राणियों को उपजावता हूं जैसी जैसी किसी के मस्तक में कर्म रेखा लिखता हूं वैसी ही तिसको प्राप्ति होती है, इस कारण से मुझको कर्म कहते हैं ॥३॥ पञ्चभूत जो आप तेजवायु पृथ्वी आकाश हैं तिन का अविनाशी करता मैं हूं इस कारण से मेरा नाम अद्भुत है और जो कुछ होनहार है तिसका भी प्रभु ठाकुर मै हूं इससे मेरा नाम अद्वैत है जितने यज्ञ होते हैं देवातियों पितरों के निमित्त श्राद्ध क्षाह मनुष्य करते हैं सबसे प्रथम मेरी ही पूजा होती

है इस से मेरा नाम अधयज्ञ है और एक मेरा नाम देह भरतंभर है इसका अर्थ सुन, जितने देहधारी हैं तिन सब में मेरी देह अतिसुन्दर है मेरी देह जैसी किसी की देह सुन्दर नहीं और ना मेरे जैसा किसी में बल है, देहधारियों की क्या कहिये जितने मेरे अवतार हैं उन सबमें से यह मेरा अवतार महाश्रेष्ठ है, इस कारण से मेरा नाम देह भरतंभर है॥४॥ अंतकाल देह त्यागन के समय ऐसा मुझको पछान कर जो मेरा स्मरण करते देह त्यागते हैं सो मेरे परमानन्द अविनाशी पद में जाय प्राप्त होते हैं इसमें संदेह नहीं है॥५॥ हे अर्जुन ! देह त्यागने के समय जिस२

को स्मर्ण करते देह को त्यागते हैं सो तिस ही को पहुंचते हैं ॥६॥ इसी से सब कालों में मेरा ही स्मर्ण कर क्या जानिये यह देह छिन भंगर है किस समय छूट जावे मेरे विखे निश्चल चेता राखे तो मुझ को पावेगा इसमें संशय नहीं ॥७॥ हे अर्जुन ! सब समय चित्त कर स्वास स्वास मेरा ध्यान कर मेरा स्मरण कर यह अभ्यास योग का लक्षण है मुझ प्रभु विखे मन राख महां ईश्वर पूर्ण प्रभु ऐसा जानकर ध्यान करने से तो मेरे विखे मिल जाता है ॥८॥ फिर कैसा हूं ? कामरूप, सब का ज्ञाता, सब से आदि अलेख हूं, मेरी आज्ञा

सब के सिर पर है मुझ पर किसी की आज्ञा नहीं और सूक्ष्म से सूक्ष्म हूं सब का उत्पत्ति करता हूं अचिन्त हूं प्रवीन हूं सब के जानने हारा हूं जिसको अचिन्त रूप कहते हैं वही तेज रूप होकर सूरज में विराजमान होता हूं अज्ञान अन्धकार से न्यारा हूं पारब्रह्म हूं ॥९॥
एक योगी पुरुष प्राण त्यागने के समय अपनी इच्छा को निश्चल रखकर भक्ति योग के बलकर प्राणवायुको त्रिकुटी में भली भांत ठहराये परम पुरुष की श्रद्धा साथ ऐसा जान निसंदेह होकर देह को त्यागते हैं सो मेरे परमानन्द अविनाशी पद में जाये प्राप्त होते हैं ॥१०॥

और जिस पुरुषके पावने के निमित्त ब्रह्मचारी ब्रह्मचर्य
रखते हैं तिस पुरुषका महात्म मैं तुझको थोड़े ही में
कहिता हूं ॥११॥सो सुन एक योगी इस प्रकार देह त्यागते
हैं कि यह नौ द्वारे देह के संयम साथ मून्द कर हृदय को
निश्चल करते हैं और प्राण पवन को रोक कर मस्तक
में लिआवते हैं ॥१२॥ और मेरे नाम का हृदय में जाप
करतेहैं, "ॐ ब्रह्म" इस नाम का जाप स्मरण करते देहको
त्यागते हैं सो मेरे परमपद ब्रह्म अविनाशी पद में जाय
प्राप्त होते हैं ॥१३॥ अब मेरे प्रेमी भक्तोंका वृत्तांत सुन
जो मेरे प्रेमी मन करके निश्चल चेता मेरे में रख कर

चलते फिरते बैठते उठते मुख से राधाकृष्ण कह राम भगवान पारब्रह्म परमेश्वर परमात्मा वासुदेव कृष्ण विश्वम्भर इन नामों का जप करते हैं ऐसे जो नित्य योगी मेरे साथ जुड़ते हैं सो मुझे सुखैन ही पावेंगे क्या पाये ही रहे हैं ॥१४॥ और देह को त्याग कर मेरे परम धाम में जाये प्राप्त होते हैं और मुझको पावे हैं संसार जो दुःखों का समुद्र है इससे महापुरुष जो परम सिद्ध हैं सो फिर जन्म नहीं पावेंगे ॥१५॥ हे अर्जुन ! यह जीव ब्रह्म लोक तक जाकर फिर आवते हैं और संसार में जन्म मरण पावते हैं और जिन पुरुषों ने

में पाया हूं सो प्राणी मेरे पद में आये फिर जन्म नहीं पावते ॥१६॥ अब अर्जुन ! जिन पुरुषों ने मेरा महात्म सुनिआ है तिनकी दृष्टि सुन कैसे हैं सो प्राणी चारों युग जो हैं सतयुग, द्वापर, त्रेता, कलियुग, जब यह चारों युग सहस्र बार बरत चुके हैं तब ब्रह्मा का एक दिन होता है जब फिर यह चारों युग सहस्र बार व्यतीत होते हैं तब ब्रह्मा की रात्रि होती है ॥१७॥ अब इन युगों की मर्यादा सुन, सत्रांलाख अठाईस हजार बरस का सतयुग, बारां लाख छिनवें हजार बरस का त्रेतायुग, आठ लाख चौंसठ हजार बरस का द्वापर युग,

चार लाख बत्तीस हजार बरस का कलियुग, यह चारों त्रिताली लाख बीस हजार बरस के हैं यह चार सहस्र वार जब वरत जावें हैं फिर ब्रह्मा का दिन होता है जिन मेरा प्रताप परम अविनाशी जानिया है तिनकी दृष्टि सुन यह चारों पहर दिन के मनुष्यों के हैं ब्रह्मा का दिन तिनके जाने से एकसा ही है अपनी आर्बला भोग कर ब्रह्मा भी नष्ट हो जाता है मनुष्य भी मर जाते हैं इससे जो विनसे हैं सो एक समान हैं जिन्होंने एक अविनाशी ही पहिचान कर मेरे चरण कमलों साथ दृढ़ निश्चय बांधिया है सोई धन्य हैं ॥१८॥ और सुन, हे अर्जुन! मेरा

जो है अवगति स्वरूप तिस स्वरूप से ब्रह्मा के दिन विखे सृष्टि उपजती है फिर ब्रह्मा की रात में सो मेरे अविनाशी अवगति स्वरूप में जाय समावे है ॥१९॥ हे अर्जुन ! यह जो चौरासी लाख जून ब्रह्मा के दिन में उपजे हैं और रात्री को मेरे अवगति स्वरूप में जाये लीन होती हैं सो मेरा अवगति स्वरूप सब से न्यारा है और सनातन पुरातन है सब के नाश होने से तिसका नाश नहीं होता ऐसा तो परम अविनाशी हूं ॥२०॥ और किसी ने कभी प्रगट देखा भी नहीं इस कारण से इसका नाम अवगति है उसी को परम गति कहिते हैं

उसके प्राप्त होने से फिर संसार के मार्ग में नहीं आवता सो परम धाम मेरा घर है ॥२१॥ हे अर्जुन ! सो पुरुष सब से न्यारा है और तिस मार्ग के पावने का मार्ग सुन, जिस मार्ग के पाने से अखंड भक्ति पाईये है ॥२२॥ अब अखंड अनंत का वृत्तांत सुन, मेरे साथ दूसरा देवता नहीं पूजता, मेरे भजन बिना एक स्वास नहीं खोवना इसका नाम अनंत अखंड भक्ति है, इस भक्ति कर मैं पाया जाता हूं, सो कैसा पुरुष हूं, जिससे सभी सृष्टि उपजती है, फिर उसीमें जाय लीन होती है ॥२४॥ हे अर्जुन ! और सुन, इच्छा-चारी जो योगी हैं एक तो देह त्यागकर मुझ

पारब्रह्म में जाय लीन होते हैं फिर संसार मार्ग में नहीं आते ॥२४॥ दूसरे योगी चन्द्रमा के लोक जायकर फिर आवते हैं अब जो चन्द्रमा के लोक तक जाय फिर आवते हैं तिनकी बात सुन ॥२५॥ वोह इच्छाचारी योगी तब देह को त्यागते हैं जब मनुष्यों का दिन होता (शुक्लपक्ष चानना पक्ष होवे सो पित्रों का दिन होता है और कृष्ण पक्ष जो अन्धेरा पक्ष है सो पित्रों की रात्री होती है देवतियों का दिन कौन है, जब छै महीने सूर्य्य का रथ उत्रायण रहता है, जब छै महीने सूर्य्य का रथ दक्षिणायन होता है, तब देवतियों की रात्रि होती है, वह इच्छाचारी योगी

जब देवतियों, पित्रों, वा मनुष्यों, का दिन होय तब देह त्याग करे है जब मनुष्य भी जागते हैं, पित्र भी, देवता भी जागते हैं, सो योगी देह त्याग कर मनुष्यों का पित्रों का देवतियों का कौतुक देखता हुआ जाता है, इन लोकों से आगे अग्नि का जोत नामा नगर है तिसका कौतुक देखता हुआ मेरे परम पद अविनाशी पद में जायलीन होता है, मेरे जानने हारा परम सुख रूप हो जाता है॥२६॥ अब दूसरे योगी की बात सुन, जो जायकर फिर आवे है वोह योगीश्वर जब मनुष्य की देवतियों की पित्रों की रात्रि होती है तब देह त्याग कर इन लोकों के बीच होकर जाता है।

इस मार्गको गये फिर आवते हैं। २७। हे अर्जुन! तूने योगियों
के मार्ग दोनों सुने हैं जिन्होंने यह बात समझी है सो
मोह को प्राप्त नहीं होते इससे हे अर्जुन! तूं भी इन सर्व
कालों में मेरे साथ जुडा रहो, अब जो पुरुष इस आख्या-
यणको पढ़े सुने तिसको कितना पुण्य प्राप्त होवे सो सुन
बहुड एक धूएं का नगर है उसमें चन्द्रमा की जोत में
जाय प्राप्त होता है तहा कितना काल बसकर फिर मनुष्य
लोक में आता है। यह दोनों मार्ग योगियों के पुरातन
हैं एक का नाम शुक्ल चादनी रात्रि है एक का नाम कृष्ण
अन्धेरी रात्रि है एक मार्ग को गये फिर नहीं आते

और एक मार्ग को गये फिर आते हैं। अब और सुन, चार वेद पढ़े से जो पुण्य होए सर्व यज्ञ किये से, सर्व तप करने से, जो सभी तीर्थ अश्नान करने से और जो सब दान किये से पुराय उपजे है सो सब पुण्य इस अध्याय के पढने से प्राप्त होवे है। जो श्रद्धा साथ इसको धारण करेगा तिसको अनन्त पुण्य प्राप्त होवेंगे॥२८॥ अक्षरब्रह्मयोग अष्टमोऽध्यायः

* अथ आठवें अध्याय का महात्म *

श्रीनारायणोवाच–हे लक्ष्मी! अब आठवें अध्याय का महात्म सुन, दक्षिण देश नर्मदा नदी के किनारे एक नगर है उसमें सुशर्म्मा नाम एक ब्राह्मण रहता

था। उसके पास बहुत द्रव्य था और सन्तों की सेवा करने वाला था, यज्ञ करता था। एक दिन किसी सन्त से पूछा, जो हे ऋषि जी ! मेरे सन्तान नहीं है, तब ऋषि ने कहा, अजामेध यज्ञ कर, देवी तुझको पुत्र देवेगी, तब उस ब्राह्मण ने यज्ञ करने को एक बकरा मोल लिया उसको नुहाय कर मेवा खवाया। जब उसको लगा मारने तब बकरा कह कह शब्द करके हंसा तब ब्राह्मण ने पूछा रे बकरे, तूं क्यों हंसा है, बकरे ने कहा पिछले जन्म मेरे भी सन्तान नहीं थी, एक ब्राह्मण ने मुझे भी अजामेध यज्ञ करने को कहा था, मैं सारी नगरी

में बकरा ढूंढ रहा था पर बकरा हाथ न लगा, ढूंढते २ एक बकरी का छेला दूध चूंघता था वोह छेले समेत बकरी को मोल ले लिया जब बकरी के थन से छुडाय कर छेले को यज्ञ में होमने लगा, तब बकरी बोली, अरे ब्राह्मण ! तूं ब्राह्मण नहीं जो मेरे पुत्र को होम में देनेलगा है, तूं महापापी है ऐसा कभी सुना है, जो बिगाने पुत्र को मारने से किसी ने पुत्र पाया है, अपनी सन्तान के लिए मेरे पुत्र को मारता है तूं निरदयी है, तेरे पुत्र नहीं होवेगा वोह बकरी बहुत कह रही पर मैंने होम किया, बकरी ने श्राप दिया जो तेरा भी गला इसी भांति कटी-

येगा इतना कह तडफ कर बकरी मर गई कई दिन बीते मेरा भी काल हुआ यम मारते मारते धर्मराज के पास मुझे ले गये तब धर्मराज ने कहा इसको नरक में देवो यह बडा पापी है फिर नरक भुगाय कर मुझे बांदर की जून दी एक बाजीगर ने मुझे मोल लिया वोह मेरे गले में जेवडी पायकर दर दर सारा दिन मांगता फिरे खाने को थोडा दिया करे जब बांदर की देह छूटी तो मैंने कुत्ते का जन्म पाया एक दिन मैंने किसी की रोटी चुराय खाई उसने ऐसी लाठी मारी कि कमर टूट गई उस दुःख कर मेरी देह छूट गई फिर घोडे की देह

पाई उस घोडे को एक भठियारे ने मोल लिया वोह
सारा दिन फेरिया करे खाने पीने की खबर नहीं लेवे
सांझ पडे तब एक छोटी सी रस्सी के साथ बांध छोडे
ऐसा बाधे कि मैं मक्खी भी नहीं उडाय सकूं एक दिन
दो लडके एक कन्या मेरे पर चढ कर लगे चलाने वहां
कीचड बहुत था मैं फंस गिया ऊपर से वोह मारने लगे
वहां मेरा मरना हुश्रा इसी भान्ति बहुत जन्म भोगे
अब बकरे का जन्म पाया मैंने जानिया था जो इसने मुझे
मोल लिया है मैं सुख पाऊंगा पर तूं छुरी लेकर मारने
लगा है, तब ब्राह्मण ने कहा हे बकरे ! तुझे भी जीउ

प्यारा है जैसे चिड़िया को कङ्कर मारने से वोह आगे से उड़ जाती है, अब मैं अपने नेत्रों कर देखी हुई कहिता हूं सो सुन, कुरुक्षेत्र में एक राजा अश्नान करने आया था नाम उसका सुन्द्रसुशर्मा था उसने ब्राह्मण से पूछा ग्रहण में कौन दान करूं जिससे मेरा कल्याण हो, उसने कहा राजा काले पुरुष का दान कर, तब राजे लोहे का पुरुष बनवाया नेत्रों को लाल जड़वाय सोने के भूषण पैहराय कर तिसको तियार किया राजा ने अश्नान करके दान किया वोह काला पुरुष कह कह कर हंसिया राजा डर गिया कहे कोई बड़े औगुन है जो लोहे का पुरुष

हंसिया है तब राजे बहुत दान किया वोह फिर हंसिया ब्राह्मण को कहा हे ब्राह्मण! तू मुझे लेवेगा ? तब ब्राह्मण ने कहा मैं तेरे सारखे कई पचाये हैं, तब काले पुरुषने कहा तू मुझको वोह कारण बता जिस कारण तैंने अनेक दान पचाये हैं तब ब्राह्मण ने कहा जो गुण मेरे विखे हैं सो मैं ही जानता हूं तब वोह काला पुरुष कड कड कर फट गिया उस में से एक और कालका की मूर्ति निकली तब ब्राह्मण ने गीताजी के आठवें अध्याय का पाठ किया तब उस कालका की मूर्ति ने सुनकर देह पलटी जल की चुली भर के उस ब्राह्मण ने उस मूर्ति

पर छिड़की जलके छूने से तत्काल उसकी देह छूटी देव देही पाई विमानों पर बैठ कर बैकुण्ठ को गई तब अजा ने कहा तुम्हारे में भी कोई ऐसा है ? जिसके वचन कर मैं भी अधम देह से छूटूं, तब उस ब्राह्मण ने कहा हां, उस नगर में एक साधू गीता पाठी था तिससे उस आठवें अध्याय का पाठ सुनवाया सुन कर अजा की देह छूटी देव देही पायकर कर बैकुण्ठ को गया और बोला हे विप्र ! तू भी गीता का पाठ कर, तुम्हारा भी उद्धार होयगा, तब विप्र भी गीता का पाठ करने लगा, श्रीनारायण जी कहे हैं हे लक्ष्मी ! यह गीताजी

के आठवें अध्याय का महात्म है सो तैने सुनिया है।
इति श्री पद्मपुराणे सतीईश्वर सम्वादे उत्राखंडे गीता महात्म नाम अष्टमो अध्याय ॥ ८ ॥

—:०:—

* अथ नावां अध्याय *

राज विद्या राज योग ।

श्री भगवानोवाच–श्रीकृष्ण भगवानजी अर्जुन को कहे हैं हे अर्जुन ! मैं गुह्य ते गुह्य परम गुह्य ज्ञान तेरे प्रति कहिता हूं तूं सुन, तेरे प्राति क्यों कहिता हूं कि तूं मेरे वचनों की निन्दा नहीं करता सत्य सत्य कर मानता है इसी से ज्ञान जिसके जानने से तूं संसार से निर्लेप रहेगा

सुनाता हूं॥१॥जितनीथा विद्या हैं और जो गुह्य वस्तु हैं तिनका भी जो ज्ञान राजा है और पवित्र से अति पवित्र है उत्तम से अति उत्तम है और अगम पुरुष जो किसी के कहे जानिया नहीं जाता तिसको प्रत्यक्ष दिखाऊंगा जिस ज्ञान के जानने से अति सुन्दर अविनाशी पुरुष पाईये है ऐसे ज्ञान को जो पावे है तिसकी बात सुन॥२॥हे परंतप अर्जुन ! जो ऐसे ज्ञान के जानने से बिना हैं सो प्राणी मुझको नहीं पावते बारम्बार संसार में जन्मते मरते हैं ॥३॥ अब अर्जुन और सुन, जिस ज्ञान की महिमा कही है सो सुन, हे अर्जुन ! मेरा जो अवगति स्वरूप है, जिससे

सारा जगत प्रकट हुआ है॥४॥और दूसरा जो मेरा विराट स्वरूप है तिस पर ब्रह्मा से आदि लेकर चींटी प्रयंत बसे हैं॥५॥सो किस भांत विराट परलोक बसे हैं सो सुन, जैसे एक बडे वृक्ष पर असंख पंखेरू बसत हैं तैसे ही मेरे विराट रूप पर लोक देहधारी भूतप्राणी बसते हैं॥६॥ और सब के हृदय में आत्माराम मैं ही बसूं हूं एक रूप तेरे रथ पर तेरे समीप कौतुक करे है, अर्जुन देख! मैं तुझको अपनी प्रभुता बडाई ईश्वरज योग कहा है सब भरण पोषणहारा भी मैं हूं सब से न्यारा भी मैं ही हूं सब वारता तेरे आगे कही है सब का उपजा-

वन हारा मैं ही हूं और निरलेप कैसा हूं इसका दृष्टान्त सुन, जैसे नित्य ही पवन का निवास आकाश में रहिता है और आकाश को स्पर्श नहीं करता तैसे सभी भूत प्राणी मेरे से ही उत्पन्न हुए हैं मेरे में ही बसते हैं और मैं ही सबके भीतर हूं और सबसे न्यारा हूं ऐसा निरलेप हूं ॥७॥ हे कुन्तीनन्दन! जब यह संसार अपनी मर्यादा लग पहुंचता है तब संसार प्रलय होकर मेरी प्रकृति जो माया है तिस में जाय लीन होता है फिर तिस माया और संसार का आदि मैं ही हूं फिर संसार को प्रकट करता हूं ॥८॥ और अपनी जो प्रकृति

माया है तिस में से बारम्बार संसार को प्रगट करता हूं पालन करता हूं प्रलय करता हूं और यह जो सभ भूत प्राणियों के गांव चुरासी लाख जीव योनीयों के हैं यह सब अपने वस नहीं माया के वस हैं अब अर्जुन और सुन, मैं संसार को उपजाता हूं संहार करता हूं पर इस कर्म किये का मुझ को लाछिन दोष नहीं लगता क्योंकि मैं किसी के साथ ममता मोह नहीं रखता। मैं निरमोही उदासीन हूं, इन सब से उदास हूं, इसी कारण से मुझ को कोई बन्धन नहीं बंध सक्ता है ॥९॥ हे कुन्तीनन्दन अर्जुन ! मेरी कृपा दृष्टि को

पाय कर तूं भी निरलेप न्यारा हो रहो आपको निर-
लेप जान अब अर्जुन सुन, यह जो मेरी प्रकृति माया
है, सो संसार जड़ जंगम को उपजावती है, प्रकट
करती है, दूसरा प्रकार संसार के उपजने का तूं मत
जान, ऐसा ईश्वर मैं ही हूं ॥१०॥ हे अर्जुन ! यह जो
मनुष्य देह मैंने धारण करी है सो मूढमति मूर्ख अज्ञानी
मुझको समझते नहीं मुझे पछानते नहीं जो श्रीकृष्ण
जी ऐसे प्रभु हैं सो प्राणी मेरे प्रताप को नहीं जानते
जो मैं कैसा हूं सब भूत प्राणियों का ठाकुर प्रभू हूं
जो पुरुष मुझको ऐसा नहीं जानते सो क्या फल पावते

हैं सो सुन, तिनकी आशा सब निष्फल है वोह जो कुछ भले कर्म दान पुण्य आदिक करते हैं सब निष्फल हैं ॥११॥ फिर कैसे हैं ? राक्षसों जैसे तिनके स्वभाव हैं वह प्रकृति के मोहे हुए मुझे नहीं पछानते ॥१२॥ जो भले पुरुष महात्मा भगत जन मेरा भजन करते हैं वोह कैसे हैं तिनकी बात सुन, तिनकी देवतियों जैसी प्रकृति है, मेरा भजन मुझको पछान कर करते हैं, कैसे पछान-कर करते हैं ? कि श्रीकृष्णजी सर्वके आदि हैं, ऐसा मुझ को पछान कर भजन करते हैं॥१३॥ अब भजन सुन, निरन्तर मेरी ही महिमा को गावते हैं पढते हैं कथा

कीर्तन करते हैं दृढ़ निश्चय साथ मेरी पूजा करते हैं बारम्बार मुझ को नमस्कार करते हैं इस प्रकार मेरा भजन करते हैं ॥१४॥ दूसरे ज्ञानी भगत हैं मुझ को किस प्रकार भजते हैं तिनका भी सुन, ज्ञानी मुझको जानते हैं जो एक परमेश्वर पारब्रह्म है। सो अनेक रूप होकर पसरिया है दूसरा भेद कोई नहीं एक ही है और कहां कहां वोह मुझको जानते हैं ॥१५॥ हे अर्जुन ! प्रकृति भी मैं ही हूं यज्ञ भी मैं हूं प्रकृति यज्ञ का नाम है पर तिन में कुछ भेद है स्वाहा और सुधा इन बचनों कर जो कुछ अग्नि में होमीये है एह बचन भी मैं ही हूं खीर से

आदि लेकर जो अन्न है सो भी मैं हूं, यज्ञों विखे जो मंत्र
पढते हैं सो भी मैं हूं॥१६॥विधाता भी मैं हूं वेदों विखे
ऊँकर मैं हूं ऋग यजुर साम आदि वेद भी मैं हूं उनकी
गती करता भी मैं हूं सखा भी मैं हूं ॥१७॥ निवास सोने
के ठाहर भी मैं हूं और संसार मेरी शरण है मैं ही सबका
मित्र हूं सब का प्रलय भी मैं ही करता हूं सब का उत्पत्ति
करता भी मैं हूं और यह विश्व मेरे में लीन होता है सर्व
बातों कर मैं पूर्ण हूं इस कारण से मेरा नाम निधि निधान
कहिये है ॥१८॥ सबका अविनाशी बीज हूं सूरज होकर
मैं ही तपता हूं प्रलय होकर प्रलय भी मैं ही करता हूं मैं

ही देवते अमर किये हैं और मनुष्यों से आदि लेकर सब शरीरों को मैंने ही मृत लगाई है ॥१९॥ हे अर्जुन! जो मनुष्य मुझको इस विधि कर पूजते हैं तिनके पाप काटे जाते हैं जो प्राणी यज्ञ कर स्वर्ग पावने की कामना करते हैं वह अपने पुण्य की मर्यादा लग स्वर्ग के दिव्य भोग भोगते हैं ॥२०॥ जब तिनका पुण्य क्षीण होता है तब स्वर्ग से गिरते हैं फिर मनुष्य लोक में जन्म पावते हैं जो इस प्रकार त्रिविध यज्ञ करते हैं स्वर्ग की कामना के लिये सो स्वर्ग के सुख भोगते हैं पुण्य भोगकर वहा से गिरकर फिर गर्भ में आवते हैं बहुत दुःख पावते हैं

और यह बात निश्चय है कामना वाले को सुख नहीं ॥२१॥ अब अर्जुन मेरे भगत की बात सुन, मेरे भगत मन का निश्चल चेता मेरे में राख कर स्वास २ मेरा स्मरण करते हैं तिनकी कल्याण निमित्त चारों ओर सावधान होकर फिरता रहता हूं इस प्रकार जैसे धनपात्र मनुष्य के घर के दुआले पहरू चौकीदार चौकी देता रहता है। हे अर्जुन ! तू जो मेरा भगत है ताते मैं तेरी देह की रक्षा करता हूं सो देख कैसा सावधान होकर तेरे रथ की रक्षा करता हूं और अपनी दिव्य महिमा कहकर तेरे मन को अपने में दृढ़ करता हूं और परम प्रीति साथ

तेरे रथ के घोडे हाकता हूं मैं ऐसे अपने भक्तों साथ प्रीति करता हूं हे कुन्तीनन्दन! मैं जैसा तेरे अधीन हूं ऐसे और किसी के अधीन नहीं॥२२॥ हे अर्जुन! जो मुझको छोड किसी और देवता की प्रीति साथ उपासना करते हैं सो मेरी ही पूजा करते हैं पर भूलकर करते हैं ॥२३॥ भूलकर क्यों करते हैं सो सुन, हे अर्जुन! सर्व यज्ञ भोगता मैं ही हूं और सर्व यज्ञों का प्रभु हूं जो मुझको ऐसा प्रभु ईश्वर नहीं जानते वह जन्मते मरते हैं ॥ २४ ॥ अब अर्जुन एक न्याय की बात सुन, जो कोई मनुष्य देवतियों का उपासक है सो देवलोक में जाय प्राप्त होता है जो

प्राणी पितरों का उपासक है सो पितर लोक में जाय प्राप्त होता है जो भूतों का उपासक है सो भूत लोक को प्राप्त होता है जो मुझ पारब्रह्म का उपासक है सो मेरे को आय मिलता है ॥ २५ ॥ हे अर्जुन ! मैं जो सालिग्राम हूं सो मेरा पाषाण मई प्रितमा, अथवा धांत की, सो जैसे चतुरभुज लक्ष्मी नारायण बैकुंठ में विराजता है सो इन विखे मेरे भगत प्रीति साथ पुष्प पत्र जल समर्पण करते हैं सो अपने भगतों का दिया प्रीति साथ लेता हूं ॥२६॥ जो तूं भोजन करता हुआ पहिले अग्नि में होमे है सो सब मेरे विखे समर्पण होता है ॥ २७ ॥

तिनका फल क्या पावे हैं जो संसार के भले बुरे कर्म तिनका फल सुखदुःख तिनके बंधन को काटकर सुखा होवेंगे ॥२८॥ हे अर्जुन ! मैं सब भूत प्राणियों के साथ एकसा हूं किसी देवता के भगत साथ मोह नहीं पर जो कोई भगत मेरा स्मरण करते हैं तैसे ही मैं तिनका स्मरण करता हूं ॥२९॥ अब अर्जुन और सुन, जो कोई अज्ञानी दुराचारी पापी है पर किसी समय आनंद होकर मेरा स्मरण करता है कि हे श्रीकृष्ण ! जी मैं जैसा कैसा हूं आपकी शरण हूं मैं तुम्हारा हूं। हे अर्जुन ! तिसको भी तू साधू ही जान जिस प्राणी मेरे साथ

निश्चय किया है तिसको साधू होते क्या लगता है मेरे भजन के आगे पाप क्या वस्तु है जैसे लकड़ियों की पोट को एक ओर अग्नि लगावें एक घडी में सब भस्म हो जाती हैं इसी प्रकार मेरे भजन के आगे पाप क्या वस्तु है ॥३०॥ तत्काल धर्मात्मा होय जाता है शान्ति पद को प्राप्त होता है हे कुन्ती नन्दन ! जो मुझको पाप जून भी होकर सुमिरे तो भी तर जाता है ॥३१॥ कौन कौन पाप जून ? स्त्री,वैश्य,शूद्र,सो प्राणी भी परमगति के अधिकारी होवेगें सो यह निश्चय जान जो मेरे भगत हैं तिनका नाश नहीं होता है ॥३२॥ हे अर्जुन ! ब्राह्मण

जो पुण्य जन्म हैं सो मेरा मुख हैं, क्षत्री मेरी भुजा हैं, तिनको कृतार्थ होना कुछ आश्चर्य नहीं, तिस कारण हे अर्जुन ! मनुष्य का देह तुझको प्राप्त हुआ है ऐसे देह को पायकर मेरा भजन कर अब मनुष्य देह का वृत्तांत सुन जो कैसी मनुष्य देह है जो सदा नहीं रहता। छिनभंगर है तत्काल बिनस जाती है रोगों का घर है हाड़ मांस से आदि अपवित्र वस्तुओं से पूर्ण है। यह तो मनुष्य देह के अवगुण हैं ॥३३॥ अबइस देही की बडाई सुन, जब यह जीव भ्रमता २ मनुष्य देह में आवे है तब मेरे जानने का ज्ञान पावे है मुझे पछान कर मेरा स्मरण करता

है मेरे भजन के प्रताप कर मेरे परमानन्द अविनाशीपद
विखे जाय प्राप्त होता है मेरे पद की दाता यह मनुष्य
देह ही है इसकी वडाई कही है इसी कारण से हे अर्जुन
यह देह तुझे प्राप्त हुई है इसको पाकर मेरा भजन कर
अब भजन सुन, मन का दृढ़ निश्चय मेरे विखे राख, मेरा
भगत हो, मेरी पूजा कर, मुझको नमस्कार कर, इस प्रकार
निश्चय कर भजन कर (ऊँनमो भगवते वासुदेवाय)
ऐसे मेरा भजन स्मरण कर मेरे साथ ऐसा मिलेगा जैसे
पानी साथ पानी मिल जाता है इसी प्रकार मेरे साथ
अभेद हो ॥३४॥ इति श्री भगवद्गीता सूपनिपद्० नवमो अध्याय: ॥

* अथ नवमें अध्याय का महात्म *

श्रीनरायणोवाच–हे लक्ष्मी ! तू श्रवण कर दक्षिणदेश में एक भाव सुशर्मा नाम शूद्र था बडा पापी मास मदरा अहारी था जुआ खेले चोरी करे परस्त्री रमे ऐसा पाप कर्मी था एक दिन मदरा पान से तिस की देह छूटी वह मरकर प्रेत हुआ एक बडे बृक्ष पर रहे एक ब्राह्मण भी उमी नगर में रहता था दिन को भित्ता मांगकर स्त्री को लै जाय देवे उसकी स्त्री बडी कलैहनी थी वह कभी किसीको भिक्षा भी न देवे समय पायकर उन दोनों ने प्राण त्यागे वह दोनों मरकर प्रेत हुए वह भी उसी बृक्ष

के तले आय रहे जहां वह आगे प्रेत रहता था वहा रहते कई काल व्यतीत हुआ एक दिन उसकी स्त्री पिशाचनी ने कहा हे पुरुष पिशाच ! तुमको कुछ पिछले जन्म की खबर है ! तब पिशाच ने कहा सब खबर है मैं पिछले जन्म ब्राह्मण था तब पिशाचनी ने कहा तैंने पिछले जन्म में क्या साधना करी थी जिससे तुझको पिछले जन्म की खबर है। तब उसने कहा मैं पिछले जन्म एक ब्राह्मण से अध्यातम कर्म सुना था तब फिर पिशाचनी ने कहा तैंने और कौन साधना करी थी और वह ब्राह्मण कौन था और वह अध्यातम कौन कर्म है, जिसके सुनने से तुझ को

पिछले जन्म की खबर रही, तब पिशाच ने कहा मैंने और कोई पुण्य नहीं किया गीताजी का श्लोक श्रवण किया था उसका प्रयोजन यह है कि एक समय अर्जुन ने श्रीकृष्णजी से तीन बातें पूछीं थीं जो गीता के नौवें अध्याय में लिखा है वह तीन बातें पिशाचनी ने पिशाच से श्रवण करीं इन बातों के सुनते ही एक प्रेत उस वृक्ष से निकला उसने कहा री पिशाचनी यह तीन बातें फिर कहो जो अब कह रही थी पिशाचनी ने कहा तू कौन है मैं तुझे नहीं सुनाती मैं अपने भर्त्ता से पूछती हूं कि वह ब्राह्मण कौन था। वोह कर्म कौन था जिससे पिछले जन्म की

खबर रही इन बातों के सुनते करते ही प्रेत देही छूटी तब ब्राह्मण ने कहा हे साधु ! एह श्लोक गीता का है जिसके सुनने से पिशाच और पिशाचनी की देह छूटी तत्काल देव देही पाई स्वर्ग से विमान आये तिन पर चढ कर बैकुण्ठ को गमन करते हुए जाते २ रास्ते में देवतियों ने रोक लिया कहा तुमने ऐसे कौन उग्र पुण्य किये जिनके करने से इतने शीघ्र बैकुराठ को चले हो तीरथ इश्नान ब्रत तपस्या दान पुण्य ऐसा कोई नहीं हुआ जिसका सदैव फल तुमको मिला है। श्रीनारायण जी की भगति भी नहीं करी, कौन करनी केबल कर बैकुण्ठ

को जाते हो। तो उन्होंने कहा एक ब्राह्मण के मुख से हमने श्रीगीता जी का अर्ध श्लोक श्रवन करा है तिसके प्रताप कर बैकुण्ठ को जाते हैं तब देवतियों ने सुनकर कहा कि श्रीगीता जी का ऐसा प्रताप है जिसके आधे श्लोक श्रवण से ऐसे जीव बैकुण्ठवासी हुए हैं तब वोह तीनों जाय बैकुराठ में प्राप्त हुए। श्रीनारायण जी ने कहा हे लक्ष्मी! यह नौवे अध्याय का महात्म है जो तैने श्रवण किया है।

इति श्री पद्मपुराणे सतीईश्वर सम्बादे उत्राखंडे गीता महात्मो नाम नवमो अध्याय ॥ ९ ॥

—:०:—

* अथ दसवा अध्याय *

विभूति योग।

श्रीभगवानोवाच—श्रीकृष्णजी अर्जुन प्रति कहे हैं, हे महाबाहू अर्जुन! फिर भी तूं मेरा परम वचन सुन मैं तुझको कहता हूं क्यों कहता हूं जो इसे सुनने की तुम्हें प्रीति है सो मैं तेरे कल्याण के निमित्त कहूंगा ॥१॥ हे अर्जुन! ऐसी मेरी प्रभुता का प्रभाव और प्रताप है तिसको तूं भले प्रकार जानता है ब्रह्मा से आदि लेकर महादेवजी और असंख्य जो मुनीश्वर हैं सो भी नहीं जान सकते क्यों नहीं जान सकते सो सुन सर्व देवतियों

के आदि मैं हूं यह देवता सभ मेरा ही रूप हैं सो मेरे से उपजे हैं यह बात प्रगट है कोई किसी से उपजता है सो उपजावन वाले की बात को उपजिया हुआ क्या जाने तिसका दृष्टान्त सुन जैसे माली बाग में वृक्ष लगावे है सो वृक्ष माली का क्या कर्म जाने ऐसे जो ऋषि मुनि और देवता हैं सो मेरे प्रताप को नहीं जानते जिस मेरे प्रताप को देवता ऋषि मुनि नहीं जानते सो तुझको कहि सुनाता हूं ॥२॥ जन्म मरण से रहित अनादि हूं मेरा आदि नहीं सभ का ईश्वर हूं जो पुरुष मुझको ऐसा जानते हैं तिनको क्या फल होवे है अर्जुन सो ज्ञानी

सब पापों से मुक्त होगया जान ॥३॥ और सुन बुद्धि ज्ञान निरमोह क्षमा सच बोलना इन्द्रियों का जीतना सुख दुःख कवी होना कवी न होना भय से निरभय होना ।४। दया ममता में संतुष्ट तपस्या दान अपयश यह सभी लक्षण मनुष्यों में पाये जाते हैं ॥५॥ हे अर्जुन! मैं इन से न्यारा हूं और जिस प्रकार सब का उत्पात्ति करता हूं सो भी सुन, कमल नाम नारायण जो मैं हूं सो मेरे नाभ कमल से मेरा अंश जो ब्रह्मा सो उपजाता हुआ तिस ब्रह्मा की इच्छा से सप्तऋषि चार मुनी चौदा मनु उपजे फिर सप्तऋषि चार मुनी और देवातिया से आदि मनुष्य

राक्षस असुर सभी प्रजा सृष्टि हुई है॥६॥ हे अर्जुन! सभी
संसार अनेक भान्ति कर पसारा इसका आदि करता
मुझ को जाने से निश्चल योग प्राप्त होता है इस में संशय
कुछ नहीं यह सत्य है ॥७॥ हे, अर्जुन! सभ का उत्पत्ति
कर्ता मुझ को जान पर घुम्यार की न्याई करता नहीं,
घुम्यार तो वासन घडे, पर माटी पृथ्वी से लेता है पृथ्वी
से माटी ना लेवे तो घुम्यार के वासन नहीं बनते और
मैं कैसा हूं एह जो सृष्टि उत्पत्ति करी है ॥८॥ किसी दूसरी
ठौर से लेकर नहीं उपजाई आप से आप सृष्टि उपजाई
है आपही सुधारी है मेरे ज्ञानी भगत ऐसा मुझे जानकर

भाव श्रद्धा साथ मेरा भजन करते सुनते हैं ।९। हे अर्जुन! मुख्य तो मन का निश्चल चेता मेरे में राखते हैं मेरी प्रीति में तिनके प्राण भी चले जाते हैं पर संसार की कोई बात तिनको चित्त नहीं आवती और आपस में एकान्त बैठ कर मेरी गोष्ट करते हैं नित्य मेरी कथा सुनते हैं जो २ मेरी कथा सुनते हैं तिसी २ में जायकर रमते हैं मेरे गुणों को सुन कर सन्तोष सुख पावते हैं निरन्तर मेरा भजन प्रीत साथ करते हैं और मैं तिनको बुद्धि योग दान करता हूं सो कौन बुद्धि योग है जिसको पाय कर मुझ को आये मिलते हैं ॥ १० ॥ हे अर्जुन !

तिन पर एक और भी कृपा करता हूं सो क्या तिनके हृदय में अपनी महिमा का ज्ञान रूप दीपक जगाय कर प्रकाश कर देता हूं तिसी प्रकाश के होने कर तिन की जीव बुद्धि का नष्ट हो जाता है ॥११॥ यह बचन श्रीमुख से सुन कर अर्जुन पूछता है। हे श्रीकृष्ण भगवान जी! तुम पारब्रह्म हो क्या सभ से परे हो। हे प्रभु जी! तुम परमधाम हो परमधाम क्या धाम नाम घर का जिस का धाम बैकुंठ सभ से परे है और धाम नाम तेज का भी है॥१२॥और जी तुम पवित्र हो क्यों जिन आपके चरणों से गंगा से आदि तीरथ प्रगटे हैं

जो सभ को पवित्र करते हैं ऐसे तो परम पवित्र हो सर्वव्यापी हो पुरातन हो पहिलियों से भी पाहिले हो दिव्य हो किसी ने तुझको किया नहीं तुम ने सब को किया है हे प्रभु जी ! यह महिमा आपकी सर्व ऋषिमुनी करते हैं प्रभु जी ! तुम अपनी मुख कीर्ति को सर्व प्रकार आप ही जानते हो अपना प्रताप सब कहे सुनावो पीछे कुछ ना रखो अपने आत्मा की दिव्य विभूति श्रवण करावो जिस विभूति को विस्तार कर व्यापक हो कर विराज रहे हो ॥१३॥ हे महाप्रभु जी ! जो जन हैं तुम्हारे कौन २ भावों विखे चितवना करें यह सारे

ब्रह्माण्ड जो हैं तिसमें अस्थावर जंगम भूत प्राणी विचरते हैं
खेलते हैं सो यह तुम्हारी रचना को देखकर तुम्हारा भजन
करता हूं ॥१४॥ हे प्रभुजी ! तुम्हारे मुखकमल से तुमारी
महिमा जो अमृतरूप है तुमसे सुनकर मुझको आनन्द
होता है अपनी महिमा दिखावो हे केशवजी ! सो मुझको
श्रवण भी करावोजी ॥१५॥ हे भगवान ! जितनी जिस
की बुद्धि है उतनी ही कही है पर जैसी तुम्हारी महिमा
मर्यादा प्रभुता है तैसे तिनके जानने को देवता ऋषि
मुनीना कोई और ही समर्थ है ॥१६॥ हे पुरुषोत्मजी ! तिस
अपने आपकी और अपनी मर्यादा तुम आप ही जानते

हो सो तुम कैसे हो सब भूतों के उत्पत्ति करता हो सब
के ठाकुर हो सब के देव हो सब संसार के प्रभु हो ।१७।
हे प्रभुजी ! तुम अपनी भक्तिसे तृप्त हो अब कृपा करके
अपनी विभूति वा महिमा का श्रवण करावो मैं देखूं जो
कितनीक तुमारी प्रभुता है और कितनी प्रभुताके तुम प्रभु
हो ॥१८॥ अर्जुन की बिनती मानकर श्रीकृष्ण भगवान
जी बोले । हे पांडवों में श्रेष्ठ अर्जुन ! मैं तुमको दिव्य
विभूति कहता हूं पर सारे विस्तारका अन्त कुछ नहीं
अब दिव्यसे भी दिव्य विभूति कहता हूं तिसका दृष्टांत
सुन जैसे किसी चक्रवर्ती राजाका द्वीप नगर होवे तिस

बड़े प्रांतके मनुष्य गिने नहीं जाते तिसके सारे नगरोंसे
दस बीस घर परवार समेत चुन लेवें तिन घरों में से श्रेष्ठ
एक एक मनुष्य चुन लेवें इसी प्रकार मैं कहता हूं हे अर्जुन!
मेरे शरीर विस्तार का कुछ अन्त नहीं है सारा विस्तार
सुन ॥१९॥ हे गुडाकेश अर्जुन! सारे संसार का आत्मा
तूं मुझको जान और सब भूत प्राणियों के हृदय विखे
मैं ही बसता हूं अब सबका आदि अन्त मध्य तूं मुझको
जान यह तो प्रभुता थोड़े में कही ॥२०॥ अब दिव्य
और प्रधान प्रताप सुन बारां सूरज जो प्रति मास २ में
प्रकाशते हैं उनमें पोह के महिने का विष्णु नामा सूरज

मैं ही हूं जितनी प्रकाश करने वाली वस्तु हैं तिन सब
में सूरज मैं हूं और उनिंजा पवनों में मरीची नाम पवन
मैं हूं और अठाई नक्षत्र जो हैं तिन में चन्द्रमा मैं हूं।२१
चारों वेदों में सामवेद मैं हूं और तेतीस क्रोड़ देवतियों
में इन्दर हूं इन्द्रियों में ग्यारवां मन मैं हूं ॥ २२ ॥
और जो कुछ भूत प्राणियों में चेतना है सो मेरी है
यारां रुद्रों में शंकरनाम रुद्र मैं हूं दानियों में कुबेर
मैं हूं आठों वसु जो हैं तिन में अग्नि मैं हूं सब पर्वतों
में चार लाख कोस ऊंचा सोने का सुमेरू पर्वत मैं
हूं ॥२३॥ प्रोहितों में देवतियों का प्रोहित बृहस्पति मैं हूं

सब सेना के नायकों में शिवजी का बेटा स्वामी कार्तिक
मैं हूं सरोवरों में सागर मैं हूं ॥२४॥ सप्तऋषियों में भृगु
मैं हूं अंगरा भी मैं हूं जितने बोलने वाले बचन हैं तिन में
ओंकार मैं हूं और मेरे प्रसन्न करने पोषनहारे जो समग्र
यज्ञ है तिन में मौन होकर मेरा भजन करना सो जप
यज्ञ जो है सो मैं हूं जितने स्थावर ठौर से चलाये नहीं
चलते तिनों में हिमालय पर्वत मैं हूं ॥२५॥ बृक्षों में
पीपल मैं हूं देवों में नारद मैं हूं ऋषियों में चितरथ मैं
हूं और साधों ऋषियों में कपिल मुनि मैं हूं ॥२६॥ और
घोड़ियों में खीर समुद्र के मथने से जो अमृत के साथ

निकला है जिसका नाम उचिश्रवा है सो घोडा मैं हूं और हाथियों में ऐरावत मैं हूं नागों में अनन्त जो शेषनाग है सो मैं हूं नदियों में गंगा मैं हूं सप्त समुद्रों में खीर समुद्र मैं हूं जलों में जो जल का राजा वरुण है सो मैं हूं और मनुष्यों विखे राजा मैं हूं ॥२७॥ और शस्त्रों में वज्र मैं हूं और गौओं में कामधेनु मैं हूं और जितने प्रजा के उपजावनहारे हैं तिनों में काम मैं हूं और सर्पों विखे वासक नाग मैं हूं ॥२८॥ और दण्ड दायकों में यम मैं हूं और मृगों विखे सिंह मैं हूं पितरों में अर्यमा मैं हूं ॥२९॥ दैत्यों में प्रहलाद मैं हूं निगलने हारयों

में काल मैं हूं सब पंखेरुओं में गरुड मैं हूं ॥३०॥ उछलने हारियों में पवन मैं हूं शस्त्रधारियों में परसराम मैं हूं नदियों में मूल जो है श्रीगंगा गौमुखी सो मैं हूं॥३१॥हे अर्जुन! सब संसार का मूल आदि अन्त मध्यम मुझको ही जान और सब विद्याओंमें अध्यात्म विद्या मैं हूं अध्यात्मविद्या कौन है सो सुन सब आत्माओं का अधिकारी इस से मेरा नाम अध्यात्म विद्या है सब का अधिकारी ठाकुर मैं हूं सो यह अध्यात्म विद्या तू मुझको जान जितने गोष्ट करने हारे झगड़ा करने हारे हैं जहां मेरी गोष्ट चर्चा होवे तहां तू मुझको जान ॥३२॥ व्याकरण में जो समास है तिस

में द्वन्द समास मैं हूं अक्षर अविनाशी मैं हूं काल का भी काल हूं और संसार की अनेक प्रकार रचना रचने हारा हूं जो सब खाने वाले हैं तिन में मृत मैं हूं जो सब के देखते ही जीव को चुराये ले जाती है ॥३३॥ और स्त्रियों में जो कीर्ति, श्री, बाणी, स्मृति, मेधा, धृति तथा क्षमा यह सब स्त्रिया मैं हूं ॥ ३४ ॥ सामवेद के गान में बिरहत साम मैं हूं छन्दों में गायत्री छन्द मैं हूं बारा महिनियों में मद्घर मास मै हूं छे ऋतु में वसन्त ऋतु मैं हूं ॥३५॥ कपट में जूआ मैं हूं सब तेजों में जो तेज है सो मैं हुं जहा दो

दल इकट्ठे होते हैं युद्ध करने को जहा जीत होवे तहा
मैं हूं जो उदमीयों में उदम है सो मैं हूं जो बलवन्तों में
बल है सो मैं हूं ॥३६॥ चन्द्रवंशी जो है यादव तिन
में वासुदेव मैं हूं पाण्डवों में जो हे अर्जुन ! तूं है सो
मैं हूं मुनियों में व्यासदेव मैं हूं कवी जो हैं चतुर तिन
में उशन कवि मैं हूं॥३७॥ जितने दमन करन हारे हैं
तिन के दण्ड मैं हूं जो जीतने की इच्छा वाले हैं तिनम
धर्म्म युद्ध मैं हूं जो पावने की वस्तु हैं तिन में चुप म
हूं और जो सर्व ज्ञान का रूप है सो मैं हूं ॥३८॥ सब
अन्नो विखे मैं हूं त्रिण की जो सब जाती हैं तिन में

दर्भ(कुशा)मैं हूं हे अर्जुन ! जो सब भूत प्राणी हैं तिन सब का बीज मैं हूं तूं मुझ ही को जान मुझ बिना और कुछ नहीं मैं सर्वव्यापी हूं॥३९॥ हे अर्जुन ! मैंने तुझको प्रधान और दिव्य विभूती कही हैं तिनका अन्त कोई नहीं यह विभूति तुझको किस भांति कही हैं जैसे सब बागे जोडे पहिरने वाले में एक तन्तु काढ दिखाइये तिसी भात इह विभूती कही है॥४०॥ अब अर्जुन और सुन जो कोई विभूतिवन्त हैं शोभावन्त प्रतापवान जीव हैं तिन को मेरे तेज से उपजिया जान ॥४१॥ हे अर्जुन ! यह थोडा सा ज्ञान है और जानना क्या वस्तु है एह तो

एक ब्रह्मराड की विभूती कही सो सब की सामग्री कही
नहीं गई ऐसे ही असंख ब्रह्मराड हैं नाना प्रकार की
विभूतियों से भरे हुए मेरे से निकल कर पसरे जान
सो मेरे से किस प्रकार निकसे हैं जैसे जल कर सम्पूर्ण
समुद्र से एक बून्द रेत के दाने पर पडे सो तिसी दाने
को भिगोवे है पीछे समुद्र पूर्ण भरिया है इसी भांति
अनेक ब्रह्मराड मेरे से निकले हैं मैं पीछे पूर्ण हूं एह जो
विभूति कही अब अर्जुन मैं तेरे रथ पर विराजता हूं,
इस रूप मेरे स्वरूप की महिमा बडियाई सुन, मेरा
आदि, अन्त, मध्य नहीं पूर्ण ब्रह्म परम धाम पुरुषरूप

तेरे रथ पर विराजता हूं ॥ ४२ ॥

इति श्रीभगवद्गीता सूपनिषद्• श्री कृष्ण अर्जुनसम्वादे विभूतियोगां नाम दशमो अध्याय ॥१०॥

* अथ दसवें अध्याय का महात्म *

श्रीनारायणोवाच—हे लक्ष्मी ! दसवें अध्याय का महात्म कहता हूं तूं श्रवण कर जिस के सुनने से महा पापियों की गति होए बनारस देश वहां एक धीरजी नाम ब्राह्मण रहता था धर्म्मात्मा हरि भक्त एक दिन विश्वेश्वर महादेवजी के दर्शन को जाता था गरमी की ऋतु थी उसको धूप लगी घबराया उसका जी थोडा होने लगा अन्धाली खाय कर मन्दिर के निकट गिर

पडा इतने में भृङ्गी नाम गण आया देखे तो ब्राह्मण अचेत मूरछा पडा है उसने जाकर शिवजी से कहा हे महादेव जी ! एक ब्राह्मण आपके दर्शन को आया था वह मूरछा में पडा है महादेव सुनके चुप कर रहे उस गण ने जब ब्राह्मण को फिर आय देखा तो वोह मरा पडा है फिर जाकर कहा हे स्वामी यह चरित्र मैंने देखा है इसने कौन पुण्य किया जिस से भली जगह मृत्यु पाई है चारों बातें इस को भली आय बनी हैं एक बनारस क्षेत्र श्रीकाशी जी गंगा जी का अश्नान सन्तों का और विश्वेश्वर जी का दर्शन अन्न का छोडना एकादशी का दिन यह बात

तूं मेरे पास आओ मैं तुझको देखता हूं तू कौन है तब चतुर भुज रूपधार श्याम सुन्दर एक पारखद आया कहा हे स्वामीजी ! तुम इस कमलनी से पूछो सो यह कमलनी कहेगी कमलनी कहे हे शिवजी महाराज ! मैं अपने पिछले जन्म की कथा कहती हूं सुनो जो, पिछले जन्म मैं अपसरा थी नाम पदमावती था एक समय श्रीगङ्गाजी के किनारे ब्राह्मण अश्नान करके श्रीगीता जी के दसवें अध्याय का पाठ किया करता था एक दिन राजा इन्दर का आसन चला इन्दर ने देखा यह ब्राह्मण गीता पाठी है तब राजा ने मुझे आज्ञा करी

तू जाके उस ब्राह्मण की तपस्या भङ्ग कर, आज्ञा पाय कर उस ब्राह्मण के पास गई जाकर देखा वोह ब्राह्मण एकान्त बैठा है अचानक ही मेरी उस ब्राह्मण से भेंट हुई मेरे अंग से अंग लगा उस ब्राह्मण ने मुझे श्राप दिया कहा है पापिनी ! तू कमलनी हो उसी समय मैं कमलनी हुई तब ब्राह्मण ने कहा जैसे सर्प के अंग हैं तेरे भी पांच अंग हैं दो कमल चरणों के दो कमल हाथों के एक कमल मुख की जगह इस मानसरोवर में साठ हजार भौंर रहता है सो मेरी वासना कर तृप्त हुए रहिते हैं यह बात कही नहीं जाती यह मेरा प्रकाश हो रहा है

जो कोई मेरे ऊपर से लंघता है भस्म हो जाता है कमलनी ने कहा हे हंस ! तू कौन है ? यहां क्यों आया है, हंस ने कहा हम चार हंस ब्रह्मा के वाहन हैं तिन में से एक मैं हूं मान सरोवर के मोती चुगने की आज्ञा हुई थी वहा को जाता था रास्ते में मैंने कहा शिवजी का दर्शन करता चलूं तेरे को उलंघिया तां मैं सुफेद से काला हो गया आकाश से गिर पड़ा, कमलनी ने कहा मैं पहिले एक ब्राह्मण के घर कन्या थी मैंने एक करबई का बच्चा पाला था वोह बहुत अच्छी बोली बोलता था मैं तिसको पढाया करती थी एक दिन

मेरा भर्ता आया मैं उठ कर उसका आदर न किया उस ने कहा तू उठ कर रसोई कर मैं उसके लालच से ना उठी बहुत चिर लगा तो भर्ता ने सराप दिया कि तू कमली हो, उसकी सुध मुझ को अब तक है पर वोह गीता के दसवें अध्याय का पाठ करता था मैंने भी कण्ठ किया था अब मैं तिसका पाठ करती हूं तिसी कर मेरा आति शै तेज है यह पाठ का फल है हंस ने कहा मेरा श्याम वर्ण से श्वेत होवे, तू इस कमलनी की देह से छूटे, देव देही पावें, तब कमलनी ने कहा कोई जी गीता के दसवें अध्याय का पाठ सुनावे तब

उद्धार होएगा, तब एक ब्राह्मण ने उस सरोवर में अश्नान कर सालग्राम का पूजन कर दसवें अध्याय गीता का पाठ किया, उस हंस और कमलनी ने सुना तब उनका उद्धार तत्काल भया, हंस श्वेत हुआ कमलनी देव कन्या हुई दोनों ने हाथ जोड कर नम्र होकर नमस्कार करी और ब्राह्मण से कहा तुम धन्य हो, जो हमको कृतार्थ किया उस ब्राह्मण ने पूछा यह क्या हुआ ब्राह्मण से कमलनी ने पिछली वारता कह सुनाई और कहा आप के पाठ सुनने से हमारी कल्याण हुई है हमको आशीर्वाद करो कृतार्थ रूप होकर दोनों देव

लोक को प्राप्त हुए श्रीनारायण जी कहते हैं हे लक्ष्मी! यह दसवें अध्याय का महात्म है जो तैने सुना है।

इति श्रीपद्मपुराणे सतीईश्वर सम्वादे गीतामहात्मने नाम दसमो अध्याय ॥१०॥

* अथ ग्यारहवां अध्याय *

विश्व रूप दर्शन

अर्जुनोवाच—अर्जुन श्रीकृष्ण भगवान जी से बिनती करता है हे प्रभु जी! तुमने अपना गुह्य प्रताप श्रवण कराया है सो आपकी कृपा मे सुनने से मेरा मोह दूर होगया है ॥१॥ संसार उपजना और प्रलय होना मैंने विस्तार पूर्वक सुना है ॥२॥ सो हे कमल लोचन

जी ! आपके अविनाशी आत्मा की महिमा मैंने श्रवण
करी है ॥३॥ हे पुरुषोत्म जी ! आपके अविनाशी आत्मा
के साथ मेरी प्रीति है सो आप मेरी बेनती मानो हे
प्रभुजी ! अपने अविनाशी आत्मा का दर्शन करावो ।४।
अर्जुन की बेनती मानकर श्रीकृष्ण भगवान जी बोले
श्रीभगवानोवाच–हे अर्जुन ! तूं मेरा रूप भी देख और
ही और वर्णों के रूप देख नाना प्रकार कीया प्रकृतियां
देख ॥५॥ कई वसू कई अश्वनी कुमार कई पवन देख
जो तैने आगे नहीं देखे हे भरतवंसीयों में श्रेष्ठ अर्जुन !
बहुत भात के आश्चर्य देख ॥६॥ हे गुडाकेश अर्जुन !

सब संसार इकट्ठा देख मेरी देही विखे अस्थावर जंगम और जो कुछ देखने की इच्छा है सो भी देख ॥७॥ पर हे अर्जुन ! इन नेत्रों कर देख ना सकेगा इस से तुझको दिव्य नेत्र देता हूं तिनकर मेरा दिव्य ईश्वरयोग देख ॥८॥ सञ्जय उवाच—सञ्जय धृतराष्ट्र को कहता है हे राजन् ! महा योगीश्वरों के ईश्वर श्रीकृष्ण भगवान जी तिन्होंने यह बचन कहकर तत्काल ही अर्जुन को परमरूप ईश्वर दिखाया ॥९॥ जिस स्वरूप में अनेक ही मुख हैं और अनेक ही दिव्य नेत्र हैं अनेक ही दिव्य अद्भुत दर्शन हैं अनेक ही भूषण पेहरे हैं अनेक प्रकार

के शस्त्र हैं॥१०॥ अनेक गल विखे माला दिव्य सुगन्धता साथ लेपन किये हुए रूप सभी आश्चर्य हैं और अनन्त सर्व ठौर में मुख ॥११॥ जो आकाश विखे एक ही बार सहस्त्र सूरज प्रकाश कर दिखावे सो तिनके प्रकाश से भी अधिक भगवान् के विश्वरूप का प्रकाश हुआ॥१२ तहां सारा जगत्त इकट्ठा ही अनेक प्रकार का देवों के देव जो श्रीविष्णु भगवान् जी हैं पाण्डव अर्जुन के देखकर रोम खडे होगये॥१३॥आश्चर्य हुआ नमस्कार किया दोनों हाथ जोडकर कहता है ॥ १४ ॥ अर्जुनोवाच—हे देवन के देव श्रीकृष्ण भगवान् जी ! मैं

तुम्हारी देह विखे अनन्त रूप देवता देखता हूं और
जी तुम्हारी देह विखे दिव्य सर्पों को देखता हूं ॥१५॥
और जी तुम्हारा आद मध्य अन्त नहीं देखता हे
विश्वेश्वर ईश्वर ! ऐसा तुम्हारा विश्वरूप है ॥१६॥
अनन्त जो तुम्हारे सिर हैं तिनके मैं अति सुन्दर
मुकुट देखता हूं अति सुन्दर कितनेक हाथ जो हैं
तिनमें गदा शंख चक्र देखता हूं और मैं तुम्हारे तेज
के प्रकाश से जो पर्वतों के तुल्य हैं देखता हूं सर्व
दिशा में तुम्हारा प्रकाश देखता हूं इस तुम्हारे विश्व-
रूप को देख नहीं सक्ता हूं ॥१७॥ कैसा है रूप जैसे

प्रबल अग्नि जलती है जैसे असंख्य ही सूर्य्य चढे हैं
तैसे अमृत बेमर्याद आपका तेज है और जो तुम अक्षर
अविनाशी हो सब से परे हो तुम जानने योग्य हो
॥१८॥ अनेक २ प्रकार की रचना तिसते पूर्ण पहिले
से पहिले हो धर्म की रक्षा करते हो सनातन पुरुष
पुरातन हो मेरे मत विखे तो तुम ऐसे ईश्वर हो अनादि
हो आपके बल का कुछ अन्त नहीं इससे तुम्हारा
नाम पराक्रम है अनन्त ही तुम्हारी भुजा हैं अनन्त
ही नेत्र अनन्त मुख हैं तिन मुखों में अग्नि जलती
देखता हूं तिस अपने तेज प्रकाश कर सारी विश्व को

प्रकाश करते हो ॥१९॥ और धरती आकाश में तुम्हारा एक ही रूप व्याप रहा है इस तुम्हारे अद्भुत भयानक रूप को देख कर तीनों लोक डरते हैं ॥२०॥ और कई कोट देवते तुम्हारे में प्रवेश करते देखता हूं कई कोट देवता तुम्हारे सामने हाथ जोडे कांपते देखता हूं तुम्हारी स्तुति करते हैं और कई कोट ऋषीश्वर तुम्हारे से डरते हुए आशीर्वाद करते हैं जो ॥२१॥ हे ईश्वर! तुम्हारी जय होवे तुम चिरञ्जीव होवो कई ऋषीश्वर सिद्ध तुम्हारी स्तुति करते हैं कई पुष्प चढ़ावते हैं कई पुष्पों की वर्षा करते हैं और तुम्हारे इस रूप को देख-

कर जो कई लोक डरते हैं तिनको कई मुनीश्वर कहिते हैं। हे लोगो तुम मत डरो ईश्वर परमदयालु है और रुद्र देखता हूं और कई साध देखता हूं कई ब्रह्मा कई प्रजापाति कई पवण कई कोट दैत्य कई प्रकार की विश्व देखता हूं ॥२२॥ और कई इस तुम्हारे रूप को देखकर विस्मय हुए देखता हूं कई नेत्र और बडीया भुजां बहुत ही तुम्हारे उरूस्थल देखता हूं तुम्हारे चरण बहुत हैं उदर और मुख तिनमें भयानक दाडां देखता हूं इस रूप को देखके बहुत डर गये हैं मैं भी डरता हूं ॥२३॥ फिर तुम कैसे हो आकाश को छुह रहे हो ठौर

ठौर कई सूर्य्य प्रकाश रहे हैं अनेक ही तुम्हारे रंग हैं
॥२८॥ अनेक ही नेत्र हैं जिनमें से हमां प्रलय की अग्नि
के पर्वत बलते हैं हे प्रभुजी! यह भयानक रूप देखकर
मेरा आत्मा डर गया है धीरज भी नहीं धर सकता हे
भगवान! अब बस करो जी बसकरो अव प्रसन्न होवो जी
॥२९॥ हे प्रभुजी! महां प्रलय की अग्नि समान तुम्हारे मुख
में दाडां देखता हूं अब मुझे दिशा भी भूल गई हैं मैं
जानता नहीं पूरब पश्चिम कहां हैं। शान्ति भी नहीं
पाता हूं। हे जग निवास! हे जगत के आसार, अब
बस करो देखो तुम्हारा विश्वरूप अब प्रसन्न होवो जी

धृतराष्ट्र के पुत्र की सेना के जो योद्धा हैं राजे इनमें मुख्य जो हैं भीष्म द्रोणाचार्य और कर्ण इन से आदि जो हैं सबी सो अग्नि के पर्वतो जैसे तुमारे मुख में पडते देखता हूं ॥२६॥ महां भयानक जो तुमारे मुख में दाडां हैं सो कितने एक जोधो के सिर उन दाढों में लट-कते देखता हूं ॥२७॥ फिर कैसे हैं ज्यों नदी के प्रबाह बहुत वेग के साथ समुद्र में आये पडते हैं उसी भांत यह योधे तुमारे मुख में पडते देखता हूं ॥२८॥ जैसे प्रबल आग्नि जलती है तिसमें बडे उतावले उतावले पतंगे आए पडते हैं तैसे ही बडे वेग के साथ योधा

पडते हैं ॥२९॥ और जो तिनको स्वासों से निगलते जाते हो महा अग्नि साथ भरे हुए तुमारे मुख जो हैं तिन मुखों कर संसार को तपावते हो ॥ ३० ॥ और तुमारे तेजकर सारी विश्व भर रही है हे श्रीकृष्ण जी ! मैं तुमारा मुख देखता हूं तुम एकही भयानक रूप धारकर सारी विश्व को भर रहे हो हे देवों के देव जी ! तुझको मेरा नमस्कार है बस्स जी बस्स अब प्रसन्न होवो जी जो तुमारा आदि अन्त मैं पाया चाहता था सो नहीं पासक्का तुमारा आदि अन्त होवे तो पाईये आप बे अन्त हो ॥३१॥ अर्जुन के वचन सुनकर श्रीभगवान्

जी बोले । श्रीभगवानोवाच ॥ हे अर्जुन ! इस समय इन लोकों का काल रूप मैं ही हूं यह मैंने बडा रूप धारिया है इन लोकों के नाश के निमित्त यह जो दुर्योधन की सेना के योधा हैं जो मुख्य २ देखते हो सो तुझ एक के बिना यह सभी नहीं होवेंगे इन को ग्रास कर लूंगा ॥३२॥ इस कारण से हे अर्जुन ! उठखडा हो यश ले इन सब शत्रुओं को जीत कर बडे धर्म के साथ धरती का राज कर दायें बाएं हाथ से शत्रुओं को मार यह सभी योद्धा मैंने मारे रखे हैं तू तो केवल निमित्त मात्र है ॥ ३३ ॥ जो लोक कहें कि यह सभी योद्धा

अर्जुन ने मारे यह योद्धा कैसे हैं जिनसे तूं ने शस्त्र विद्या सीखी है जो बाण की चोट से चूकते नहीं बाणों से भी मारे हैं श्राप कर भी मारे हैं ऐसे तो द्रोण है और भीष्म कैसा है जिसको पिता शांतनु का वर है कि हे पुत्र ! जब तेरी इच्छा होवेगी तबी तू मरेंगा जैदरथ कैसा है जिसका पिता तप करता है कुरुक्षेत्र के मंडल में जहा परसराम के कुंड हैं सो कैसे कुंड हैं जब इक्कीस वार परसराम ने पृथ्वी नेहक्षत्र करी थी तिन क्षत्रियों के रुधर साथ कुंड भरे हैं तिन कुंडों पर जैदरथ का पिता तप करता है यह वाछा करता है कि जो कोई मेरे पुत्र का

सिर काटे उसका भी सिर भूमि पर गिर पड़े और
करण जो है सूर्य का अवतार इन से आदि और जो
योद्धा हैं यह तेरे से मरने नहीं यह मैंने पहिले ही मार
रखे हैं मेरे मारे हुए को तू मार और डर मत ॥३४॥
संजयउवाच ॥ संजय राजा धृतराष्ट्र को कहे है हे राजा
जी ! क्रीटी जो अर्जुन मुकुट साथ जन्मया है तिससे
अर्जुन का नाम क्रीटी सो भगवान के वचन सुन कर
दोनों हाथ जोड भयभीत होकर श्रीकृष्ण भगवान् के
चरणों पर गिर पडा और प्रसन्न होकर बोला ॥३५॥
अर्जुनोवाच—जो कुछ भगवान् की देह विखे चरित्र

देखा सो कहिता है। हे भगवान् जी ! तुम्हारे शरीर के जो अंग हैं तिन्हों में बहुत जगह पर साध सन्तों की महन्तों की मंडलियां बैठी हैं सो आपस में तुम्हारी महिमा कहिते सुनते हैं तुमारे प्रसाद कर तुमारे नाम प्रताप कर तुमारे जो परमपद मुक्ति पद उसको साधु सन्त महन्त प्राप्त होते देखता हूं बैकुठ भी तुम्हारी देह विखे देखता हूं और संसार भी तुम्हारी देह विखे देखता हूं तुम्हारी महिमा कथने हारे भी देखता हूं और जो कहीं २ राक्षसों की सेना हैंइस तुम्हारे रूप को देख कर डरती हैं सो राक्षस डर कर दसों दिशा को भागते

हैं ॥३६॥ कई कोटि साधु तुमको नमस्कार करते हैं।
हे बड़ियों से बड़े तुमको क्यों न नमस्कार करिये तुम
को अवश्य नमस्कार करनी चाहिये है तुम कैसे हो इस
संसार के करनेहारा जो ब्रह्मा है तिसके भी कर्त्ता हो
और अनन्त हो सर्व देवतियों के पहिले हो प्रभु हो
इसी से सभ देवता तुम्हारे किए हुए हैं ॥३७॥ सारा
संसार जो है जगत् सो सभ तुम्हारे विखे बसे हैं इस
कारण से तुम जग निवास हो अविनाशी हो देह से
तुम देवतियों के आदि हो अनेक प्रकार की विश्व साथ
पूर्ण हो इसी से तुम बिश्व निधान हो॥३८॥ वेदों विखे

जानने योग्य हो तुम्हारा धाम जो ग्रह और तेज सभ से परे है इस कारण से परमधाम हो अनन्त प्रकार के संसार के कर्त्ता हो हे प्रभु जी! विभूति रूप भी तुम हो चन्द्रमा भी तुम हो प्रजा के पती भी तुम हो पिता माता और दादा पडदादा भी तुम हो हे प्रभु जी ! यह तुम्हारे एक२ रूप को मेरा सहस्र २ वार नमस्कार है ॥३९॥ फिर भी नमस्कार नमस्कार है हे महाप्रभु जी ! तुम को नमस्कार तुम्हारे मुख को नमस्कार तुम्हारी पीठ को नमस्कार तुम्हारे तले ऊपर को नमस्कार तुम्हारे सरब ओर को नमस्कार॥४०॥तुम्हारे बल वीर्य

का भी और पराक्रम का भी कुछ अन्त नहीं सब के भीतर हो बाहर भी तुम हो हे प्रभुजी ! मैंने आपको सखा जानकर न कहने योग वचन कहे हैं सो क्या वचन हे कृष्ण मेरा रथ ले आओ हे यादव मेरा अमुक कार्य कर हे सखे मेरा अमुकी टहल कर इत्यादिक जो मैंने आप की अवज्ञा करी है ॥४१॥ हे प्रभुजी आपको पहिचाना न था जो तुम ऐसे हो मैं तुम्हारी महिमा के जानने को सावधान न था अचेत था हे प्रभु जी ! जो कुछ मैंने आपकी अवज्ञा की हंसते २ और आपके समान मार्ग चला हूं और आपके साथ इकट्ठा शय्या पर शैन

किया है आपके समान एक आसन पर बैठा हूं हे अच्युत अविनाशी पुरुष जी! मेरी अवज्ञा क्षमा करो ॥४२॥ हे प्रभु तुम्हारी महिमा अप्रमेव है अप्रमाण है लेखे से परे है इस कारण से अप्रमेव है हे प्रभु जी! अस्थावर जो अपनी ठौर से न चलें बृक्ष पर्वत आदिक तृण घास जैसे और जंगम जो चरणों कर चलते हैं इन सबके पिता हो अवश्य कर तुम सब के पूज्य हो और सबके गुरु हो तुम्हारे समान कोई नहीं तुम सब से अधिक हो त्रिलोकी में तुम्हारे समान कोई नहीं ॥४३॥ इसीसे तुम ईश्वर हो तुम सर्वप्रकार स्तुति करने योग्य हो मुझपर कृपा

करो जैसे पुत्र का अपराध पिता क्षमा करता है जैसे पतिव्रता स्त्री का अपराध पती क्षमा करता है इसी प्रकार मेरी सब अवज्ञा क्षमा करोजी ॥४४॥ हे प्रभुजी! ऐसा रूप तुम्हारा मैं आगे कभी नहीं देखा सो इस स्वरूप को देखकर मुझे डर आता है हे जगन्निवास हे देव! अब बसजी बस प्रसन्न होकर दिव्यस्वरूपदिखावो मुझे वही स्वरूप देखने की इच्छा है ॥४५॥ सो कैसा स्वरूप परमसुंदर चिकनेघुंघराले केश शोभा पाय रहे हैं और तुम्हारे ऊपर पीताम्बर पहिरे हो कण्ठ विखे वनमाला विराजे है एक हाथ में कौमोदकी गदा एक हाथ में

शंख चक्र सुदर्शन एक हाथ में मेरे रथ के घोडों की वागां एक हाथ में चाबक है हे विश्वरूप सहस्रबाहु ! अब मुझे वही चतुरभुजरूप दिखाओ ॥४६॥ अर्जुन की बेनती मानकर श्रीभगवानजी बोले। श्रीभगवानोवाच—हे अर्जुन ! यह विश्वरूप तुझको मैंने प्रसन्न होकर दिखाया है यह कैसा रूप है अपने आत्मा का दर्शन तुझे दिखाया है फिर कैसा है सब से परे है अनन्त है जिसका अन्त नहीं सो ऐसा परम ईश्वर रूप तुझको दिखाया है ॥४७॥ जो कोई चारों वेद पढे तो भी यह रूप देखने से दूर है जो कोई यज्ञ करे अनेक पाठ करने

से भी यह रूप नहीं देख सकता और तीर्थों के दर्शन करने
से अनेक तपस्या करने से भी यह दर्शन दूर है ॥४८॥
हे कुरुवंशियों में श्रेष्ठ अर्जुन ! त्रिलोकी विखे कोई नहीं
जो यह दर्शन देख सके तुझे ही यह दर्शन दिखाया है
और किसी ने नहीं देखा इसीसे हे अर्जुन ! भय को
त्याग डर कर जो मूढसा हो रहा है सो डर को त्याग
निडर हो मेरा प्रीतिवान् हो मनकर मेरे साथ प्रीति-
वान हो फिर वही मेरा रूप देख ॥४९॥ संजय उवाच-
संजय धृतराष्ट्र को कहे है हे राजाजी ! श्रीकृष्ण भगवान
अर्जुन को यह वचन कहिके फिर वोही अर्जुन को

सखारूप दिखावते हैं जो सतस्वरूप था सो अर्जुन को
दिखाया डर तिसका दूर किया फिर अर्जुन बोला॥५०॥
अर्जुनोवाच—हे जनार्दन जी! यह आपका स्वरूप देखिया
है सो अति दुर्गम है ॥५१॥ श्री भगवानोवाच-हे अर्जुन
यह मेरा रूप देवातियें को भी दुर्लभ है इस मेरे रूप
के देखने को देवते भी वांछा करते हैं सो रूप तुझे
दिखाया है वेद पाठियों को भी दुर्लभ है॥ ५२ ॥ हे
अर्जुन! वेद के पढ़े से भी मैं नहीं पाइता और न तपस्या
से पाइता हूं न यज्ञ किये से पाइता हूं॥५३॥ हे अर्जुन!
अनेक प्रकार के जो धर्म हैं तिना कर भी मैं पावना

कठिन हूं जैसे तुझ पाया है तैसे किसी नहीं पाया सो तुझ क्यों पाया है तू मेरा अनन्य भगत है मुझ बिना तू किसी का भजन नहीं करता इस से मुझ को देखिया है दिव्य नेत्रों कर भी और ज्ञान नेत्रों कर भी देखिया है। हे परंतप अर्जुन! प्रेम कर तुमने मुझे पाया है॥५४॥ मैं तेरे आधीन हूं और तू मेरे विखे प्राप्त हुआ है तू मुझ विखे मैं तेरे विखे हे पाण्डवनन्दन ! अब जो तुझको करनी आई है सो सुन परम प्रीति साथ मेरी पूजा कर स्वास २ मेरा नाम स्मरण कर इस प्रकार मेरा भगत हो संसार के लोकों साथ प्रीति न कर सब भूत

प्राणियों से निरवैर हो जब ऐसा होवेंगा तबमेरे विखे प्राप्त होवेंगा यह निश्चय जान ॥५५॥

इकि श्रीकृष्ण अर्जुन सम्बादे विश्वरूप दर्शनों नाम एकादशों अध्यायः ॥ ११ ॥

* अथ ग्यारवें अध्याय का महात्म्य *

श्रीनारायणोवाच—हे लक्ष्मी! अब ग्यारवें अध्याय का महातम सुन एक तुङ्गभद्र नामा नगर था तिसके राजे का नाम सुखानन्द था तहां श्रीलक्ष्मी नारायण की सेवा बहुत करते थे वहां एक ब्राह्मण बड़ा धनपात्र विद्यावान पण्डित रहता था उस ब्राह्मण का नेम था नित्य गीता जी के ग्यारवें अध्याय का पाठ करता

था और राजा भी वहा नित्य लक्ष्मी नारायण की सेवा करता था और पाठ भी नित्य श्रवण करता था ऐसे ही कई काल गुजरा सेवा करते तथा श्रवण करते एक दिन राजा घर को गया उस दिन अतीत बहुत दिशान्तर फिरते २ उस नगर में आए अतीतों ने राजा से कोई जगा मांगी बोले हे राजन्! हम कोई दिन रहेंगे हमें जगा दीजे राजा ने बड़ी हवेली खुलवा दी, तहां अतीत उतरे राजा ने सीधा दिया रसोई कर अतीत बड़े प्रसन्न हुए अमृत वेले राजा उनके दर्शन को गिया राजे का बेटा भी साथ था कई नौकर साथ थे राजा

उस हवेली में आया जहा महन्त था उस साथ राजा
बात चीत करने लगा और राजा का पुत्र खेलने लगा
वहा एक प्रेत रहता था उस प्रेत ने राजा के पुत्र को
मारा चाकरों ने राजा को खबर करी हे राजा जी !कुँवर
को प्रेत ने मारा है तुम यहा बैठे हो सो राजा यद्यापि
सेवा करता था कथा श्रवण करता था परन्तु पुत्र के
मोह कर राजा के मन में दुरबुद्धि गई राजा बोला हे
सन्त जी ! आपका दर्शन हमको बहुत फलिया है जी
एक पुत्र था सो प्रेत ने मार लिया है तब ब्राह्मण ने
कहा हे राजा जी ! चलो देखिये कहां है तेरा पुत्र राजा

ब्राह्मण महन्त सभी वहा आए जहा राजकुमार मरा पडा था तब ब्राह्मण ने कहा अरे प्रेत तूं इस लडके पर कृपा दृष्टि कर जो यह लडका जी उठे और मैं तुझे श्रीगीताजी के ग्यारवें अध्याय का पाठ सुनाता हूं तूं श्रवण कर इस कर तेरी कल्याण होवेगी जितने जीव तैंने पीछे मारे हैं तिनका भी उद्धार होवेगा और तूं अपने पिछले जन्म की बात कहो क्यों कर प्रेत हुआ है तिसके पीछे तेरा उद्धार करूंगा तब प्रेत बोला मैं पहिले जन्म ब्राह्मण था इस गांव के बाहर मैं हल जोतता था वहां एक दुर्बल ब्राह्मण आया था सो इस

खेत में गिर पड़ा उसके अंगों से रुधिर निकला एक इल्ल ने उसका मास नोच खाया मैं बैठे देखता था मेरे मन में दया न आई जो इस ब्राह्मण को छुडा दूं इतने में एक और ब्राह्मण आया उसने देखा एक दुर्बल रोगी ब्राह्मण गिरा पडा है चीलें उसका नोच २ मांस खातीं हैं उसने देखकर मुझे कहा अरे हल जोतने वाले ब्राह्मण ! तू यज्ञोपवीत पहरे बैठा है कर्म तो तेरे चण्डाल के हैं हे निर्दयी तेरे खेत पास ब्राह्मण का मास चीलें नोच २ खाती हैं और आंखों से अन्धा तूं छुड़ावता नहीं इस कारण तूं बड़ा पापी है यह तीनों अपकर्मी नरकों को

जाते हैं एक तो किसी को चोर लूटता मारता होवे और साखी होकर भाग जावे दूसरा दुर्बल रोगी होवे तिस की खबर लेवे नाहीं तीसरे किसी को भूत लगा हो छुड़ाये जानता होवे और छुड़ावे नहीं यह तीनों पापी नरक को जाते हैं। और सब जीवों पर सहायता और दया करते जो हैं तिनको अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त होता है। जाह मेरे श्राप कर तू प्रेत जून पावेगा तब मैं उसके चर्ण पकड कर बोला कि मेरा उद्धार कैसे होवेगा ? तब ब्रह्मण ने कहा जब तुझको कोई गीता के ग्यारवें अध्याय का पाठ सुनावेगा तब तेरा उद्धार होवेगा जब प्रेत ने अपनी

कथा सुनाई तब ब्राह्मण ने राजा से पूछा। राजा ने कहा इसका उद्धार करिये और मेरे बेटे को जीवित करो तब ब्राह्मण ने गीता के ग्यारवें अध्याय का पाठ किया और प्रेत पर जल छिडका तत्काल प्रेत की देह से छूटकर देव देही पाई उसके पिछले जो कोई जीव खाये हुए थे तिनका भी उद्धार हुआ राजा का बेटा सावधान हुआ श्याम सुन्दर चतुर्भुजरूप होय के खडे होगये स्वर्ग से विमान आये तब वह प्रेत बोला हे राजा! अपने पुत्र को मिल जब मिलने लगा तब वह बोला हे राजा! जिसके कुल में एक वैष्णव होवे

उसकी कई कुलों का उद्धार होता है तूं आप बडा
वैष्णव है तब राजा ने मोहसे कहा हे पुत्र! तू मुझ को
मिल पुत्र बोला पिता तू किस को कहिता है मैं कई
वार तेरा पुत्र भया कई वार तेरा पिता भया यह प्रेत
धन्य है जिसने मुझे मारा और श्रीगीताजी के ग्यारवें
अध्याय का पाठ श्रवण कर मैं अब कृतार्थ हुआ हूं
फिर राजा ने कहा हे पुत्र! तू मेरे घर में एक पुत्र था
मेरी अब कौन गती ?मेरे और कोई सन्तान नहीं है।
तब पुत्र ने कहा हे राजा! जिस कुल में एक वैष्णव होवे
उसका उद्धार होता है हे पिता! तूं चिन्ता न कर अब

मैं नारायण जी परायण हुआ हूं जब मैं श्री नारायण जी का दर्शन करूंगा तब तेरे कुल का उद्धार होवेगा इक्की कुलें तेरी उद्धरेंगी तब राजा ने कहा सिधारो सो विमानों पर बैठ कर बैकुंठ में गए तब उस ब्राह्मण से राजा ने ग्यारवें अध्याय का पाठ श्रवण किया ब्राह्मण ने कहा राजा ! तुम्हारा पुत्र पुत्री कोई नहीं विरक्त होकर गीता का पाठ करो तुलसी में जल डाला करो ब्राह्मण देव चलते रहे राजा भी परमगति का अधिकारी हुआ श्रीनारायण जी कहिते हैं हे लक्ष्मी ! यह ग्यारवें अध्याय का महात्म है जो तैंने श्रवण किया।

* अथ बारवां अध्याय *

भक्तियोग

अर्जुनोवाच—अर्जुन श्रीकृष्णा भगवान जी से प्रश्न करता है। हे प्रभु जी ! एक तुम्हारे भगत तुम्हारे इस कमलनैन के उपासक हैं एक तुम्हारे आश्चर्य रूप के उपासक हैं और एक जो तुम्हारा अक्षर अविनाशी रूप है तिसके उपासक हैं और एक तुम्हारा रूप आनन्द देश है जो मन बाणी से परे है तिसकी उपासना करते हैं इन सभ में चतुर उपासक कौन है ? हे प्रभु जी ! यह कहो ॥१॥ अर्जुन की बेनती मान कर श्रीकृष्ण भगवान

जी बोले । श्रीभगवानोवाच–हे अर्जुन ! यह जो मेरा
कमलनैन प्रगट रूप है सो मन का निश्चल चेता
मेरे में राख मन को एकाग्र करके परम श्रद्धा साथ
जो इस कमलनैन के उपासक हैं मेरे मत में यह
भगत श्रेष्ठ हैं और चतुर हैं ॥२॥ अब दूसरियों का
वृत्तान्त सुन प्रथम जो अक्षर अविनाशी है तिसकी
महिमा मन बाणी पर आवती नाहीं जिह्वा कह नहीं सकती
इसीसे आनिरदेश कहते हैं ॥३॥ जो नेत्रों कर देखा न
जाए तिसे अव्यक्त कहते हैं सर्वव्यापी जो है मन
कर तिसका प्रताप चितविया नहीं जाता इस कारण

से अचिंत कहिए तिसमें कोई विकार नहीं कभी घटता बढ़ता नहीं इस से अस्थित कहिए कभी ठौर से हलता चलता नहीं इसी से अचल कहिए फिर किसी का हिलाया हिले नहीं इसी से ध्रुव कहिए यह आठ प्रताप मेरे अव्यक्त स्वरूप के हैं जो कोई इसकी उपासना करें तिनके लक्षण सुन जिन साधनों कर अव्यक्तरूप पाइये है ॥ ३ ॥ तीन साधन करने योग्य हैं। मुख्य तो सब इन्द्रियों का संयम करना इन्द्रियां जीतनीयां सब भूत प्राणियों साथ समता और सब के कल्याण साथ प्रीति जो है फिर सब जीव

जिस से सुखी रहें इन साधनों कर अविगत स्वरूप
का उपासक अव्यक्त जो मैं ईश्वर हूं सो मुझको पावे है
॥४॥ अब और सुन हे अर्जुन! अविगत स्वरूप के उप-
सक जो हैं तिनको अधिक कष्ट है क्या बहुत क्लेश है और
समता दृष्टि भी कठिन है सो सुन जो कोई पुजा करे
तिसका भला वांछना और जो पूजा नां करे तिसका
भी भला वाछना यह जो जितने देहधारी हैं तिनको
यह कठिन साधन है जिसके पावने के निमित्त यह
कठिन साधन कीजे है सो दिखने का नहीं नेत्र देखकर
क्या सुख पावे? वचनों कर तिसकी महिमा कही नहीं

जाती सो जिह्वा किस गुण को पाकर सुख पावे मनकर चितवन को नहीं मन किस स्वरूप को चितवे इससे जो देहधारी हैं तिन को अव्यक्त की उपासना में कष्ट है ॥५॥ हे अर्जुन ! मेरे कमल नैन के जो उपासक हैं तिनकी बात सुन, मैं जो हूं देवकीनंदन जसोधा नंदन, नंद नंदन, परम सुंदर आनंद का समुद्र हूं जो मेरे इस रूप के उपासक हैं और मेरी शरण आए हैं तिनोंने सब कर्म मुझ में समर्पे हैं कैसे जो यह घर जो है हे भगवान तेरा है मैं तेरा दास हूं दास भाव होकर मेरा भजन करे है और रसोई आदि जो है सब मुझ को

समर्पण कर मेरा सीत प्रदान जान कर खाते हैं हर
समय मेरा ध्यान मेरा ही स्मरण है विश्नुपदे गावने
मेरा कीरतन करना इस प्रकार आनन्द होकर जो मेरा
भजन मेरी उपासना करते हैं तिनों साथ मैं कैसा हूं
सो सुन ॥६॥ यह संसार जो दुःखरूप जन्म मरण का
घर है तिसते उद्धार करता हूं तत्काल ही मुक्ति करता
हूं जिन पुरुषों ने मेरे विखे मन का निश्चल चेता रखा
है ॥७॥ हे अर्जुन ! मेरे उपासक जो सेवक हैं तिनको यह
साधन करने योग्य हैं कौन साधन पहिले तो मन का
निश्चल चेता मेरे में रखनी और बुद्धि भी मेरे विखे रखनी

यह दोनों साधन मेरे भक्तोंको करने योग्य है इससे अधिक और कोई मेरे रिझावने का साधन नहीं है इससे अधिक मेरे भगतों को भगती करनी रही नहीं है अर्जुन ! तेरे मन का निश्चल चेता मेरे विखे लगा है तुझे बाकी करना कुछ नहीं रहा तू कृतार्थ हुआ है ॥८॥ जो निश्चल चेता मेरे में नहीं तो अभ्यासयोग कर अभ्यासयोग यह कि मेरे स्मरण को त्याग के मन किसी और बात को ना जावे तब बुद्धि साथ मन को रोकके मेरे में निश्चल कर इसका नाम अभ्यास है ॥९॥ हे अर्जुन ! जो तेरे से अभ्यास योग किया न जाय और मनमें मेरा ध्यान न लगे तो

और सुन प्रातःकाल से लेकर रात्रि सोने पर्यन्त मेरी सेवा पूजा कर जब मेरे अर्थ मेरी पूजा करेगा तब तू संसार से मुक्ति होवेंगा ॥१०॥ जो पूजा भी न कर सके तो हाथ जोड कर मेरे चरण कमलों को नमस्कार कर मुखसे यह कहो हे श्रीकृष्ण भगवानजी! मैं तेरी शरण हूं जब इस प्रकार मेरी शरण आवेगा तो मेरा मन अपने चरणों साथ निश्चिल कर रखेंगा ॥११॥ हे अर्जुन! मनका निश्चल चेता मेरे में राख यह मार्ग बहुत कल्याण का है इसे अभ्यास योग कहिये है इस अभ्यास से ज्ञान श्रेष्ठ है कौन ज्ञान मेरी महिमा का जो कहिना सुनना और

इसी ज्ञान से मेरे ध्यान साथ जुडना श्रेष्ठ है जब मेरे ध्यान साथ जुडता है तब सभी कर्म्मों के फल तिस को त्याग जाते हैं। जो मेरा भगत होता है सत्य स्वरूप और जो कोई मेरा भगत सत्य पद को पावे है तिस के लक्षण सुन ॥१२॥ किसी भूत प्राणीका बुरा ना मानवे सभका मित्र होए रहे सभसे कृपालुतता अहंकार ममता से रहित कहे ना कुछ मेरा ना कुछ मैं हूं सभ कुछ परमेश्वर का है सुख दुःख में एकसा रहे क्षमावन्त सदा संतुष्ट प्रसन्न निरन्तर मेरे हाथ जुडा हुआ संसार के विषयों से आत्मा जीत रक्खा है मेरे साथ दृढ़

निश्चल चेता रखना बुद्धि का भी मेरे दृढ करना जो
इस प्रकार मेरे भक्त मेरा भजन करते हैं सो मुझे पाये
रहे हैं ॥१३॥ फिर किसी से डरते नहीं भलीबुरी वस्तु
पाए से हर्ष शोक नहीं करते ऐसे जो हैं मुक्तिरूप मुझे
प्यारे हैं फिर कैसे हैं जिन को किसी वस्तु की वांछा
नहीं और देह को जल मृतका से पवित्र रखें अन्तः-
करण मेरे भजन कर पवित्र रखें उज्ज्वल मत कर मुझे
अविनाशी पछान संसार के लोकों से उदास रहें।
सदा सुखी जिसने सर्व कार्य्यं संसार के जो हैं तिनका
आरम्भ त्याग दिया है सों मुझे प्यारा है ॥१४॥ फिर

कैसी है कि गई वस्तु की चिंता नहीं और ना होई वस्तु की वांछा नहीं करता और संसार के भले बुरे का त्याग दिया है मेरे चरणों साथ प्रीति है ऐसा भक्त मुझे प्यारा है ॥१५॥ फिर कैसा है शत्रु मित्र तिस एक समान हैं आदर अनादर में एकसा शीत ऊशन दुःख सुख में एक रस है ॥१६॥ दूसरे का संग ना करे एकाएकी निरबंधन रहे फिर अस्तुति निन्दा किये से एकसा मेरे नाम बिना जिह्वा से कुछ बोले नहीं ॥१७॥ जिस किस प्रकार सन्तुष्ट रहे घर बनाने का भी आरम्भ न करे बनी हुई जगह पर बैठ कर भजन कर ॥१८॥ संसार की

तरफ से सोए रहे मेरे चरणों साथ दृढ़ निश्चय मेरे
साथ ही प्रीति करे ऐसा जो प्राणी है सो मुझे प्यारा
है ॥१९॥ हे अर्जुन ! यह साधन मैंने अपने भक्तों को
उपदेश किये हैं इन साधनों का नाम अमृत धर्म है
जैसे अमृतपान किये से कोई रोग नहीं रहता जीव
अमर होजाता है तैसे ही यह अखण्ड ब्रह्मरूप मेरा
है जैसे कैसे तैसे अपने भगतों का यह यथार्थ धर्म कहा
है सो परम श्रद्धा से जो इन धर्मों की उपासना करे है
सो भगत मेरे को अति प्यारा है ॥२०॥

इति श्रीकृष्ण अर्जुन सम्वादे भगति योगो नाम द्वादशो अध्याय ॥१२॥

* अथ बारवें अध्याय का महात्म *

श्रीभगवानोवाच–हे लक्ष्मी ! अब बारवें अध्याय का महात्म सुन, दक्षिण देश में एक सुखानंद नामा राजा रहिता था तिसकी नगरी में एक अवंतका नामा लंपट रहे था एक गणिका से उसकी प्रीती थी वह दोनों एक देवी के मन्दिर में जाए के मदरा पान किया करें मास खावें भोग भोगें जो कोई पूछे तुम यहां क्या करते हो तो कहें हम यहा यूंही रहते हैं देवी की सेवा करते हैं झूठ कहि देवें उसी देवालय में एक ब्राह्मण देवी की सेवा करता था एक दिन उस ब्राह्मण ने देवी की

उस्तुति करी देवी प्रसन्न हुई कहा वर माग जो मागेगा
सो देवागी तब उसने धन सन्तान सुख मांगा देवी ने
कहा हे ब्राह्मण ! अवश्यकर तुझे धन सन्तान सुख
देवागी पर एक बात कर पहिले इन दोनों का उद्धार
करले ऐसा उपाय कर जिससे इन दोनों का उद्धार
होवे ता ब्राह्मण ने नमस्कार करी और अपने गुरु पास
आयकर कहा हे गुरू ! मैंने देवी जी की उस्तुति करी
थी सो प्रसन्न हुई धन सन्तान दी है पर पहिले उन दोनों
का उद्धार होवे तब गुरू ने कहा हे ब्राह्मण ! चल श्री-
नारायणजी से पूछिये, तब श्रीनारायण जी का तप

किया तीर्थ व्रत किया भगवान् जी प्रसन्न हुए आकाश बाणी हुई सिमर्ण करो तब वह सिमर्ण करने लगा तब श्रीनारायणजी गरुड पर स्वार होके आये और पूंछा तेरी क्या कामना है ? उसने पिछली बात कही देवी जी की मैं भक्ती करी थी, भगवती प्रसन्न हुई कही धन सन्तान देती हूं पर उन दोनों का उद्धार कर जिस किस तरह करके सो मैं जानता नहीं हूं आप कृपा करके कहो कि उनका उद्धार किस प्रकार होवे ? तब श्रीनारायण जी ने कहा हे ब्राह्मण ! गीता के बारहवें अध्याय का पाठ सुनाओं तो उन दोनों का उद्धार

होवेगा, तब उस ब्राह्मण ने भगवान की स्तुति कर
धन्यवाद किया आशीर्वाद कहा तुम्हारी जय होवे जी
तब ब्राह्मण ने देवी के मन्दिर में आ के भगवती की
स्तुति करी और कहा तुम्हारी जय होवे जी ता देवी
प्रसन्न भई उस ने कहा हे देवी जी ! श्रीनारायणजी ने
आज्ञा करी है तब देवी ने कहा हे ब्राह्मण ! तू उनको पाठ
सुना जिस से उनका उद्धार होवे तब दोनों गण का
और लम्पट को बैठाकर गीता के बारहवें अध्याय का
पाठ सुनाया सुनते ही उन दोनों की देह छूटी देव देह
पाई और बैकुंठ को गये। देखकर देवी प्रसन्न हुई

ब्राह्मण को कहा हे पण्डित! आज सें मेरा नाम वैष्णवो
देवी हुआ इस पाठ को सुनकर ऐसे अपकर्मी तर गये
हैं इस नगरी का राज तुझ को दिया इतना कहकर देवी
अन्तरधान हुई ब्राह्मण घर को गया उस राजा के
घर सन्तान न थी राजा ने उस ब्राह्मण
राज देके आप तप करने को गया
कर और ब्राह्मण राज करने लगा
कहें हे लक्ष्मी ! यह गीता जी के बा
महातम है जो मैंने कहा और तूने सु

इति श्री पद्मपुराणे सतीईश्वरसम्वादे उत्तराखण्डे श्रीगीता महात्म्यो नाम द्वादशो अध्याय ॥१२॥

ब्राह्मण को कहा हे पण्डित! आज सें मेरा नाम वैष्णवो देवी हुआ इस पाठ को सुनकर ऐसे अपकर्मी तर गये हैं इस नगरी का राज तुझ को दिया इतना कहकर देवी अन्तरधान हुई ब्राह्मण घर को गया उस राजा के घर सन्तान न थी राजा ने उस ब्राह्मण को बुलाए राज देके आप तप करने को गया बन में विरक्त हो कर और ब्राह्मण राज करने लगा। श्रीनारायण जी कहें हे लक्ष्मी ! यह गीता जी के बाहरवें अध्याय का महातम है जो मैंने कहा और तूने सुनिया है।

इति श्री पद्मपुराणे सतीईश्वरसम्वादे उत्राखण्डे श्रीगीता महात्मों नाम द्वादशो अध्याय ॥१२॥

* अथ तेरहवा अध्याय *

क्षेत्र क्षेत्रज्ञ ज्ञान योग।

अर्जुनोवाच—अर्जुन श्रीकृष्ण भगवान् से प्रश्न करे
प्रभु जी! प्रकृति किस को कहते हैं और पुरुष किस
कहते हैं और क्षेत्र किस को कहते हैं ज्ञान और ज्ञेय
को कहते हैं और क्षेत्रज्ञ किसको कहते हैं इनका
र कहो जी। श्रीभगवानोवाच—हे कुन्तीनन्दन
र्जुन! यह जो मनुष्य की देह है इसको क्षेत्र कहिये है
सा क्यों कहते हैं जब यह जीव चुरासी फिरता फिरता
मनुष्य देह में आवे है तभी चैतन्य होता है कैसा चैतन्य

परमेश्वर को भी पछाने है पाप पुण्य को भी समझे है क्यों जो इस देह को पायकर भला बुरा करता है पाप पुराय तिसका फल भोगता है और देह धारियों को न पाप है न पुण्य है मनुष्य देह को पाय कर पाप पुराय उपजते हैं और जितने तत्वों का इस शरीर में ठाट है उन को जो समझे सो तत्ववेता पुरुष है॥१॥ क्षेत्रज्ञ भी उसी को कहते हैं जो शरीर रूपी क्षेत्र को जानने वाला होवे सो हे अर्जुन ! सो क्षेत्रज्ञ तू मुझको जान जिसके ज्ञान कर क्षेत्र क्षेत्रज्ञ दोनों को जानिये सो यह मेरे मत का ज्ञान है ॥ २ ॥ अब

क्षेत्र जो देह तिसका वृत्तान्त सुन इस देह का ठाट कितनी वस्तुओं कर बना है जो कुछ इस क्षेत्र में वर्तमान वरते हैं सो सुन ॥३॥ इसका वृत्तान्त ऋषियों ने बहुत भातों कर कहा है वेदों ने भी कहा है भिन्न भिन्न सो भी सुन हे अर्जुन! मैं भली प्रकार कहिता हूं सो तूं निश्चय जान जो मेरे मुख कमल से निकसे है॥४॥ शरीर क्षेत्र में पाच तत्व पृथ्वी, जल, अग्नि, पवण, आकाश, पृथ्वी का अंश इस देह में मास है जल का अंश रुधिर अग्नि का अंश इस देह में अग्नि है जो भोजन आदिक वस्तु को पचावे पवन का अंश स्वास है आकाश का अंश

पुलाड़ है यह पाचों महाभूत देह में हैं और मन बुद्धि चित अहङ्कार दसों इन्द्रियां पांच ज्ञान इन्द्रियां पांच कर्म इन्द्रियां सो कौन हैं नेत्र नासिका श्रवण त्वचा जिह्वा यह ज्ञान इन्द्रियां हैं इन पाचों में ज्ञान है कर्म्म नहीं कर जानती कर्म इन्द्रियां कौन हैं हस्त पांव गुदा लिङ्ग वाक् यह पांचों कर्म इन्द्रियां हैं यह कर्म को ही कर जानती हैं त्वचा स्पर्श इन्द्री जो है सो सभ इन्द्रियों में व्यापी हुई है जिह्वा में भी दो गुण हैं स्वाद लेती है तब तिस में ज्ञान गुण है जब वचन बोले तब कर्म गुण हैं लिङ्गमें भी दोनों गुण हैमैथुन भोग करता है तब ज्ञान गुण जब

लिंगी करता है तब कर्म गुण यह तो दसों इन्द्रियां
कही ॥८॥ पांच इन्द्रियों के पांच ही आहार हैं सो कौन
नेत्रों का आहार देखना नासिका का वाश्ना लेना जिह्वा
का स्वाद लेना है और श्रवणों का शब्द सुनना और
स्पर्श इन्द्री जो त्वचा है तिसका आहार वस्त्र पैहरने
सुगन्ध लेपन करना शीत उष्ण समझना यह यांचों के
आहार पाच हैं इनसे ही सब वस्तु का शरीर बनिया है
जो इस शरीर नगर में वरते सो सुन अच्छी वस्तु खान
की वाछा, बुरी वस्तु की वांछा कभी नहीं सुख कभी दुःख
यह चारों बातें इसमें तीन प्रकार वरतें हैं इन चारों बाता

की विश्व में भीडी बस्ती है और चोरों की इसमें चैतन्य-
ता है यह चारों बातें इसमें दृढ़ हैं ॥६॥ हे अर्जुन! इस
शरीर क्षेत्र का वृत्तान्त मैंने तुझको भली प्रलार कहा है
और जिस साधन से मेरे जानने का ज्ञान उपजे सो
साधन सुन मुख्य तो यह साधन है जो अपमानी होवे
निर्माण रहे अपनी पूजा मानता ना करावे गुरु गुसाईं
होके ना बैठे मन वच कर्म कर सब का सेवक होय रहे
पाखण्डी भी ना होवे क्या चौकडी मार नेत्र मून्द के
बैठा रहे लोक जानें कोई बडा तपी है ॥७॥ और विषय
भोगों की वाञ्छा जो कुछ खाइये कुछ पेहरिये सो पाखंड

से रहित हो मन कर किसी का बुरा ना चितवे मन वच
कर्म कर किसी को दुखावे नहीं वचनों कर दुरवचन
न कहे हाथ कर मारे नहीं पैरों से चल कर किसी का
बुरा न करे किसी अस्थावर जंगम को दुःख ना देवे
इत्यादिक कोई और इस को दुःख देवे तो बुरा न माने
क्षमा कर नम्र रहे सब किसी साथ निवियां हुआ रहे
और जो चंगे मार्ग के उपदेश करने हारे हैं गुरु तिनकी
सेवा ॥८॥ जलमृतिका कर अपनी देह पवित्र रखे धीर्य
कर मन को निश्चल रखे इन्द्रियों के भोगों से उदास
रहे अहंकार से रहित हो जो प्राणी यह साधन करे सो

जन्म मरण के दुःखों से रहित मुक्त रहेगा और साधन सुन ॥९॥ पुत्र स्त्री घर से और सम्बान्धियों से मोह लगावे नहीं और शत्रु मित्रता से रहित रहे सदा एक सा रहे मुझ साथ आनन्द रहे जैसे पतिव्रता स्त्री अपने भर्त्ता की सेवा करती है॥१०॥ पराया पुरुष देखती भी नहीं तैसे मेरा भगत मुझे सिमरे किसी दूसरे का नाम ना लेवे ऐसा मुझ साथ होवे और एकान्त बैठे संसारी मनुष्यों का संग ना करे और मैं सब आत्माओं का ठाकुर अधिकारी हूं जो मुझ ईश्वर अध्यात्म के जानने को एकान्त बैठ के देखे जो अध्यात्म ईश्वर ठाकुर

कैसा है ॥११॥ हे अर्जुन ! यह सब साधन मैंने तुझे
कहे ज्ञान पावने के निमित्त इन साधनों बिना और
जो कुछ करे सो अज्ञानी जानना यह तो ज्ञान के
साधन हैं जैसे दीपक की सामग्री तेल रूई अग्नि सब
इकट्ठे कर दीपक जला कर घर में धरीये तिस चानने
कर सब वस्तु घर में जो कुछ पड़ी हैं देखी जाती हैं
सो ज्ञान तो एक दीपक भया और वस्तु देखनी सुन
हे अर्जुन ! तैंने ज्ञेय का प्रश्न जो किया था सो भी
मैं हूं इस कारण से मेरा नाम ज्ञेय है पहिले तिस का
महात्म सुन तिस के सुनने से जन्म मरण मुक्त

होवेंगा जैसे अमृतपान करने से देह आरोग्य होती है मृत भी नहीं होती तैसे ही मेरा ज्ञेय रूप सुन अमृतपान करने से अजर अमर होवेंगा सो सुन ज्ञेय आनादि है जिस की आदि नहीं सब से परे है इसी से पारब्रह्म कहिते हैं ॥१२॥ एह जीव इनसे परे है और सब ठौर में नेत्र हाथ सिर श्रवण इत्यादिक अङ्गों में व्यापक है सब जगह में बस रहा है॥१३॥ सब इन्द्रियों के गुणों का प्रकाशिक है सब इन्द्रियों से रहित है सब साथ मिला हुआ है सब के करनेहारा है फिर आप निर्गुण है और सब गुणों को भोगता है ॥१४॥ स्थावर जंगम जो भूत

प्राणी हैं तिनके बाहर भीतर व्यापक है और सूक्ष्म है जानिया नहीं जाता इसी से परमेश्वर को दूर कहिते हैं सब में व्यापक भी है सब से न्यारा भी है ॥१५॥ तिस को हे अर्जुन! तूं ज्ञेय जान जब सब संसार को ग्रास लेता है तब तिस का नाम ग्रासक होता है जब संसार को अपने से प्रगट करता है तब उसका नाम उत्पत्तिकर्त्ता है जब संसार के अन्दर बाहर व्याप रहा है तब तिसको विष्णु कहिते हैं ॥१६॥ सूर्य्य से ले कर जितने जोत वाले हैं तिन सब की जोत तू मुझको जान और तम जो अन्धकार है अज्ञान इनसे परे है हे अर्जुन! यह ज्ञेय के

जानने का ज्ञान है इस ज्ञान से ही जानिया जाता हूं हाथ से पकडिया नहीं जाता इस देह को नेत्रों कर नहीं देखता सब के हृदय में बसे है ॥१७॥ हे अर्जुन ! क्षेत्र क्षेत्रज्ञ और ज्ञान ज्ञेय का वृत्तान्त भिन्न भिन्न कर कहा है सो सुन हे अर्जुन ! मेरे भगत इस प्रकार मुझे समझ कर मेरे चरण कमलों से जो श्रद्धा प्रीति लगावे हैं ॥१८॥ अब अर्जुन ! प्रकृति पुरुष का वृत्तांत सुन प्रकृति जो है माया पुरुष जो है जीव इनको तूं अनादि जान ज्यों मेरा आदि अंत नहीं जब का मैं हूं तबके यह भी हैं ॥१९॥ अब इनका वृत्तांत सुन यह देह इन्द्रियां तत्व जो हैं इन

सबके उपजावनेहारी मेरी माया है कार्य कारण कर्त्ता कार्य कहिये जो वस्तु उपजी और जिस वस्तु से कार्य उपजिया सो कारण कहिये जिस ने बनाई सो कर्त्ता कहिये ॥२०॥ दृष्टांत सुन कार्य जो है माटी का बासन। तिस बासन का कारण माटी है जिस से बासन बनिया सो तिस बासन का कर्त्ता कुमहार है सो हे अर्जुन! यह संसार का कार्य है सो कार्य भी माया है यह संसार माया का स्वरूप है संसार का कारण भी माया है माया से संसार प्रगट हुआ है संसार के करने हारी भी माया है सो यह तीनों बातें माया से जान ॥२१॥ हे अर्जुन! यह सारा वृत्तान्त माया

का कहा अब पुरुष जो जीव तिसका अर्थ सुन इस प्रकृति का जो उपजाया हुआ शरीर नामा नगर है सो इस शरीर में दुःख सुख भोगता जीव है प्रकृति से उपजे हुए जो देह इन्द्रियां तीनों गुण सब को भोगे है तीनों गुणोंके संयोग का रंग इस जीव को लगता है तिन रंगों कर रंगा जाता है गुणों की सङ्गत कर यह जीव भ्रमता फिरता है ॥२२॥ अब अर्जुन मेरी बात सुन! मैं कैसा हूं इस माया और जवि ने आपस में मिल कर मेरे आगे एक कौतुक करना है सो इनके कौतुक को देखने हारा मैं हूं जीव के और माया के निवारनहारा भी मैं हूं ॥२३॥

हे अर्जुन! यह दोनों मुझको नमस्कार करते हैं इन दोनों के न्याय करने हारा भी मैं हूं इस जीव और देह से मैं परे हूं हे अर्जुन! इसी कारण से मैं परमात्मा कहाता हूं ॥२४॥ जो कोई इस प्रकार दुःख को भोगता जीवको जाने और इन्द्रियों के गुणों से माया को जाने इनका कौतुक देखने हारा मुझे इन से न्यारा जाने सो इस जानने का फल क्या पावे है सो सुन संसार के जन्म मरण के बन्धन से मुक्ति होवे ॥२५॥ अर्जुन! कई एक योगी ध्यान कर आप विखे अपने आत्मा का दर्शन पावे हैं इस मार्ग कर कृतार्थ होते हैं इस सांख्य शास्त्र के

मार्ग मुझको देखते हैं सो कहिते हैं कि जो कुछ है परमेश्वर ही है दूसरा कुछ नहीं ॥२६॥ एक मेरे स्वरूप की पूजा करते हैं स्वरूप का दर्शन करते हैं एक मेरे भक्तों से मेरी महिमा सुन के उनकी प्रीति मेरे में लगती है मेरे नाम को सिमरते हैं सो प्राणी मेरी परमगति को प्राप्त होवेंगे। हे भरतवंशियों में श्रेष्ठ अर्जुन ! और सुन जो कुछ स्थावर जङ्गम भूत प्राणी प्रगट हुए हैं सो इस देह और जीव को एकत्र होवने से प्रगटे हैं तिन सब भूत प्राणियों में एक मैं ही परमेश्वर व्याप्या हूं देह के नाश हुए तिसका नाश नहीं होता ॥२७॥ जिन ऐसा अविनाशी

परमेश्वर को जानिया है और जिन सब भूत प्राणियों विखे
एक ही मुझ समीप देख्या है सो सब को सुखदायक सेवक
होए रहे दुखावे किसी को नहीं सो भी मेरी परमगतिको
प्राप्त होवेगा ॥२८॥ हे अर्जुन ! जो कर्म होते हैं सब देह
इन्द्रियां मनसे होते हैं यह सब प्रकृति माया की है जो
कोई आत्माको देखे सो अकर्त्ता देखे आत्मा कुछ नहीं
करता यह सब प्राणियों का विस्तार जो भिन्न २ देखता
है यह दृष्टि दूर होवे है ॥२९॥ एक आत्मा ब्रह्म सभमें दृष्टि
आवे जब ऐसा होवे तब तुरत ही तिस आत्म ब्रह्मको
पाया है ब्रह्म साथ मिला सो आत्मा ब्रह्म अनादी हुआ

जिसका आदि अन्त नहीं सो अनादि है निर्गुण है गुणा-
तीत है परमात्मा अविनाशी है ॥३०॥ हे कुन्तीनन्दन
इस शरीर में ही आत्मा बसे है कुछ कर्म नहीं करता
निरलेप है सभ देहों में बसे है देह के गुण तिस आत्मा
को नहीं व्यापते ज्यूं आकाश सर्व व्यापी है सभ से
न्यारा है ॥३१॥ हे अर्जुन ! एक मेरा महाप्रताप और
सुन जिस के आगे और प्रताप कोई नहीं जैसे सूर्य
प्रातःकाल को पूर्व से उदय होता है एक वार ही सब
लोक में चांदनी प्रकाश होता है यह नहीं जो किसी देश
सूर्य का चांदना पहिले और किसी देश पीछे होवे सर्व

लोकों में चांदना एक वार ही होजाता है तैसे ब्रह्मा से
लेकर चीटी पर्यन्त स्थावर जंगम जो संसार है तिसके
सब जीवोंके शरीर में एक वार ही प्रकाश करता हूं ॥३२॥
हे अर्जुन ! यह क्षेत्र जो शरीर और क्षेत्री जो यह जीव
है और क्षेत्रज्ञ जो मैं हूं सो कैसा हूं एक नेत्र के उघाडने
से सर्व संसार प्रकट करता हूं जो कोई जीव ज्ञान नेत्रों
से मेरा प्रताप विचारे मेरी स्तुति करे सो धन्य है कि
हे श्रीकृष्ण भगवान ! जिसकी यह सामर्थ है कि निमेष
मात्र में सब संसार को प्रकट करता है ऐसा जो परम
पुरुष है तिसको मेरी नमस्कार नमस्कार है फिर भी

मेरी नमस्कार है ॥३३॥ जो प्राणी इस प्रकार मुझको जाने मेरी स्तुति करे तिसका फल सुन सो ऐसे प्राणी जन्म मरण संसार के दुःखों को काट कर मेरे परम अविनाशी पद को निस्सन्देह जाय पावते हैं ॥३४॥

इति श्रीकृष्णाअर्जुनसम्वादे क्षेत्रक्षेत्रज्ञज्ञानज्ञेयप्रकृतिजीवविभागयोगोनाम त्रयोदशोऽध्यायः १३

* अथ तेरहवें अध्याय का महात्म्य *

श्रीनारायणोवाच—हे लक्ष्मी ! अब तेरहवें अध्याय का महात्म्य सुन। दक्षिण देश में एक हरिनामा नगर है वहा एक व्यभिचारिणी स्त्री रहती थी व्यभिचार करे मास मदरा खाय एक दिन एक पुरुष साथ उसने

वचन किया जो अमुक स्थान में तेरे पास आऊंगी तुम वहां चलियो तब वह पुरुष किसी होरस बन में चला गया और वह स्त्री उसे ढूंढते ढूंढते फावी होए गई । वह मनुष्य न मिला वह भी भालता फिरे । वह गणका थकत होकर उसका रास्ता देखने लगी देखते देखते सारा दिन व्यतीत हुआ प्रीतम न आया सांझ पड गई वह गणका प्रीतम का नाम लेकर पुकारने लगी वृक्षों से पूछे इतने में वह पुरुष मिला दोनों बडे प्रसन्न होकर बैठे इतने में एक शेर आया गणका डरी देख कर सिंह बोला अरी गणका मैं तुझे नहीं खाता । वह

बोली तू अपने जन्म की बात कहो, तू कौन है ? तब सिंह बोला, मैं पहिले जन्म ब्राह्मण था, झूठ बोला करता था, बडा लोभी था, जूआ खेलता था, ज्यों त्यों कर पराया धन हर लेता था। एक दिन प्रभात के समय घर से उठकर चला। रास्ते में गिर पडा, गिरते ही देह छूट गई। यमों ने पकड लिया धर्मराज के पास लेगये, देखते ही धर्मराज ने हुक्म दिया इसी घडी ब्राह्मण को सिंह का जन्म देवो, तब यह देह मुझे मिली और हुक्म दिया, जो प्राणी पापी दुराचार करने वाले हों तिनको तू खाया कर जो साधु वैष्णव हरि भक्त हों

उनके पास न जाना हे गणका ! मुझे धर्मराज का यह हुक्म है तिसकी आज्ञा कर सिंह की योनि में आया हूं तू व्यभिचारिणी गणका पापिन है, इसी से तुझ को खाऊंगा। इतना कह कर गणका को खागया तब यम धर्मराज के पास लेगये, धर्मराज ने हुक्म दिया इसको चण्डालनी का जन्म देवो श्रीनारायण जी कहते हैं। हे लक्ष्मी ! उसने गणका की देह त्याग चण्डालनी की देह पाई। कई दिन के बाद एक दिन नर्मदा नदी के किनारे चली जाती थी तहां क्या देखे कि एक साधु गीता के तेरहवें अध्याय का पाठ करता है, उसने सुन

लिया जब अध्याय पढ़के भोग पाया तब चण्डालनी के प्राण छूट गए, देव देही पाई, आकाश से विमान आए, तिस पर बैठ कर बैकुंठ को चली। साधु ने पूछा अरी तैने कौन पुण्य किया है जिसके करने से बैकुंठ को चली है। चण्डालनी ने कहा, हे सन्तजी! तेरे इस पाठ को श्रवण कर मैं देवदेही लोक को चली हूं तब पारखदों को कहा कोई ऐसा यत्न करो जिस सिंह ने मुझे पिछले गऊका के जन्म में खाया था, उसको भी साथ ले चलो। तब उस साधु से प्रार्थना की, हे सन्तजी! गीता जी के एक श्लोक के पाठ का फल उस सिंह के निमित्त

भी देवो जो उसका भी उद्धार होवे तब उस सन्त ने गीता पाठ का फल दिया, तत्काल उस सिंह की देह भी छूटी देव देही पाई, दोनों विमानों पर चढकर बैकुंठबासी हुए, परम धाम को प्राप्त हुए। तब श्रीनारायणजी ने कहा हे लक्ष्मी ! यह तेरहवें अध्याय का महात्म्य है प्रीति साथ पढने की बात का कुछ फल कहा नहीं जाता। अनजानपने से पढे तौ भी निस्सन्देह मेरे परमधाम को प्राप्त होता है ॥

इति श्री सतीईश्वरसम्बादे श्रीगीतामहात्म्यनाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

———

* अथ चौदहवा अध्याय *

गुण त्रय विभाग योग ।

श्रीकृष्ण भगवान् जी अर्जुन प्रति कहते हैं, हे अर्जुन ! फिर मैं तुझको परम गुह्यज्ञान जो सर्वज्ञानों से उत्तम है सो कहता हूं, जिस ज्ञान के जानने से मेरे भक्त मुनीश्वर परमसिद्ध जो हैं सो पायकर परमानन्द अविनाशी पद में जाय प्राप्त होते हैं ॥१॥ जिन्होंने मेरे इस ज्ञान का आसरा लिया है और जिन्हों ने मेरा यह ज्ञान सुना है जो श्रीकृष्ण जी ऐसे बड़े हैं ऐसा पछान के जिन्हों ने मेरा आसरा लिया है मेरी शरण

आए हैं तिन्हों का मेरे जैसा ही धर्म होता है सो कया
धर्म सो मेरा भक्त संसार की प्रलय साथ प्रलय नहीं
होता और संसार की उत्पात्ति साथ उत्पत्त नहीं होता
जैसे मैं संसार की प्रलय साथ प्रलय नहीं होता संसार
की उत्पत्ति साथ उपजता नहीं यह मेरा धर्म है तैसेही
तू मेरे भक्तों को जान॥२॥ हे अर्जुन! यह मेरे ज्ञान की
वडियाई और फल कहा है। हे अर्जुन! और ज्ञान भी
सुन। मेरा नाम महाब्रह्म है सो क्या कारण तिसका
अर्थ सुन जब संसार की प्रलय होती है, तब सारे संसार
को अपने उदर में रख लेता हूं। जब संसार के उपजा-

वने का समय आता है, तब अपने उदर से प्रकट कर देता हूं। इसी कारण से मेरा नाम महद्ब्रह्म है। महद् ब्रह्म कहिये बड़ा ब्रह्म। हे कुन्तीनन्दन! मेरा नाम महद्ब्रह्म जो है, तिसका अर्थ सुन ॥ ३ ॥ सब एक ही ईश्वर से अनेक भान्ति का संसार प्रकट हुआ है, जितने देहधारी वरते हैं और अब जितने वरतते हैं और जितने आगे होवेंगे, सो देख किसी जैसा कोई नहीं और ही भान्ति के हैं, तिनकी प्रकृति भिन्न २ है, तिनके शब्द जुदे जुदे हैं ॥४॥ हे अर्जुन! वीर्य्य के देनेहारा पिता भी आप हूं, राजस, तामस, शांतक यह तीनों गुण जो देह

में व्यापते हैं और यह अविनाशी जीव जो सब देहों में व्यापता है, सो माया के तीनों गुणों साथ मिला हुआ बांधा है ॥५॥ जिस प्रकार यहजीव तीनों गुणों साथ बांधा है सो सुन प्रथम शांतक का प्रकार सुन, निर्मल पवित्र इन्द्रियों में प्रकाश मन विखे निर्मल प्रकाश अज्ञान रोग से रहित अरोगी और हे अनघ ! निष्पाप अर्जुन ! इस प्रकार यह जीव शांतक गुणकर बांधा है॥६॥ और राजस गुण का वृत्तान्त कुटुम्ब के लोगों साथ मोह ममता यह मेरा है यह उनका है, द्रव्य खटने की तृष्णा से इस प्रकार जीव जो गुणों कर बांधा है । हे

अर्जुन ! यह ऋुगा सम्बन्धी सब कुटुम्ब के लोग हैं,
इस प्रकार जैसे बेडी का पूर नाउका पर सब लोक
इकट्ठे हुए हैं तैसे ही कुटुम्ब के लोग हैं इन साथ दृढ़
ममता मोह जीव ने लगाये रखी है यह राजस गुण
हैं ॥७॥ अब तामस गुण का वृत्तान्त सुन तामसगुण
जो है तिनको तू सारा अज्ञान जान असावधानता गो-
बिंद का बिसरना आलसी होना निद्रा बहुत होनी इस
प्रकार जीव तामसी गुणमें बांधा हुआ निद्रा आलस असा-
वधानता यह तीनों देहधारियों को मोहनहारे हैं और
तामस से उपजे है ॥८॥ शांतक गुण सुखों को उपजावे है

और हे भारतवंशियों में श्रेष्ठ अर्जुन ! राजस गुणकर्म
को प्रकट करता है, निहकाम नहीं रहने देता और
अज्ञान असावधानता यह तामसके गुणसे प्रकटे हैं॥९॥
यह तीनों गुण देह में बरतते हैं सदा ही कभी शांतक
कभी राजस कभी तामस बरते हैं कभी यह बधते घटते
हैं ॥१०॥ जैसे बरतें तिसी समान जाने जो कौन गुण
वर्तता है जब सभी देहके द्वारोंमें प्रकाश होवे निर्मलनेत्रों
में निर्मल प्रकाश नासिका से निर्मल स्वास चले श्रवणों में
सुरति भली होए देह भी निर्मल होय अरोग्य होए दोनों
तल के द्वारे स्वच्छ मन में परमेश्वर का स्मरण होए इन

लक्षणोंसे जाने जो मेरी देह विखे सतोगुण है ११हे अर्जुन! जब रजोगुण बढता है तब द्रव्य बढने का लोभ होता है लोभ कर कार्य में लगे निहकाम कभी न बैठे तब जाने राजस गुण बढता है ॥१२॥ जब तामस गुण बढे तब देहके द्वारे में प्रकाश थोडा परमेश्वर का भूलना तब जानिये तामस गुण बढा है ॥१३॥ अब और सुन जब शांतक गुण बढ में देह का त्याग होवे, तब उत्तम जो भले देवताके लोक हैं सर्व सुखों के देनेहारे, हे अर्जुन! तिन को जाय प्राप्ति होता है ॥१४॥ जब रजोगुण बढे तो देह का त्याग होवे तब फिर मनुष्य देह को पावे है, जब

जो पशु
तमोगुण बढ़े दे का त्याग होवे मूढ योनि
आदिक हैं अज्ञानी तिनको प्राप्ति होता है॥१२॥ अब
अर्जुन तीनों गुणोंके फल कहे हैं सात्विक गुण का फल
निर्मल राजसका फल दुःख तामसगुण का फल अज्ञान है
॥१६॥ सतोगुण से ज्ञान उपजे है रजोगुण से लोभ और
प्रमाद उपजे है तमोगुण से मोह अज्ञान उपजे है॥१७
जिन मनुष्यों की शांतकी प्रकृति है सो देह त्यागने के
समे ऊपरके लोकको पावे हैं जिनकी राजसी प्रकृति है
सो देहको त्याग के पृथ्वी पर जन्म पावे हैं जिनकी
तामसी प्रकृति है सो देह को त्याग के पृथ्वी के तले

पाताल लोकमें प्राप्त होते हैं॥१८॥ हे अर्जुन! मेरे पद विषे जब जीव जावे सो सुन जब मुझको पहचाने तब मेरेपद में प्राप्त होते हैं मेरा पहिचानना क्या है सो सुन मैं इन तीनों गुणों का कौतुक देखनहारा हूं इन गुणोंसे अतीत हूं ऐसा मुझको पहिचाने सो मेरे परमानन्द अविनाशी पद में जाय प्राप्त होते हैं॥१९॥मेरे जाननेके लक्षण सुन फिर मैं कैसा हूं इन तीनों गुणोंका निर्णय करनेहारा हूं। जीवोंकी देहों को उत्पन्न करता हूं तीनों गुणों से अतीत हूं ऐसा जो प्राणी मुझ को पहिचाने सो जन्म मरण और बुढापा तिनके दुःखों को काट कर मुक्त होता

करने से संसार के जन्म
है। इस ब्रह्म ज्ञान के अमृतपान करने से संसार के जन्म
मरणमें नहीं आवता है मुक्ति पाता है ॥२०॥ अर्जुन यह
वचन सुनं कर दीन दयालु श्रीकृष्ण देवजी से पूछता
है। अर्जुनोवाच—हे भगवान कृपानिधान जी ! यह
जीव जो तीनों गुणों से बांधा है इसके छूटने की विधि
कहो और जो देह साथ होते ही तीन गुणों से अतीत
हैं तिन के लक्षण कहो जो जिस कर समझूं जो यह तीनों
गुणों से रहित है ॥२१॥ अर्जुन की बेनती मानकर
श्रीकृष्ण भगवान जी बोले हे अर्जुन ! जो देह साथ
होते भी तीन गुणों से अतीत हैं तिनके लक्षण सुन,

जो कोई गुण देह विखे उपजते वरतते हैं तिन कर्मों की कल्पना नाकरे जो यह गुण बुरा है कि भला है और तिस गुण के दूर होने की वांछा भीना कर जो यह दूर होजावे ऐसा गुणोंसे उदास रहे ॥२२॥ जो इस साथ मेरा क्या प्रयोजन है जैसे विष्णुकी माया गुणोंको उपजावे है तैसे ही देहों में सुभावों साथ मिले हुए गुण वरते हैं मैं आत्म रूप इनसे न्यारा हूं इस प्रकार गुणों का हलाया चलाया चले नहीं ॥२३॥ फिर कैसा हूं दुःख सुख में एक समान उस्तुति निन्दा में एक जैसा कंचन माटी पाषाण एक समान जाने ॥२४॥ आदर अनादर करने से

सुखी दुःखी न होवे शत्रु मित्र एक जैसा जाने किसी कार्य
का आरम्भ न करे॥२५॥ हे अर्जुन! तीनों गुणों से अतीत
का प्रश्न जो तूने किया था तिसके लक्षण यह हैं अब जिस
प्रकार यह तीनों गुणों से अतीत होय सो सुन हे अर्जुन!
विश्वम्भर प्रभु पहिचान के केवल मेरे में सुरति लगावे
और सब अवतारों से मन उठाय शीतल स्वभाव मेरी
भक्ति में मन देवे फिर क्या कहे हे प्रभु पूरण ब्रह्म मैं तुमारा
दास हूं और तुम करतार सब के कर्त्ता हो मैं दीन
अनाथ हूं कृतघ्न तेरे गुण किये को मैं नहीं जानता
तेरे बिना होर प्रभु नहीं मैं तेरे अधीन हूं हम कर्म

यन्त्र में पड़े भ्रमते हैं तूं तिस यन्त्र का सूत्रधार हैं हे देव ! मैं तेरी शरण हूं तूं सबका आसरा है॥२६॥ हे अर्जुन ! जो इस प्रकार मेरा दास होवे केवल अवाछी होय के मेरी ही शर्ण आवे सो इन तीनों गुणों से अतीत होता है सो देह के साथ होते ही मुक्ति पावे है और जीवन मुक्त होवे है यह मार्ग तीन गुणों से अतीत होने का है और मैं कैसा हूं सो तिस आत्मा का प्रताप सुन इतनी बातों का नाम ब्रह्म है एक तो यह सारी विश्व जो है ब्रह्म रूप है एक वेद पुराण शास्त्र यह सभ शब्द ब्रह्म हैं और मुक्ति का नाम भी ब्रह्म है मुक्ति का घाम बैकुंठता

ब्रह्म का मैं ही ठाकुर हूं
का नाम भी ब्रह्म है इन सभ ब्रह्म का मैं ही ठाकुर हूं
इन सभ की शोभा मैंही हूं सो ब्रह्म कैसा है अविनाशी
ना मरता है न जनमता हूं पुरातन सभ से पहिला धर्म
रूप इन तीनों लोक में बसने हारा और इनसे अतीत भी हूं
गुण ग्राही सुख का समुद्र भगवान् सभ का प्यारा हूं॥२७॥
इति श्रीभगवतगीता श्रीकृष्ण अर्जुन संवादे गुणत्रयविभाग योगोनाम चौदसमों अध्याय १४॥

* अथ चौदवें अध्याय का महात्म *

श्रीनारायणोवाच—हे लक्ष्मी ! उत्तर देश कशमीर
विखे सरस्वती क्षेत्र में एक पण्डित विद्यावान् रहिता
था वहां के राजे का नाम सूर्य्यवर्म्मा था संगलदीप के

राजे साथ तिस की प्रीति थी एक समय तिस राजा ने संगलदीप से बडे ज्वाहर मोती घोडे बहुत कीमत के भेजे थे तब कश्मीर के राजे ने मन में विचारा कि मैं क्या भेजूं एक दिन अपने वजीर से पूछा हम क्या भेजें वजीर ने कहा जो वस्तु वहां न होवे सो भेजनी अच्छी है राजा ने कहा और तो सभ वस्तु वहां हैं एक शिकारी कुत्ते वहा नहीं हैं वोह भेजो तब सोने की जंजीरों साथ बन्धे हुए मखमलों के गदेले डोलियों में बैठाये के कुत्ते संगलदीप में पहुंचाये देखकर राजा बडा प्रसन्न हुआ कहा यह शिकारी कुत्ते यहां नहीं थे यह मेरे मित्र ने बहुत

[redacted]

ला किया हम शिकार खेला करेंगे कई दिन गुजरे
क दिन राजा शिकार खेलने चला और भी शिकार
खेलने वाले साथ चले सङ्गलदीप के राजे ने और राजे
साथ शरत बांधी जिसका कुत्ता शिकार मारे सो शरत
लेवे तब सब राजाओं ने अपने अपने कुत्ते छोडे एक
ससा निकला मगर कुत्ते दौडे ससा दूर निकल गया और
कुत्ते पीछे रहे सङ्गलदीप के राजे के कुत्ते ने ससे को पकडा
लोगों ने शोर किया कुत्ता दुचिता हो गया ससा फिर
भागा कुत्ते के दांत ससे को लगे थे रुधिर टपकता जाए
ससा भागा जाए और सभ पीछे रह गए जाते जाते

बन में एक कच्चा तालाब पानी से भरा हुआ था किनारे पर कुटिया थी वहां साधू रहिता था तिस तालाब में ससा जाए गिरा कुत्ता भी मगर ही जाय पडा इतने में राजा भी घोडा दौडाय कर पहुंचा क्या देखे दोनों मरे पडे हैं और देव देही पायकर बैकुण्ठ को चले हैं राजा को देखकर धन्यवाद किया कहा हे राजा ! तू धन्य है तेरे प्रसाद से हमने देवदेही पाई है राजा ने पूछा यह कैसे ? उन दोनों ने कहा हम नहीं जानते इस जल के छूने से हमें देवदेही मिली राजा ने कहा धन्य मेरे भाग जो तुम्हारा उद्धार हुआ है इतना सुन

कुराठ को गये राजा ने उस सन्त को नमस्कार कर के पूछा हे सन्त जी ! यह वारता कहो, यह कौतुक आश्चर्यं का देखा है, ससा स्वान दोनों इस जल के स्पर्श करने से उद्धार होगये हैं यह जल कैसा है ? उस सन्त ने कहा हे राजा ! मेरा गुरु यहा रहिता था नित्य स्नान कर के गीता के चौदहवें अध्याय का पाठ किया करता था मैं भी यहा स्नान करके गीता का पाठ करता हूं राजा ने कहा धन्य हो सन्त जी ! आपके प्रतापकर ऐसी जूनों का उद्धार हुआ है मेरे भी धन्य भाग हैं जो आपका दर्शन हुआ है सन्त ने कहा तुम कहां के राजे हो ? उसने कहा

मैं संगलदीप का राजा हूं। हे सन्तजी ! मुझको इनकी पिछली कथा सुनावो जो यह दोनों कौन थे, सन्त ने कहा हे राजा ! यह ससा पिछले जन्म ब्राह्मणथा यह जन्म से भ्रष्ट था और यह कुत्तिया इसकी स्त्री थी स्त्री को बहुत खिझाया करता था स्त्री ने इसे विष देकर मारा और आप भी मर गई जब दोनों मर कर जम लोक में गये तब धर्मराज ने हुक्म दिया कि पति को ससे का जन्म देवो स्त्री को कुत्तिया का जन्म देवो तब इन दोनों ने पुकार की महाराज हमारा उद्धार कब होवेगा तब धर्मराज ने कहा जब श्रीगीता जी के चौदहवें अध्याय के पाठ करने वाले सन्तों

के स्थान का जल स्पर्श होगा तब तुम्हारा उद्धार होगा सो यह दोनों धर्मराज के वर कर उद्धरे हैं, तब राजा नमस्कार करके अपने घर आया अपने पण्डितजी से नित्य प्रति श्रीगीताजी के चौदहवें अध्याय का पाठ सुनने लगा नित्य प्रति सुनने से राजा का उद्धार हुआ देह त्याग कर वैकुण्ठ को गया। श्रीनारायणजी ने कहा हे लक्ष्मी ! यह चौदहवें अध्याय का महात्म हैं जो मैंने कहा है तैने श्रवण किया है।

इति श्री सवी ईश्वरसम्बादे उत्तराखण्डे गीता महात्म्य नाम चौदहवों अध्याय ॥१४॥

* अथ पन्द्रहवा अध्याय *

पुरुषोत्तम योग।

श्रीभगवानोवाच—श्रीकृष्ण भगवान् जी अर्जुन प्रति कहे हैं हे अर्जुन ! यह संसार वृक्ष रूप है इस वृक्ष का मूल आदि जड़ ऊपर है शाखा तले हैं यह उलटा वृक्ष रूप है जब यह मनुष्य माता के गर्भ में होता है तब सिर तले होता है यह सिर इस मनुष्य रूपी वृक्ष की जड है चरण और हाथ इसकी शाखा हैं जब गर्भ से बाहर निकलता है तब उलटा हो चलता है इस से उलटा वृक्ष है अर्जुन इसको विनाशी भी कहते हैं और

अविनाशी भी कहते हैं इसका अर्थ सुन आत्मा अविनाशी
है और देह विनाशी है इसी से विनाशी कहतेहैं और वेद
इस वृक्ष के पत्र हैं इस वृक्ष को पहिचाने सो वेद का पण्डित
पूर्ण कहावे है ॥१॥ और यह वृक्ष ऊपर ब्रह्मा के लोक
तले शेषनाग के लोक तक पसर रहा है। और शांतक
राजस तामस यह तीनों गुण इस वृक्ष के डाल हैं
देखना सुनना सूंघना खाना पहरना इस वृक्ष को गुच्छे
लगे हैं ॥२॥ और इसकी भूमि कौन है जिस पर वृक्ष
लगा है सो सुन हे अर्जुन! मैं और मेरी की इस चैत-
न्यता से इस पृथ्वी पर यह वृक्ष लगा है जो यह मैं हूं

यह मेरा है यह मेरी जात है यह मेरा नाम है तिसपर
यह वृक्ष लगा है पवण साथ गिरने के भय से इस को
जेवडे कौन बन्धे हैं पवण झखड कौन है सो सुन जेवडे
तो ऋण सम्बन्धि कुटुम्ब के लोक है सो इन साथ वृक्ष
बाधा हुआ है और इस वृक्ष को जान नहीं सकते क्यों
जो इसका आदि अन्त किसे के कहे कहाये पाया नहीं
जाता मैं मेरी की चैतन्यता पर दृढ लगा है झखड यह
है जहां मेरे सन्त मेरी महिमा को गावते सुनते पढते
नहीं हैं। गीता भागवत इत्यादिक, इस झखड करके
संसार वृक्ष देह जीव का कुछ नहीं रहिता हे अर्जुन !

इस मायारूपी वृक्ष पर यह जीव फंसा हुआ है अब इस
वृक्ष के काटने का उपाय सुन, प्रथम कुटुम्ब के लोकों का
संग त्यागीये यह असंग एक शस्त्र हुआ, इस शस्त्र को
पकड़ना इन हाथों से जो परम पुरुषार्थ कर दृढ़ निश्चय
करना यह हाथ हुए, असंगता रूपी खड़ग पुरुषार्थ रूपी
हाथों में पकडकर इसे काट डारे॥३॥जब असंग हुए तिस
से पीछे तिस परम पुरुष के मार्ग पर सावधान होकर चले,
सो कौन ? जिसको पायकर। फिर संसार के जन्म मरण को
ना पावे, सावधान क्या होना सो सुन, दोनों हाथ जोड के
सिर नवाय के नमस्कार कर मुख से कहे हे आदि पुरुष

विश्वम्भर जगदीशजी मैं तेरी शरण हां। हे अर्जुन! आदि पुरुष का अर्थ सुन और प्रताप सुन कई कोट वैकुंठ के ऊपर तिसका स्थान है और निराधार आसन है अपने आधार कर विराजमान है यह आदि पुरुष का स्थान कहा और प्रताप यह है कि तिस आदि पुरुष के स्थान से कई कोटि ब्रह्मण्ड कई कोटि चौरासी लाख जीव जोनी और ही और रचना साथ भरेहुए निरन्तर निकसते ही रहते हैं आप फिर पूर्ण का पूर्ण है सदा अटल है यह आदि पुरुष का प्रताप है विश्व को करता रहता है सर्व जगत का ईश्वर है ऐसे आदिपुरुष की सर्व कुटुम्बादि का त्याग

कर शरणी आवे ॥४॥ फिर कैसी युक्ति है, अपना मांन दूर करके कहे कि मैं किसी जैसा नहीं निहकपटी एकान्त वासी निरबन्ध निरमोही एक पारब्रह्म की सेवा करे। हे अर्जुन! स्वास के अन्दर बाहर आवते जावते में मेरा ही नाम जपे, हे आदि पुरुष भगवान, मैं तेरी शरण हूं यह जाप जपे मेरे चरणों की सेवा मेरे स्मरण बिना किसी की कामना न करे इस प्रकार भगत जो मेरी शरण आवे तिस को मैं क्या करूं सो सुन यह संसार दुःख सुख हर्ष शोक शीत उष्ण इन विकारों से पूर्ण है सो ऐसे संसार समुद्र दुःख रूप से तिस अपने ज्ञानी भगत को मुक्ति

करता हूं और अपने अविनाशी पद में प्राप्ति करता हूं ॥५॥ कैसा है अविनाशी पद, जहां सूर्य चन्द्र की भी गम्यता नहीं है, जहा से जाकर फिर नहीं आवे है, सो ऐसा परमानन्द अविनाशी घर मेरा है, यह आदि पुरुष और अविनाशी पद में जाय प्राप्त होते हैं तिनका वृत्तान्त मैंने कहा है ॥६॥ अब अर्जुन और सुन, यह जो सर्व लोकों में जीव भूत है सो मेरी अंश है यह सनातन पुरातन है पांच इन्द्रियां छेवां मन यह छेही इस जीव को अपने२ गुणों की ओर खैंचते हैं ॥७॥अब शरीर का त्यागना और शरीर का लेना क्या है सो सुन,इस देह का ईश्वर

जो जीव है सो जीव देह को जब त्यागता है तब और जीव को पावे है, जैसे मकड़ी ने एक चरण टिकाया फिर दूसरा उठाए आगे रखा, फिर पिछला चरण उठाए आगे रखा, जब आगे ठौर पाई जाती है तब पिछला चरण उठाए आगे रखती है, तैसे ही हे अर्जुन ! देह का त्यागना और देह का लेना इस जीव को उलांघ मात्र है, जैसी वाश्ना को लिये देह को त्यागे है सोई वाश्ना साथ लिये जाता है सो कैसे? जिस तरा पवण किसी वस्तु को छुह कर चलती है तैसी वाश्ना आवती है, वैसे जिस वाश्ना को लिये शरीर का त्याग होवे तिसी वाश्ना को लिए जीव जाता है॥८॥ नेत्र

श्रोत्र स्पर्श त्वचा जिह्वा नासका यह पांचों इन्द्रिया इन का अधिकारी छेवां मन इन के साथ मिल कर यह जीव विषयों को भोगता है॥९॥ खावता पीवता चलता बैठता और जो कार्य किरत करता है सो सभ जीव करे है इन्द्रियां और मन के साथ रला मिला करे है पर यह कौतक मूढ जो प्राणी हैं तिनको नहीं दिखता है जो प्राणी ज्ञान नेत्रों से संयुक्त हैं सो इस कौतुक को देखते हैं॥१०॥ ज्ञान नेत्र किस प्रकार होते हैं, हे अर्जुन! जब मेरे सिमर्ण ध्यान योग साथ जुडे हैं तब सिमर्ण कर ज्ञान उपजे है तिन योगियां में भी कोई एक जो

मेरे सिमर्ण साथ पवित्र हुआ है तिस को ज्ञान उपजे है तिस ज्ञान उपजने से मेरी रचना का कौतुक देखता है ॥११॥ क्या कौतुक देखता है ? यह सूर्य जो अपने प्रकाश कर सर्व लोकों का अन्धकार दूर करे है तिस सुर्य में तेज प्रभु का जाने है ऐसे ही चन्द्रमा विखे तेज जो है सो भी प्रभु का जाने है ऐसे ही अग्नि बिखे तेज जो है सो भी प्रभु का जाने है ॥१२॥ पृथ्वी जो सर्व जड है चैतन्य स्थावर जंगम को धार कर भूत प्राणियों को अपने पर खडी हो रही है सो तिस पृथ्वी के तले बल प्रभुका जाना जो तिस प्रभुके आसरे है और जितने

मनुष्यों के अंश हैं अन्न घास तृण वृक्ष इन सब को चन्द्रमा की किरणों साथ इन में रस जो हैं सो सभ मैं ही मेलता हूं ॥१३॥ और मैं ही सर्व भूत प्राणियों के हृदय में अग्नि होकर व्यापता हूं प्राण वायु ऊपर की अपान वायु तले की इन से युक्त हुआ मैं ही चार प्रकार का भोजन पचाता हूं ॥१४॥ और मैं ही सब प्राणियों के हृदय में अन्तर्यामी रूप से वास करता हूं मेरे से ही स्मृति ज्ञान और भूलजाना होता है सब वेदों करके मैं ही जानने योग हूं और मैं ही वेदान्तका कर्त्ता और वेदों को जानने वाला हूं ॥१५॥

हे अर्जुन ! जब परमात्मा की पलक लगे तब चौदह भुवन प्रलय होजाते हैं ऐसा महा प्रतापी हूं इसी से मुझको आत्मा कहते हैं मुझको पुरुषोत्तम भी कहते हैं ॥१६॥ ताका अर्थ सुन विनासिया हुआ जो शरीर सो पुरुषोत्तम मे अतीव है दूसरा जो अविनाशी पुरुष तिस से उत्तम है इसी से वेदों में प्रमात्मा कहते है ॥१७॥ हे अर्जुन ! सो पुरुषोत्तम मैं ही हूं और जिन भगतोंने मुझको पहिचाना है फिर तिनोंने क्या करना है॥१८॥ सर्व सिद्धों में सर्व कालों में मेरा ही भजन करे ॥ १९॥ हे अर्जुन ! इस प्रकार शास्त्र वेद द्वारा मुझको

पछाणे मेरे चरणों साथ दृढ़ निश्चय करे तो कृतार्थ होवेगा मेरे पदको प्राप्त होवेगा ॥२०॥

इति श्रीभगवत गीता सूपनिषद् सुब्रह्मविद्या योग शास्त्रे संसार वृक्ष योगो नाम पंचदशो॥१५॥

* अथ पन्द्रवें अध्याय का महात्म *

श्रीनारायणोवाच । हे लक्ष्मी ! अब पंद्रवें अध्याय का महात्म सुन । उत्तर देश में एक नृसिंह नामा राजा था और सुभगनामा मंत्री था राजा को बडा भरोसा मंत्री पर था मनमें यही था जो मंत्री मेरा बहुत भला है और मन्त्री के मन में कपट था मन्त्री यही चाहता था जो राजा को मारकर यह राज्य मैं ही करूं इसी

भांत कई काल व्यतीत हुआ एक दिन राजा सोया पडा था और नौकर चाकर भी सोये पडे थे, तब वजीर ने सब को मारा राजा को भी मारा आप राज करने लगा राज करते बहुत काल व्यतीत हुआ एक दिन वह भी मर गिया यमराज के पास बांध कर दूत लेगए धर्मराज ने कहा हे यमदूतो ! यह बडा पापी है इस को बडे घोर नर्क में डालो । हे लक्ष्मी ! इसी प्रकार वोह पापी कई नर्क भोगता भोगता धर्मराज की आज्ञा से घोड़े की जून में आया संगलदीप में जाय घोडा भया बडे घोडों के सौदागर ने उसे मोल ले लिया

और भी घोड़े खरीदकर अपने देश को चला । चलते चलते अपने देश में आया तब वहां के राजा ने सुना जो अमुक सौदागर बहुत घोडे ले आया है तब राजा ने उसे बुलाया देखकर घोडे खरीदे उस घोडे को भी खरीदा जब उस घोडे को फेरा तब राजे की तरफ देख कर सिर फेरा राजा ने देखकर कहा यह क्या कारण है घोडे ने सिर फेरा है तब राजा ने पंडित बुलाकर पूछा जो घोडा मोल लेकर फेरा था इस घोडे ने हम को देखकर सिर फेरा है इसका क्या कारण है ? तब पंडित ने कहा हे राजन ! इस घोडे ने तुमको सिर

निवाया है राजा ने कहा ये बात नहीं, फिर कई दिन के बाद राजा शिकार खेलने को गिया उसी घोडे पर स्वारी करके, वोह घोडा जलदी चले राजा शिकार खेलता २ बहुत दूर चला गिया आगे राजा शिकार बंदूक तीर से मारे प्या उस दिन हाथों साथ शिकार पकड के मारे राजा बडा प्रसन्न हुआ दुपैहर होगई राजा को त्रिषा लगी बन में एक अतीत देखा कुटिया में बैठा है तालाब जल से भरा है वहां राजा जाय उतरा घोडा वृक्ष से बाधकर कुटिया में गिया देखे तो साधू अपने पुत्र को गीता के पंद्रवें अध्याय का पाठ सिखाए रहा है वृक्ष

के पत्ते पर श्लोक लिख दिया है बालक को कहा खेलते फिरो और इस को कंठ भी करो जिस वृक्ष से राजा ने घोडा बांधा था उसी वृक्ष के पत्ते पर श्रीगीता जी का श्लोक लिखा था वोह बालक पत्ता लेकर खेले भी पढ़े भी उस पत्ते को घोडे ने देखा ततकाल उसकी देह छुटी देवदेही पाई स्वर्ग से विमान आए तिस पर बैठ बैकुंठ को चला आकाश में खडा हुआ इतने में राजा पानी पीकर बाहर आया देखे तो घोडा मरा है राजा चिन्तावान हुआ कहे यह घोडा किसने मारा इसे क्या हुआ इतने में वोह बोला हे राजा ! तेरे घोडे

का चैतन्य मैं हूं मैंने अब देवदेही पाई है बैकुंठ को चला हूं राजा ने पूछा तैं कौन पुण्य किया है उसने कहा हे राजा ! यह बात ऋषिश्वर से पूछो राजा ने ऋषीश्वर को बुला कर पूछा हे ऋषिश्वर जी ! यह क्या कारण हुआ है ? ऋषीश्वर ने कहा हे राजा ! गीता का श्लोक लिखा हुआ पत्ता इस के आगे पड़ा है घोड़े ने अक्षर देखे हैं इस कारण घोड़े की गति भई, राजा ने पूछा घोड़ा पीछे कौन था ? और घोड़े के सिर फेरने की बात भी राजा ने कही कि हे ऋषीश्वर जी ! यह बात मुझे सुनाओ जो मेरा और घोड़े का क्या सम्बन्ध था तब ऋषीश्वर ने कहा

हे राजा ! पिछले जन्म भी तू राजा था यह तेरा वजीर था यह तुझ को मार कर राज आप करता रहा तू अब भी राजा हुआ यह मर कर धर्मराज के पास गिया धर्मराज ने धृक्कार किया कहा इस पापी कृतघ्न को खूब नरक भुगवाओ बडे नरक भोगता २ घोडे के जन्म आया, संगल दीप से आकर तेरे पास बिका जब इस ने सिर हिलाया तब यह कहता था हे राजा ! तू मुझे पछानता नहीं परन्तु मैं पछताना हूं यह कह कर ऋषिजी चुपहुए राजाने विस्मय होकर दंडवत करी पीछे से और लश्कर के लोक आए मिले राजा असवार हो अपने घर आया अपने पुत्र

को राज देकर आप बन को गया तप करने लगा श्री गीता जी के पंद्रवें अध्याय का पाठ किया करे तिसके प्रसाद कर राजा भी परमगति का अधिकारी हुआ। श्री नारायण जी कहे हैं हे लक्ष्मी ! पन्द्रवें अध्याय का महात्म है जो मैंने कहा है तैने सुना है॥

इति श्री पद्मपुराणे सती ईश्वर संवादे उत्तराखंडे गीता महात्मों नाम पंचदसमों अध्याय ॥१५॥

* अथ सोलवां अध्याय *

देव आसुर संग्राम विभाग योग।

श्री भगवानोवाच-हे अर्जुन ! अब और सुन, एक मनुष्यों के स्वभाव देवतों जैसे होते हैं कईयों के दैत्यों

के से स्वभाव होते हैं, प्रथम जिन में देवतों के स्वभाव हैं तिनकी बात सुन, पहिले निरभय किसी का डर न होना अन्तष्करण जो हृदय सो निर्मल अति शुद्धि और मेरे जानने का ज्ञान तिनके मन में, मेरे स्मरण योग साथ जुडे हुए, यथाशक्ति दान करना इन्द्रियां जीतना यज्ञ करने और मेरी महिमा जो वेदों में गाई है तिस को सुनना पढ़ना, सहस्त्रशीर्षा पढना पुराणों के स्तोत्र पढने कीरतन करना तपस्या करनी ॥१॥ हे अर्जुन ! तपस्या का महात्म सतारवें अध्याय में कहूंगा, अहिंसा करनी किसी जीव को ने दुखाना हृदय कोमल सत्य बाणी बोलना

किसी से क्रोध न करना शरीर की रक्षा मात्र छादन भोजन करना इस से अधिक संचे न करना इसका नाम त्याग है। सदा सन्तोष में रहना किसी की निन्दा न करनी यथा शक्ति सब को सुख देना लोभ से रहित पाप करने से लज्जा करना चञ्चल स्वभाव से रहित होना ॥२॥ निश्चल आसन इन्द्रियां को और मन को निश्चल रखना और तेजस्वी क्या जो तिसकी अविज्ञा कोई न कर सके सभ कोई तिसको नमस्कार करे सभ कोई पूजा करे क्षमावन्त कोई दुर्वचन न कहि जाए कोई दुःख देजाए सभ कुछ सहारे, और धीर्य रखे एक गोबिन्द की शरण

कर मेरी शरण आए हैं और फिर मेरे चरणों को छोड
और बातों की मन में चितवना करे हैं क्या यह वांछा
जो मुझ जैसा और कोई नहीं क्रोधी कठोर बोलना हे
पार्थ यह अतीत पाखण्डी होते हैं।४।हे अर्जुन ! दो प्रकार
की प्रकृति दैंतों की होती है, इनकी उत्पत्ति अज्ञान से है
इन दोनों प्रकृतियों का फल सुन, जिन मनुष्यों में देवता
की प्रकृति है सो प्राणी संसार से मुक्त होते हैं जिन
विखे दैतों की प्रकृति है सो प्राणी संसार के जन्म मरण
के बन्धन में पडे रहते हैं। जब यह वचन श्रीभगवान
जी के मुख से श्रवण किये तब अर्जुन अपने मन में

विचारने लगा हे मन! दैतोंका स्वभाव तेरेमें यदि कोई होगा तब इसको देख कर श्रीकृष्ण जी सह न सके, कमलनैन केशवजी तत्काल बोले, हे अर्जुन! तू अपने में मत सोच, देवतों की प्रकृति तेरे में आई है ॥५॥ अर्जुन यह स्वभाव इन मनुष्यों में वरते हैं और देवताओं के स्वभाव भी विस्तार से कहे हैं, दैतों के स्वभाव थोडे कहे हैं, सो कुछ थोडे और भी सुन ॥६॥ हे अर्जुन! दैतों के स्वभाव वाले मनुष्य नां तो गृहस्थ में सुखी रहते हैं नां अतीत होकर सुखी होते हैं, अतीत होने का मार्ग जानते नहीं जो कैसे अतीत होइता है ना पवित्रता को जानते हैं ॥७॥ और मैं जो

नहीं देख सकते, आपस में
सत स्वरूप हूं तिसको भी नहीं देख सकते, आपस में मिलते हैं तो यह कहते हैं कि परमेश्वर कहां है? किसी ने देखा है? परमेश्वर है नहीं संसार का कर्त्ता कोई नहीं है, हम आपही उत्पन्न हुए हैं, सो प्राणी मूर्ख अंधमति आपही को परमेश्वर कहते हैं ॥८॥ और सब बातों में से यह एक भली बात समझ रखी है जो उत्तम स्वादिष्ट भोजन भोग भोगिये और अच्छे २ सुगन्ध वाले वस्त्र पैहरिये सुन्दर स्त्रियों साथ सुख भोगिये इन बातों को सुख रूप समझ रखा है ॥९॥ इनको ऐसा समझने से अशुद्ध आत्मा तिनका नष्ट हुआ और थोड़ी मत जिन

की है सो ऐसे कार्य आरम्भ करते हैं जिस करके आप भी कष्ट पाते हैं और औरों को भी कष्ट देते हैं ॥१०॥ ऐसे कर्मों का तो आरंभ करते हैं और दूसरे जो कभी तरिया ना जाय ऐसा जो कर्म तिस का आसरा पकड रखा है पाखण्ड कर्मी मद अंधता कर अंधे हुए हैं सो तिस अन्धेरे साथ उनमत्त मतवारे होरहे हैं ॥११॥ माया के मोहे हुए मिथ्या वस्तु को पकड रहे हैं अति अपवित्रतास्वभाव को वरतते हैं संसार की प्रलय तक नित्य ही चिन्ता में मगन रहते हैं काम की दृढता में दृढ आशा कर बंधे हुए काम क्रोध में मगन है ॥१२॥ चित्त

जिन का निष्फल कर्म कर द्रव्य एकत्र करते हैं वचन झूठ इन कर के अपने आप को नाश करते हैं इसको बडा लाभ जानते हैं यह मेरा मनोर्थ पूरा हुआ है यह सवेरे मैं पाऊंगा यह अगले दिन पाऊंगा॥१३॥शत्रुओं के मारने को सामर्थ हूं सिद्ध हूं बलवान हूं सुखी हूं सत्पुरुष हूं भोगी हूं सात पीडियों से धन पात्र हूं मेरे तुल्य दूसरा कोई नहीं मै ही सब से सार हूं कर्म कर-तूत का कर्त्ता हूं और सब मेरे दास हैं ॥१४॥ अज्ञान मोह कर बहुत चितवना, विषयों में गलतान, हेअर्जुन! अनेक प्रकार के विषयों में तिनका मन पडा भरमता है

॥१५॥ मोह के जाल में फंसे हुए काम के भोगों कर पकड़े हुए उनकी दशा कैसी है यहां भी नर्क आगे भी नर्क में पड़ेंगे॥१६॥ और यज्ञ महोत्सव श्राद्ध क्षया यह कार्य तिनके जैसे हैं सो सुन, प्रथम तो यह हंकार करते हैं कि यह यज्ञ मैं किया है किसी को सिर नहीं निवाते धन के गर्भ कर मतवारे हुए रहते हैं लोगों से भला कहाने के निमित्त यज्ञ श्राद्ध क्षया करते हैं ॥ १७ ॥ फिर हंकार बल गर्भ काम क्रोध इन सब से भरे हुए हैं और मैं जो आत्मा सब देहों में व्यापता हूं तिसको नहीं जानते जो दैत्य बुद्धि मनुष्य हैं किसी को दुःख

इत्यादि जो कठोर
देते हैं किसी की निन्दा करते हैं
मनुष्य हैं अधम नीच पापी तिनके लक्षण कहे हैं॥१८॥
अब अर्जुन मैं तिनके साथ कैसा हूं, तिनको दुःखदायक
जो योनि गधे की जिसकर दुःखी होकर क्लेश अज्ञान
साथ भरी हुई आसुरी योनि कुत्ते की इत्यादि और
आसुरी योनि तिनमें उनको डालता हूं, बारम्बार ऐसी
कुचील योनियों में भरमाता हूं॥१९॥ हे अर्जुन ! जो मुझ
को प्राप्त नहीं हुए सो प्राणी बारंबार इन कुचील योनियों
विखे भरमते हैं॥२०॥ हे अर्जुन! जो नर्क कहते हैं, तिनके
तीन द्वारे हैं, जो इस आत्माका नाशकरने हारे हैं, कामक्रोध

लोभ ये तीन दरवाजे नर्क के हैं,हे सखे प्रीतम! इनका तूं त्याग कर ॥२१ हे अर्जुन! जो इन तीनोंसे मुक्त हैं तिन प्राणियों ने अपने आत्माकी कल्याण की है।२२।हे अर्जुन! जो शास्त्रके मतको त्यागकर यज्ञ आदि महोत्सव कार्य को करते हैं तपस्या आदि करते हैं सो मनुष्य किसी कर्मकिये का फल नहीं पावेंगे और न किसी प्रकार का तिनको सुख होवेगा और किसी समय भी परमगतिको नहीं पावेंगे।२३। इसी से हे अर्जुन! जो भले पुरुषों के निर्मल आत्मा हैं जो कुछ यज्ञ तप दानकरते हैं शास्त्र विधिसे करते हैं सो प्राणी मेरी कृपा सेमेरी परम गति को पावेंगे ॥२४॥ इति षोडशोऽध्यायः

* अथ सोलहवें अध्याय का महात्म्य *

श्रीनारायणोवाच—हे लक्ष्मी! सोलहवें अध्यायका महात्म्य सुन, एक सोरठ देश है तिसके राजे का नाम खड्गबाहु था। राजा बडा धर्मात्मा था। तिसके राजमें घर घर ठाकुर मन्दिर थे, वहां बडे२ यज्ञ हुआ करते थे। तिन घरों में स्वर्णके खंभे गडे थे रत्नों से जडे हुए राजा बडा हरिभक्त सन्त-सेवी था, तिसकी प्रजा भी अति सुखी थी राजा भी दयावान सब जीवों पर दया करता तिसके घर बहुत हाथी घोडे धन भी था उन हाथियों में एक हाथी बडा मस्त था, तिसकी धूम मची रहे।

महावतों को नेडे न आनेदेवे जो महावत तिसपर चढे तिसको मारडाले हाथीके पांवमें जंजीर डाले रहें तिस के खेदसे राजाने देशों से महावत बुलायकर कहा कोई ऐसा होवे जो इस हाथीको पकडे उसे बहुत धन दूंगा। हे लक्ष्मी! उस हाथीको किसीने नहीं पकडा नजदीक कोई न जासके और वह हाथी राजा के मन्दिर आगे खडा रहे जिधर जावे लोकों को बडा दुःख देवे जो कोई उसके आगे आवे तुरत मार डाले बन में जाए तो बन के पशु पक्षियों को मारे नगर में लोकों को मारे जहां रहे बडा दुखी करे बडा उपद्रव करे राजा सुन कर बडा

चिंतावान रहे कई उपाय करके राजा थक गया पर हाथी वस आवे नहीं राजा को बडी चिंता लग रही एक दिन हाथी नगर में चला आवे सामने से एक साधू चला आवे लोकों ने उस साधुको कहा हे संत जी ! यह हाथी तुमको मार डालेगा संतने कहा देखो तुम श्रीनारायण जी की कैसी शक्ति है हाथी की क्या शक्ति है जो मुझे मारे मेरे नजदीक नहीं आए सकता नगर वासियों ने कहा वोह पशु है तुम्हारे भजन बल को क्या जाने नारा-यण कौन वस्तु है यह तुमें मारेगा संत ने कहा हाथी क्यों मारेगा मैं परमेश्वर का प्यारा हूं हरी भगत हूं जो

परमेश्वर से बेमुख हैं तिनको मारता है और ये भी मेरा एक ज्ञान है कि जो मेरी मृत्यु इसीसे है तो अवश्य मारेगा बिना आई से कोई नहीं मरता इतने में हाथी आय पहुंचा साधू ने नेत्र पसार के देखा हाथी ने सूंड के साथ साधू को चर्ण बंदना की और खडा रहा तब साधू ने कहा हे गजेन्द्र ! मैं तुझे जानता हूं तू पिछले जन्म पापी था मैं तेरा उद्धार करूंगा चिन्ता मत कर हाथी बारम्बार चरण छुहे माथा निवावे लोगों ने देख कर राजा को खबर की राजा भी वहां आया देखे तो हाथी साधू के आगे खडा है तब साधू ने कहा अरे

परमेश्वर से बेमुख हैं तिनको मारता है और ये भी मेरा एक ज्ञान है कि जो मेरी मृत्यु इसीसे है तो अवश्य मारेगा बिना आई से कोई नहीं मरता इतने में हाथी आय पहुंचा साधू ने नेत्र पसार के देखा हाथी ने सूंड के साथ साधू को चर्ण बंदना की और खडा रहा तब साधू ने कहा हे गजेन्द्र ! मैं तुझे जानता हूं तू पिछले जन्म पापी था मैं तेरा उद्धार करूंगा चिन्ता मत कर हाथी बारम्बार चरण छूहे माथा निवावे लोगों ने देख कर राजा को खबर की राजा भी वहां आया देखे तो हाथी साधू के आगे खडा है तब साधू ने कहा अरे

गजेन्द्र ! तू आगे होके चरण बन्दना कर तब उस सन्त
गीता पाठी ने करमण्डल से जल लेकर मुख से कहा
कि गीता के सोलहवें अध्याय का फल इस हाथी को
दिया इतना कह जल छिडका जल के छिडकने से
हाथी की देह छोड देव देही पाई बिमान पर चढ
राजा के सन्मुख होकर कहा हे राजा ! मैं तुझको धर्मज्ञ
जान तेरे नगर में रहिता था जो कभी कोई सन्त यहां
आवेगा तब मेरी गती करेगा इस संतके प्रताप से मेरी
सद्गती हुई ऐसा कह वह वैकुण्ठ को गिया राजा ने
संत को दंडवत की और कहा हे संतजी ! आपने कौन

मंत्र कहा जिस कर यह अधम देह से सद्‌गति को प्राप्त हुआ है। संत ने कहा मैंने गीता के सोलहवें अध्याय के पाठ का फल इसे दिया है नित्य ही मैं पाठ करता हूं राजा ने पूछा हाथी पिछले जन्म कौन था साधू ने कहा हे राजा! यह पिछले जन्म एक अतीत का बालक था गुरूने बहुत विद्या पढ़ाई बड़ा पण्डित हुआ वोह अतीत तीर्थ यात्रा को गिया पीछे उसकी बडियाई बहुत हुई अच्छे २ सत्संगी उसके दर्शन को आते बारां बरस पीछे गुरू जी आए वोह अतीत नम्रथे और वह बडा समाज लगाय बैठा था मन मेंसोचा कि जो अब इनके आदर को उठता हूं तो मेरी

बडियाई घटेगी यह सोच कर नेत्र बन्द कर चुपहोरहा
गुरू जी ने देखा मुझे देखकर इसने नेत्र बन्द किये हैं
ऐसा देख कर श्राप दिया रे मन्द मति ! तूं अन्धा
हुआ है मुझे देखकर सिर भी नहीं निवाया और ना
उठकर दराडवत की है तैंने अपनी प्रभुता का अभिमान
किया है जा तूं हाथी की जून पावेगा यह सुन कर वह
बोला हे सन्तजी ! आपका बचन सत्य होगा पर कहो
अब मेरा उद्धार कैसे होगा ? गुरूजी को दया आई
उसने कहा जब गीता के सोलहवें अध्याय के पाठ का
फल संकल्प तुझे कोई देगा तब तेरा उद्धार होवेगा यह

सुन कर राजा ने भी पाठ सीखा और अपने पुत्र को राज देकर आप तप करने लगा बन में जायकर सोलहवें अध्याय का पाठ नित्य करे समय पायकर राजा भी सद्गति को प्राप्त हुआ श्रीनारायणजी कहे हैं हे लक्ष्मी ! यह सोलहवें अध्याय का फल है ।

इति श्री सती ईश्वरसम्वादे उत्तराखण्डे गीता महात्म्य नाम सोलहवों अध्याय ॥ १६ ॥

* अथ सतारवां अध्याय *

श्रद्धा त्रै विभाग योग ।

अर्जुनोवाच—अर्जुन श्रीकृष्ण भगवान जी से प्रश्न करे है कि हे भगवान कृपानिधानजी ! जो अपनी

बुद्धि कर शास्त्र विध को समझ नहीं सक्के और तुझे अविनाशी परमानन्द समुद्र ऐसा जान पछान कर तुमारी शर्णं आये हैं तुमारा सिमर्ण भजन किया है सो प्राणी सातकी कहिये कि राजसी कहिये कि तामसी कहिये यह मेरे प्रति कहो॥१॥ अर्जुन की बेनती मान कर श्रीकृष्ण भगवान जी कहते हैं। श्रीभगवानोवाच- हे अर्जुन ! पूजा करने की विधि भी तीन प्रकार की है सातकी राजसी और तामसी सो इनको मैं भिन्न २ कहता हूं सो सुन ॥ २ ॥ हे अर्जुन! जिनकी सातकी प्रकृति है तिनका निश्चय तो यह है एकही भगवान को

सर्वव्यापी जान कर सभ के साथ श्रद्धा राखते सभ के सहृद् मित्र होये बरते हैं यह तो सातकी पुरुष हैं॥३॥ आगे तिनकी प्रकृति सुन देवता की पूजामें तिनकी श्रद्धा लगी रहती है, अब राजसी प्रकृति सुन, यक्षों की राक्षसों की पूजा में तिनका मन लगे है, और तामसी प्रकृति सुन प्रेत, भूत गण, इत्यादिक जो जूनां हैं तिन में लगे हैं जो इस प्रकार तपस्या करते हैं सो असुर दैत्यों की तपस्या है ॥४॥ जो शास्त्र में कहीं नहीं जिसके देखने से डर आता है ऐसे जो तपस्वी तप करते हैं ॥ ५ ॥ लोगों के दिखाने निमित्त और मन में फल की कामना

करते हैं जिस तप को करते शरीर को भी कष्ट होवे
तिस तप के फल की कामना करते हैं हे अर्जुन! तिनको
देह मेंभी मैंआत्माराम व्यापीहूं तो वह मुझको दुःख देते
हैं ऐसे अन्धमत अज्ञानी तप करते हैं तिनको तूं दैत्य
तपस्वी जान ॥६॥ हे अर्जुन ! अब आहार के भेदसुन
आहार भी तीन प्रकार के हैं, यज्ञ भी तीन प्रकार के हैं
तपस्या भी तीन प्रकार की हैं और दान भी तीनप्रकार
के हैं, इनके भेद भिन्न २ सुन, पहिले शातकी आहार
सुन ॥७॥ जिसके खाने से आरबला बहुत होती है सो
आरबला बढानेहारे भोजन देवताओंको मिलते हैं जिस

के खान पान करनेसे देवता अमर होजाते हैं अब मनुष्यों का आहार सुन, जिसके खाने से देह में बल पुरुषार्थ हो, आरोग्यता, जिसके खाने से मन में प्रीति उपजेकि भला भोजन खाइये, और जो रस स्वाद तिससे भरा हुआ घृत साथ स्निग्ध दाल चावल नरम नरम फुलके घृत सों चोपडे हुए यह आहार शांतकी है॥८॥अब राजसी आहार सुन, कडुवा खट्टा सलूणा अतिशै करके तत्ता रूखा जिसके खाने से मुख जले और रोग उपजे दुःख देवे ऐसे बुरे फल जिसके खाने से होते हैं वह आहार राजसी मनुष्यों को प्यारा है ॥ ९ ॥ अब तामसी सुन

जो रात्रि का बासी और स्वाद भी जिसमें मिट गया
होय दुर्वास छोड गया हो और किसी का जूठा यह भोजन
तामसी कहाता है ।१०। अब तीन प्रकार के यज्ञ सुन,
पहिले शांतकी, जिस यज्ञ में फल पावने की कामना
नहीं होवे, जैसे शास्त्र में विधि लिखी है सो करनी चाहिये
और यज्ञकर्त्ता कहे कि मुझको यज्ञ कराना योग्य है, सो
इस प्रकार का यज्ञ सातकी जान ॥११॥ केवल लोगों से
भला कहाने के निमित्त जो यज्ञ करता है ऐसा यज्ञ राजसी
कहावे है ॥१२॥ जिस यज्ञ में शास्त्र की विधि नहीं मन
भी पवित्र न होवे वेद के मंत्र भी पढ़े न जांय साधु ब्राह्मणों

को यज्ञके पीछे दक्षिणा न दी जाय, यज्ञकर्त्ताको श्रद्धा भी न होय ऐसे यज्ञको तूं तामसीजान। १३। और तीन प्रकारका तप सुन, एक देह करके, दूसरा मन करके, तीसरा वचन करके, प्रथम देहका तप सुन, जहां कोई छोटा जीव होय तिसको देखकर पैर धरना किसी जीवको खेद न पहुंचे यह चरणों का तपहै, देही को जल मृतिका साथ स्वच्छ रक्खे, दातन कर स्नान करे, आचमन कर तिलक करे, शालिग्राम की पूजन करे और जो आप से बडा हो परमेश्वर का रास्ता बतावे उसकी पूजा करना ब्रह्मचर्य रखना मातापिता कीसेवाकरना, इसप्रकार शरीरका तप

करना उचित है ॥१४॥ अब बचन का तप सुन,प्रथम तो
सत्य बोलना मीठी बाणी बोलना मधुर स्वरसे जिस किसी
को बुलावे, भाईजी, भक्तजी, प्रभुजी,मित्र जी,जिसवचन
कर सुनने वाला प्रसन्न होवे और जो कोई पुरुष बुलाए
से यूं कहे,हाजी,भाई जी,इस प्रकार का वचन तपस्या है,
और वचन का तप सुन,जो वेदमाता गायत्री पढे, वेदपाठ
करे,सहस्रशीर्षा पुराणों के स्तोत्र पढने और कथा में
जो मेरी लीला अवतारों के चरित्र सो पढने, कीर्तन
विष्णुपदे गावने, इस प्रकार बचन का तप करे ॥१५॥
हे अर्जुन ! मन का तप सुन, पहले मुख्य तप मन को

प्रसन्न रखे मन की प्रीति मेरे में लगावे और चितवना से मन को वरजे मन का निश्चल चेता मेरे में लगावे और मन को शुद्ध कर मेरे में श्रद्धा सों लगावे प्रीति कर मेरे साथ यह मन की तपस्या कहिये है॥१६॥अब स्वासों की तपस्या सुन, स्वास २ मेरा स्मरण करना, हरे, राम, कृष्ण इत्यादिक मेरे नामों का जाप करना, सहस्रनाम शतनाम पढने यह स्वासों का तप है, ऐसा करने से प्राणी परम श्रद्धा से मुझको आए मिलता है। प्रीति से तपस्या करे और फल कुछ वांछे नहीं मुझ ईश्वर अविनाशी में समर्पण करे, सो शांतकी तप

कहावे है ॥१७॥ जो लोगों में भला भला कहावने के निमित्त तप करे और अपनी पूजा प्रतिष्ठा मानता करावे सो राजसी तपस्या कहावे है, यह तपस्या चलायमान है स्थिर नहीं रहती ॥१८॥ अब तामसी तपस्या सुन, जो अज्ञान लिये हुए तप कीजै और जिस तप करे से शरीर को कष्ट प्राप्ति होए, और किसी का बुरा करने के निमित्त तप करे सो तामसी तपस्या कहावे है ॥१९॥ अब तीन प्रकार का दान सुन, प्रथम शांतकी दान सुन, जो इस प्रकार दान करे, कि यह दान अवश्य करना मुझको योग्य है, सो कैसे करे ? कि उत्तम ब्राह्मण गृहस्थी को दान देवे

जिसके बदले कुछ संसारिक कामना की इच्छा न हो, किसी सम्बन्धी सके का ब्राह्मण न हो और अति पवित्र पृथ्वी हो, गऊ के गोवर साथ लिपी हो प्रातःकाल का समय हो आप भी अश्नान करके पवित्र हो ब्राह्मण भी पवित्र सुकर्मी हो तिसको दान देवे इस विधि से शांतकी दान कहावै है ॥२०॥ अब राजसी दान सुन, तिस ब्राह्मण को दान देना जिससे कुछ अपना उपकार हो तिस दान के करने से फल की वांछा करनी यह राजसी दान कहाता है ॥२१॥ अब तामसी दान सुन, ठौर भी पवित्र नहीं समय भी ऐसा ही होय आप भोजन पायकर

दान करे ब्राह्मण भी ऐसा ही हो, या किसी और जाति
मलेछ आदिक को दान देवे क्रोध साथ दुरवचन कह कर
दान देवे यह तामसी दान कहाता है॥२२॥ हे अर्जुन!
वह प्रभु पारब्रह्म जिस के रजोगुण से ब्रह्मा प्रगट हुआ
संसार के उत्पात्ति करने को, जिस के शांतिक गुण से
संसार की पालना कर्त्ता विष्णु प्रकट हुआ और जिस के
तमोगुण से संसार के संघारने को महादेव प्रगट हुआ है
ऐसा जो पारब्रह्म है तिसी ने यह ब्राह्मण प्रगट किये हैं
तिसी ने वेद प्रगट किये हैं तिसी ने यह युग बनाए हैं
हे अर्जुन! उस पारब्रह्म की जो आज्ञा है इस कारण वेदों

केवक्ता ब्राह्मण ही हैं। यज्ञ दान तपस्या अश्नान और भी पवित्र कर्म इत्यादिक जो हैं सभी वेदों को समझ कर करते हैं ॥२३॥ अब इन यज्ञ दान तपस्या का फल सुन, जो प्राणी इसका फल नहीं मागते केवल मुक्ति की वाछा है सो प्राणी मुक्ति को पावेंगे ॥२४॥ अब जो प्राणी किसी कामना के लिये शुभकर्म करते हैं सो प्राणी कामना को पावेंगे। हे अर्जुन! मेरा भगत प्रीति साथ पत्र फल पुष्प मुझको समर्पण करे, सो मैं अंगीकार करता हूं, किस प्रकार सो भी सुन, प्रथम तो मुझ को सत्य जाने कि जो कुछ मैं परमेश्वर को समर्पण करता हूं

सो गोविन्द जी अंगीकार करेंगे और आप को यह
जाने जो मैं परमेश्वर का भगत हूं अपने में और मेरे
में भेद न जाने और आप को यह कहे कि मैं मन
वच कर्म कर परमेश्वर का दास हूं मेरा दास होकर
मन वच कर्म कर जो मुझे समर्पे सो मैं अंगीकार करता
हूं ॥ २५ ॥ ऐसे भक्त का दिया मुझ को प्राप्त होता है
और हे अर्जुन ! जो कोई श्रद्धा से रहित होकर जो
कुछ पदार्थ अग्नि में होम करे दान करे तप करे और
जो बी सत्य कर्म मेरे निमित्त करता है, तिनको मैं अंगी-
कार नहीं करता हूं ॥२६॥ और जो कोई अपने पितरों के

निमित्त दान करता है श्रद्धा बिना उसको भी अंगीकार मैं नहीं करता हूं श्रद्धा प्रीति से रहित होकर दिया हुआ वह किन को प्राप्ति होता है ? सो सुन, ॥२७॥ सो फल भूतों की देह धार कर भोगना पड़ता है भूत प्रेत उस फल को भोगते हैं मुझको नहीं प्राप्ति होता है और मैं भी उस को नहीं ग्रहण करता हूं ॥ २८ ॥

इति श्रीभगवद्गीता श्रीकृष्णअर्जुनसंवादे श्रद्धात्रैत्रिभागयोग नाम सप्तदशमो अध्याय ॥१७॥

* अथ सतारवें अध्याय का महात्म *

श्रीभगवानोवाच—हे लक्ष्मी ! अब सतारवें अध्याय का महात्म सुन, एक मण्डलीक नाम देश में

दुशासन नाम राजा था एक राजा किसी और देश का
था तिन्होंने आपस में शरत बांधी हाथी लडाये और
कहा जिसका हाथी जीते सो यह अमुका धन लेंवे तब
दूसरे राज का हाथी जीता दुशासन का हाथी हारा कई
दिन पीछे हाथी मर गिया राजा को बड़ी चिन्ता हुई
एक द्रव्य गिया दूसरे हाथी मरा तीसरे लोगों की हासी
हुई इस से निन्दा चली इसी चिन्ता में राजा भी मर गया
जमदूत उसे पकडकर धर्मराज के पास लेगये धर्मराज ने
आज्ञा की कि यह हाथी के मोहकर मरा है इस कोहाथी
की योनी देवो। हे लक्ष्मी ! राजा दुशासन संगलदीप

में जायकर हाथी हुआ वहा उस राजे के बहुत हाथी थे तिन में आया और पिछले जन्म राजा था अब हाथी हुआ हूं यह सोच कर बहुत रुदन करे खाये पीवे कुछ नहीं इतने में एक साधू आया तिस ने राजा को एक श्लोक सुनाया राजा बड़ा प्रसन्न हुआ कहा हे पण्डितजी ! कुछ मागों उसने कहा और मेरे पास सभ कुछ है एक हाथी नहीं है राजाने सुनकर वोही हाथी दिया ब्राह्मण उसे अपने घरले आया दाना रातब रात को दिया वोह खावे नहीं पानी भी नहीं पीवे रुदन करे मन में चितवे कोई ऐसा होय जो मुझे इस योनी से छुडावे तब उस ब्राह्मण ने महावत

को पूछा कि इस हाथी को क्या दुःख है खाता पीता कुछ नहीं महावत ने देखकर कहा इसको दुःख तो कुछ नहीं है तब ब्राह्मणने राजा को कहा हाथी खाता पीता कुछनहीं खड़ा रुदन करता है यह सुन कर राजा आप देखने को आया राजा ने भले भले पशुओं के वैद्य बुलवाये और महावत सदवाये सभ को हाथी दिखाया उन्होंने देख कर कहा राजाजी ! इसको मानसी कोई दुःख है देहकर कोई दुःख नहीं तब राजा ने कहा हाथी तुहीं बोलके कहो कि तुझे क्या दुःख है परमेश्वर की शक्ति से मनुष्यों की भाषा में हाथी ने कहा हे राजा ! तू बडा धर्मज्ञ

है यह ब्राह्मण भी बडा बुद्धिमान है इसके घर का अन्न सो खावे जो बडा धर्मात्मा होवे मैं तो बडा पापी हूं इस करके इसके घर का प्रसाद मुझको कब मिले ? तब ब्राह्मण ने कहा हे राजा ! अपना हाथी फेर ले राजे ने कहा दान किया हुआ मैं नहीं फेरता यह हाथी मेरे चाहे जीवे, तब हाथी ने कहा हे सन्तजी ! तूं मत कल्प, तेरे घर में कोई गीता की पोथी है तो मुझे गीता के सतारवें अध्याय का पाठ सुनाओ, तब उस ब्राह्मण ने ऐसे ही किया। हे लक्ष्मी ! सतारवें अध्याय के सुनते ही तत्काल उस हाथी की देह छूटी, आकाश से विमान आए, देवदेही पायकर

विमानों पर चढ कर राजा के सामने आन खडा हुआ,
राजा की स्तुति करी, हे राजा ! तूं धन्य हैं, तेरी कृपा से
मैं इस अधम देह से छुटा हूं, राजा को अपनी पिछली
कथा सुनाई, हे राजा ! मैं पिछले जन्म राजा था, हाथी
मैंने लडाए थे पर मेरा हाथी हार गया था, मैं उसी चिन्ता
में मर गया धर्मराजके हुकम कर मैंने हाथीका जन्म पाया
मैंने प्रार्थना करी थी मेरा छुटकारा भी कहो कब होवेगा,
तब धर्मराजने कहा गीताके सतारवें अध्यायके सुनने से
तेरी मुक्ति होवेगी, सो तेरी और पण्डितजी की कृपा हुई है
मैं अब बैकुण्ठको जाता हूं। सो देवदेही पायकर बैकुण्ठको

गया राजा अपने घर आया। श्रीनारायण जी कहे हैं हे लक्ष्मी! यह सतारवें अध्यायका महात्म्य है जो तैने सुना है।

इति श्रीपद्मपुराणे सतीईश्वरसम्वादे उत्तराखण्डे गीतामहात्म्यो नाम सप्तदशो ऽध्यायः ॥ १७ ॥

* अथ गीता का अठारवां अध्याय *

मोक्ष संन्यास योग।

अर्जुनोवाच—अर्जुन श्रीकृष्णदेवजीसे प्रश्न करे है, कि हे कृष्ण भगवान्‌जी ! हे केशी दैत्य के मारनेहारे प्रभुजी ! मैं तुझसे संन्यास का तत्त्व जानिया चाहता हूं, जो संन्यास किसको कहते हैं और त्याग का तत्त्व भी जानिया चाहता हूं जो त्याग किसको कहते हैं सो

इन दोनों का उत्तर भिन्न २ कर कहोजी ॥१॥ अर्जुन की बेनती मानकर श्रीकृष्ण भगवानजी बोलते भये। श्रीभगवानुवाच—हे अर्जुन ! संसार की कामना के सभी कार्य कर्म त्यागकर मेरी शरण में आवना ऐसे जो प्राणी ज्ञानी सो संन्यासी कहे हैं, हे अर्जुन मेरे चरण कमल की शरण में आयकर मेरी भक्ति बिना और किसी वस्तु की कामना न करनी, ऐसा जो विचक्षण मनुष्य है सो ज्ञानी कहाता है, यह तो मैंने अपने मत का संन्यास और त्याग कहा है ॥२॥ अब अर्जुन और शास्त्रों का सुन, एक शास्त्र तो यह कहते हैं, कि ज्यों बुरे कर्म त्यागिये त्यों भले

कर्म भी त्यागिये, क्योंकि भले कर्म का फल सुख और बुरे कर्म का फल दुःख भोगना है, भला कर्म कञ्चन जो है सोना तिसकी बेडी चरणों में है, बुरे कर्म सो तिस की लोहे की चरणों में बेडी है। इसी से भले बुरे कर्म दोनों बन्धन के कारण हैं, इसलिए इनका त्याग करना योग्य है। हे अर्जुन! एकशास्त्र यह कहता है जो यज्ञदान तपस्या स्नान इससे आदि सत्य कर्म नहीं त्यागने, यह पवित्रता के दाता हैं, यह कर्म करने से देह पवित्र होती है ॥३॥ हे अर्जुन ! अब निश्चय कर मेरे मत का त्याग सुन, त्याग तीन प्रकार का है सो सुन, पाहिले तो मेरा

मत यह है, यज्ञ दान तपस्या स्नान यह मनुष्यों को पवित्र करते हैं विवेकी पुरुष इनका त्याग नहीं करते जो भले विवेकी पुरुष हैं यह सत्यकर्म करने तिनको भले हैं ॥५॥ भले कर्म करके तिनका फल कुछ बांछते नहीं, इसी कारण से मेरे मत में यह बात भली है सब बातों से श्रेष्ठ है ॥६॥ जो सत्यकर्म कर फल की वांछा न करे। जो अज्ञान से आलस कर सत्यकर्म त्यागकर स्नान न करे, उसे क्या फल होता है सो सुन, जो प्राणी माया का मोहिया हुआ सत्यकर्म त्यागे सो यह तामसी त्याग कहाता है ॥७॥ जो प्राणी देह के दुःख के डर से सत्यकर्म त्यागे स्नान करने से मुझे शीत लगता है हाथ दुखते हैं ऐसा कहे इस

प्रकार का त्याग राजसी कहाता है, इस त्याग का फल नहीं पाते ॥८॥ हे अर्जुन! जो इस प्रकार सत्यकर्मों को करता है प्रथम तो कहे है जो मेरा क्षत्री ब्राह्मण का जन्म दुर्लभ है स्नान आदि कर्म करने सो मुझको भले हैं अवश्यमेव कर्म करे और फल की कुछ वांछा न रखे, ऐसा शांतकी त्याग कहाता है ॥९॥ हे अर्जुन! विवेकी पुरुष स्नान आदि सत्यकर्मों की निन्दा भी नहीं करते, और आप इन सत्यकर्मों का त्याग भी नहीं करते, और फल की वांछाभी नहीं करते हैं। हे अर्जुन! ऐसे प्राणियों की बुद्धि निर्मल होती है, तिससे ज्ञान उपजता है ॥१०॥ जब मेरी महिमा का ज्ञान उपजा, तब संसारके बन्धन से मुक्ति

होती है । इससे हे अर्जुन ! सत्यकर्मों का त्याग न करे, जैसे
पौड़ी के मार्ग से मान्दिर के ऊपर जाय चढ़ता है तैसे
सत्यकर्म करने मुक्ति की सीढी है । और जितने देहधारी
हैं सो किसी देहधारी की शक्ति नहीं जो सत्यकर्म त्यागे।
हे अर्जुन ! जब पिता के वीर्य से माता के उदर में यह
जीव आता है, उसी दिन से लेकर मरने के दिन तक कभी
भी यह निष्कर्म नहीं होता है और नां यह जीव त्यागी ही
होता है । हे अर्जुन ! यह जीव कब निष्कर्मी होता है? सो
सुन ॥११॥ सत्यकर्म करके प्राणी मुझको समर्पे, कुछ फल
ना मांगे, तब यह जीव निष्कर्मी त्यागी होता है । अब
और सुन, मनुष्यों को नित्य ही अपने कर्म करने का

तीन प्रकार का फलहोता है सो सुन ॥१२॥ भले कर्म का फल सुख और बुरे कर्म का फल दुःख और जो भले बुरे कर्म रले मिले कर करे सो सुख दुःख से मिश्रित होता है ॥१३॥ जो नित्य संसारी मनुष्यों को होता है, पर किनको? जो संसार त्यागकर मेरी शरण नहीं आए तिनको, औरजो प्राणी मेरे चरण कमलों की शरण आए हैं, उन के निकट कोई दुःख नहीं आता है ॥१४॥ अब अर्जुन और सुन, जितने कर्म देहधारी मनुष्यों से होते हैं, भले अथवा बुरे, सो देह इन्द्रिया मन इनसे होते हैं, आत्मा कैसा है ? अकर्त्ता है, जो केवल एक ही है, निर्मल का निर्मल है ॥१५॥ हे अर्जुन! जिसको तैने पहिचाना है और जिनकी निर्मल बुद्धि है सो

तिस आत्मा को पहिचानते हैं। और दुर्मति जो अन्धमत
पुरुष हैं, तिस आत्मा को नहीं देख सक्ते॥१६॥हे अर्जुन!
जिसकी बुद्धि ऐसी है कि मैं जो आत्मा हूं, अकर्त्ता हूं
कुछ नहीं करता जो भला बुरा कर्म होता है देह
इन्द्रिया मन से होता है, सो वह प्राणी सर्व लोगों को
मारे, तो भी उस को कोई दोष नहीं लग सक्ता किसी
कर्म का उस को बन्धन नहीं होता॥१७॥अब अर्जुन!
तीन प्रकार का ज्ञान और तीन प्रकार का कर्म और कर्त्ता
भिन्न २ सुन, पहिले शातक ज्ञान सुन, जिस ज्ञान कर
सब भूत प्राणियों में उसको एक ही अविनाशी आत्मा
दृष्टि आता है, तिस को व्यापक जान कर सम के

साथ एकसा होय वैर से दुःख किसी को न देवे, सुख, दाई बने, यह शांत की ज्ञान कहाता है। और जबज्ञान भिन्न २ दृष्टि हुआ जो यह और है और मैं और हूं यह तेरा है यह मेरा है सो राजसी त्याग कहाता है। और जिस ज्ञान कर सब कोई बुरा दृष्टि आवे, और सब के साथ वैर बांधा रहे सो ऐसा तामसी ज्ञान कहाता है। अब अर्जुन कर्म सुन, जो इस प्रकार कर्म करे जो यह कर्म करना मुझको योग्य है, फल की कुछ वांछा नहीं, यह शांतकी कर्म कहाता है। जिस कर्म के करने से फल की वांछा होय और हंकार के साथ कहे कि यह कर्म मैं करता हूं और जिस कर्म किए से जंजाल बहुत होवे

सो ऐसा कर्म राजसी कहावे है। और जिस कर्म में कोई
बन्धन बांधना, किसी जीव को दुखावना, किसी का घात
करना और अपना बल और बडाई दिखावनी, इस
प्रकार माया का मोहिया जो कर्म का आरम्भ करे, सो
तामसी कर्म कहावे है॥१८॥अब कर्म का करता सुन, जो
इस प्रकार कर्म करे, यज्ञ महोत्सव होम श्राद्ध क्षाह इत्या-
दिक, और जो सत्यकर्म हैं तिनको कर फल कुछ वांछे
नहीं, अहङ्कार से रहित, कि मेरा कुछ नहीं, सभ कुछ
परमेश्वर का है और उद्यम से रहित जो कुछ सहिजे होए
सुहोये, और यह भी नहीं जो अमुक कार्य्यं मेरा सम्पूर्ण
होये, तब मेरा सन्तोष है, और जो कुछ कार्य विगडे तो

कलपे नहीं, और जो सम्पूर्ण होए तो प्रसन्न ना होयबैठेवोह क्या समझे कि मेरा कुछ नहीं, सभकुछ ईश्वर का है, हर्ष शोकसे रहित होय, जो कुछ ईश्वर इच्छा से आए मिले सो भोजन करे, इस प्रकार शांतकी करता कहावे है । अब राजसी करता सुन, जीवों के दुखवाने में तिस का स्वभाव और अपवित्रता, हर्ष शोक कर संयुक्त, जो पुण्य किये तिसके फल पावने की कामना, मन में कहे कि लोग मुझे धन्य २ कहेंगे, इस निमित्त हर्ष होना, और ग्रह से जो द्रव्य खरच होता है, इस कारणसे शोक होना यह राजसी करता कहावे है, अब तामसी करता सुन, शास्त्र की विधि को समझे नहीं, कि यज्ञ महोत्सव किस विधि कीजै, किसी

को मस्तक निवावे नहीं, महा मूढ मूर्ख आलसी विषादी,
सभ किसी साथ लडाई करे, यह तामसी कर्ता कहाता
है ॥१९॥ जो सब भिन्न भिन्न प्राणियों में एक अविनाशी
ना बांटा गया हुआ इस सत्ताको देखता है, उसेज्ञानी को
तू शांतकी जान ॥२०॥ सब प्राणियों में भिन्न भिन्न प्रकार
की बहुत सत्ताओं का जो न्यारा २ जानना है, उस तू
राजसी ज्ञान जान ॥२१॥ जो बिनां जुगति तत्तव के
है, और आलय है, जो एक ही कार्य में लगा हुआ है,
उसे तू तामसी ज्ञान जान ॥२२॥ फल न चाहने वाले
से आवश्यक संग के बिना, राग-द्वेष से रहित किया
हुआ जो कर्म है, वह सात्विकी कहाता है ॥२३॥ जो

कर्म, फल की इच्छा वाले से बड़े यत्न और अहंकार से किया जाता है, वह राजसी कर्म कहा गया है ॥२४॥ जिस कर्म का कुछ फल न होये, जिस में, हिंसा होये अपनी शक्ति से परे होये, और प्रीति भी ना होये सो कर्म तामसी कहाता है ॥२५॥ संग से रहित, अहंकार के बिना, धीरज और साहस के सहित, सिद्धि और ना सिद्धि में एक जैसा जो होवे, उसका कर्ता सांतकी कहा जाता है ॥२६॥ रागयुक्त, कर्म के फल की चाह वाला, लोभी, हिंसक, कुचील, हर्ष और शोक वाला कर्म कर्ता राजसी कहा गया है ॥२७॥ बेजुगत, आहमक, मूर्ख, नीच, बदला लेने की चाह वाला, आलसी, सोगी,

ढिलड ऐसा कर्म का कर्ता तामसी कहा जाता है ॥२८॥
हे अर्जुन ! बुद्धि और धीरज के जो गुण भेद से तीन
प्रकार है,उन्हों को मैं अलग अलग करता हूं तूं सुन,
॥२९॥ हे अर्जुन! अब तीन प्रकार की बुद्धि सुन, जिस
बुद्धि कर गृहस्थ में भी सुखी रहे, भले कार्य को भला
जाने, बुरे कार्य को बुरा जाने, और यह भी समझे कि इस
बात से मुझको मुक्ति है इस बातसे बन्धन है, जिस बुद्धि
कर यह बात समझे सो सांतकी बुद्धि है ॥३०॥ और जिस
बुद्धि से धर्म को अधर्म जाने, बुरे को भला जाने और
की और समझे, यह राजसी बुद्धि के लक्षण कहे हैं ॥३१॥
जिस बुद्धि कर धर्म अधर्म जाने, कौन अधर्म ? कि जवि-

घात करने से पुण्य जाने इत्यादिक और भी बाता समझे, यानि धर्म को अधर्म उलटा समझे, सो तामसी बुद्धि कहावे है ॥३२॥ अब दृढ़ता सुन, मन किसी विकार को न चितवे, और इंद्रिया सभ वस में होवें, केवल एक प्रभुकी शरणा, जब यह धारना होए, तब सातकी दृढता जान ॥३३ और जब मन अपने धर्ममें सर्व प्रकार दृढ होए द्रव्यके खटने में दृढता, खावने पहिरनेमें दृढता होवे, तब अर्जुन! राजसी दृढता तूं जान ॥३४॥ और जब महा घोर निद्रामें सोय रहे, और परम चिंता में मग्न रहे हर किसीसे कला विषादकरे यह तीनों लक्षण तामसी दृढताके जान औरजो ऐसी दुर्बुद्धिसे रंग हैं, निद्रा कला चिन्ता यह तीनों विकारों

से अपनी मुक्तिनहीं कर सक्ते, सो तिनकी तूं तामसी दृढता
जान ॥३५॥ हे भारत वंशी अर्जुन ! अब तीन प्रकार का
सुख सुन, जिसमें वरतने से दुखका अंत हो जाता है।
॥३६॥ जो पहिले विष के समान लगे और अन्त में
अमृत के तुल्य होवे, ऐसा सुख जो निर्मल बुद्धि के
प्रतापसे होवे है सो सांतकी कहावे है ॥३७॥ अब राजसी
सुख सुन, इन्द्रियांका अधिकार, प्रथम तो सुख को प्रकट
करें, पीछे विषफल की न्याई कौडी हो जायं, यह राजसी
सुख कहावे है ॥३८॥ अब तामसी सुख सुन, प्रथम
बेसुरत, निद्रा से आलसी, प्रभु का विसारना, सो सुख
स्वर्ग से लेकर पृथ्वी के तले
तामसी कहावे है ॥३९॥

का ।
की ॥
मी ॥
ता ॥
ती ॥
तेरे ॥
२ ॥
दूर
सोते
शनी
ता—

पाताल लोक नाग लोक तीनों लोकों में ऐसा कोई भी जीव नहीं, जो इन तीनों से छूटा हुआ हो ॥४०॥ हे परन्तप ! इन तीन ही गुणों के स्वभाव में लोक वरते हैं लोकों विखे गुण हैं गुणों विखे लोक हैं इसी कारण त्रिगुण-मई सृष्टि कहिये है ।४१। हे अर्जुन! अब ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य शूद्र इन चार वर्णों के स्वभाव की प्रकृया सुन, स्वभाव की प्रकृया कहिये, जो साथ ही ले जन्मीये। पहिले ब्राह्मण के स्वभाव का प्रकृया कहिते हैं, इन्द्रियां जीतनिया मन जीतना तप करना भजन करना पवित्रता क्षमा कोमल स्वभाव ज्ञान अपना और विज्ञान परमेश्वर का यह जानना और गोविन्द में तत्व बुद्धि जो परमेश्वर है

यह ब्राह्मण के स्वभाव के धर्म कहे हैं ॥४२॥ अबक्षत्रीके
स्वभाव के धर्म सुन, सूरमां तेजस्वी राजा युद्ध से
भागे नहीं सियाणा दानी आप को ईश्वर ठाकुर
महंत न जानना परमेश्वर ईश्वर विखे श्रद्धा यह क्षत्री
के स्वभाके लक्षण कहे हैं ॥४३॥ अब वैश्य के स्वभावके
धर्म सुन, खेती करना वनज व्यापार गौओं की सेवा
यह वैश्य स्वभाव के धर्म हैं । अबशूद्रके सुन, तीनोंही
वर्णोंकी सेवा करनी जो प्राप्त होए तिसमें संतोष ही शूद्र
स्वभाव के धर्म हैं॥४४॥ यह चारों वर्णोंके स्वभाव कहेहैं
प्राणी इन अपने २ कर्मों के करने से स्वाभाविक ही भली
सिद्धिको पाता है॥४५॥ अपने २ कर्मों में दृढ हुए से जो

फल उपजे सो क्या कहिये सो सुन;परंब्रह्म सारी सृष्टिका जो कर्त्ता सर्व में रमयाहुआ अविनाशी तिसको प्राप्ति होवेंगे । हे अर्जुन ! यह चारों वर्णोंके जो धर्म कहे हैं इनमें सभ को अपन अपने धर्म ने कल्याण करना है ॥४६॥ अपना धर्म चाहे तुच्छ हो, पर फिर भी बडा ही देखे तभी अपने धर्मने इसको कल्याण देनी है,पराया धर्म इसकी सहायता न करेगा, अपने अपने धर्म करने से पाप नहीं,अपना धर्म मुक्ति भगति का दाता है,यह चार वर्णों के धर्म्म कहे हैं ॥४७॥ हे कौन्तेय ! अपने धर्म का जो स्वाभाविक कर्म है यदि दोष वाला भी होवे,न त्यागे, क्योंकि सारे मर्क दोषों से ऐसे ढके हुए हैं जैसे धूंएं में

आग ॥४८॥ बुद्धि करके न लिपायमान हुआ हुआ, जीत
लिया है आत्मा जिसने, चाह से विना, पुरुष संन्यास के
जरिये अति उत्तम सिद्धि को पाता है ॥४९॥ हे कुन्ती
के पुत्र ! सिद्धि को पायकर फेर जैसे ब्रह्मको पाता है सो
इस ज्ञान के ऊपर का दर्जा तूं मुझसे संक्षेप से जान॥५०॥
शुद्धबुद्धि वाला, धीरज से आत्मा को रोक कर, शब्द,
स्पर्श, आदि पांचों विषय और राग द्वेशको छोडकर॥५०॥
एकान्त रहने वाला, थोडा खाने वाला, मन बाणी और
शरीर को काबू में रखा है जिसने, परमात्मा के ध्यान रूपी
योग में लगा हुआ, वैरागवान ॥५२॥ हंकार, बल, दर्प,
काम, क्रोध और लोभ को त्याग कर ममता रहित हुआ

फल उपजे सो क्या कहिये सो सुन,परंब्रह्म सारी सृष्टिका
जो कर्त्ता सर्व में रमयाहुआ अविनाशी तिसको प्राप्ति
होवेंगे । हे अर्जुन! यह चारों वर्णोंके जो धर्म कहे हैं इनमें
सभ को अपन अपने धर्म ने कल्याण करना है ॥४६॥
अपना धर्म चाहे तुच्छ हो, पर फिर भी बडा ही देखे
तभी अपने धर्मने इसको कल्याण देनी है,पराया धर्म
इसकी सहायता न करेगा, अपने अपने धर्म करने से पाप
नहीं,अपना धर्म मुक्ति भगति का दाता है,यह चार वर्णों
के धर्म्म कहे हैं ॥४७॥ हे कौन्तेय ! अपने धर्म का जो
स्वाभाविक कर्म है यदि दोष वाला भी होवे,न त्यागे,
क्योंकि सारे मर्क दोषों से ऐसे ढके हुए हैं जैसे धूंएं में

आग ॥४८॥ बुद्धि करके न लिपायमान हुआ हुआ, जीत
लिया है आत्मा जिसने, चाह से बिना, पुरुष संन्यास के
जरिये अति उत्तम सिद्धि को पाता है ॥४९॥ हे कुन्ती
के पुत्र ! सिद्धि को पायकर फेर जैसे ब्रह्मको पाता है सो
इस ज्ञान के ऊपर का दर्जा तूं मुझसे संक्षेप से जान॥५०॥
शुद्धबुद्धि वाला, धीरज से आत्मा को रोक कर, शब्द,
स्पर्श, आदि पांचों विषय और राग द्वेशको छोडकर॥५०॥
एकान्त रहने वाला, थोडा खाने वाला, मन बाणी और
शरीर को काबू में रखा है जिसने, परमात्मा के ध्यान रूपी
योग में लगा हुआ, वैरागवान ॥५२॥ हंकार, बल, दर्प,
काम, क्रोध और लोभ को त्याग कर ममता रहित हुआ

हुआ, शान्त चित्त वाला, मोक्ष के योग्य होता है॥५३॥ फिर वह कैसा हुआ ब्रह्मभूत, सो क्या कहिये, कि माया के जो तीन गुण हैं सो काटे गए, जब तीन गुण काटे गए, तब जैसा आत्मा ब्रह्म था, तैसा ब्रह्म का ब्रह्म ही हुआ, इस कारण से तिसको ब्रह्मभूत कहिये, जब ब्रह्मभूत हुआ, तब तिसका आत्मा परम प्रसन्न हुआ, तब कुछ गई वस्तु की चिन्ता न करे, अनहोई वस्तु के आवने की वांछाना करे, सभ प्राणियों साथ समता दृष्टि, यह लक्षण तुरीया पद के कहे हैं जब तुरीया पद में मनुष्य आवे है तब मेरी भक्ति को तुरतही पावे है ॥५४॥ मेरी भक्ति यह है, जो मेरी महिमा का प्रताप जानना, सो मेरा भक्त कैसा है तुरीया पदमें लीन हुआ, क्या

ब्रह्मज्ञानको प्रकाश हुआ, सो भगत प्रभुको जानकर प्रताप प्रभु का सकल जाने, बडाई महत्त्वता ब्रह्म विधी की विचारे इसकेजानेसे आगे और महात्मनहींरहा, तिसकीमहिमाका जाननाही परम भक्तिहै, सो एक क्षणक्षण पल२चसा२राम नामको सिमरे॥५५॥हेअर्जुन! जिसनेमेरी महिमाके ज्ञान रूप अमृतका पानकिया, सो जबलगमनुष्य देहमेंबसे, तब लग परम शांति सुख में मग्न रहे, जब देह त्यागे है, तब मेरे परमानंद अविनाशी पदमेंजाए लीन होताहै, यह चौथेपद तुरीया पद शांति पदके लक्षण कहे हैं जिसको मेरे भजन रूप अमृतका स्वाद आयाहै और साथहीमायाकीप्रकृति करे है सो मेरी कृपासे मेरेपद को प्राप्ति होती है।५६।इसी

कारण से हे अर्जुन ! तू मन का निश्चल चेत। मेरेमेंराख
मुझ साथ ही प्रीतिकर बुद्धि का निश्चल चेतामेरे में राख
॥५७॥सोमेरे में रखने का फल सुन, निश्चल चेता मेरे में
रखने से संसार के दुखोंसे मेरी कृपासे तर जावेंगा और
जो अपने अहंकार को लिये मेरी आज्ञाकोनमानेंगा,तब
तेरा विनाशहोजायगा॥५८॥जो तू अहंकार को लियेकहै
कि जी मैं तो युद्ध नहीं करता, सो तेरा कहिना झूठहै,
क्या ? जो जैसी तेरी प्रकृति है तैसीतुझसे होकरही रहेगी
॥५९॥हे कुन्ती नन्दन ! जैसे२स्वभावके देहधारी उपजे
हैं सो सभ स्वभावकेबन्धनसे बंधे हुएहैं,सभलोक स्वभाव
के बस हैं,स्वभाव किसी के बस नहीं, जो तूं कुटुम्बका

मोहिया कहे जो मैं युद्ध नहीं करता तो क्षत्री का स्वभाव
तुझे अवश्य युद्ध करावेगा॥६०॥हे अर्जुन ! एक ईश्वरका
स्वरूप भूत प्राणियोंमें बसे है,सो अवश्य कर जीवों को
माया मोह के यंत्र पर बैठाय कर भ्रमाता है॥६१॥तिस
कारण सब भावों कर तूं ईश्वर की शरण जा,परमशांति
जो पुरातन कल्याण स्थान है ताको प्राप्त होवेंगा॥६२॥
हे अर्जुन! यह गुह्य से गुह्य परम गुह्य ज्ञान मैंने तेरे प्रति
कहाहै और जितने मार्ग मेरे पावने केहैं सो भी कहेहैं क्यों
जो तूं मेरा परम मित्र है॥६३ तेरा मन बुद्धि मेरे चरणों
के साथ दृढ है,इस कारणसे तेरे कल्याणके निमित्त कहता
हूं॥६४॥ हे अर्जुन ! सब भजनों में मुझको यह भजन रुचि

है, जब इस भजन में दृढ़ होवेंगा, तब सब भगतोसे मुझे तूं प्यारालगेंगा।६५। और सबभजनोंको त्यागकर एक मेरी ही शरणआ, सो मैं तुझको सबपापोंसे मुक्तकरूंगा, तूं चिंता मतकर ॥६६॥ हे अर्जुन! यहज्ञानजो मैंने तुझको कहाहै, सो तूने ऐसेलोगोंको कभी नहीं सुनना, जो मेरी भगतीसे बेसुख हैं, जिनको सुननेकी श्रद्धा न हो।६७। और जोमेरा गुह्य ज्ञान मेरे भगतको सुनावेगा, वह भगति सैहत मुझे अवश्य पावेगा ॥६८॥ जिस पुरुष ने मेरी भगती की है ऐसा कोई दूसरा उपा मेरे प्रसन्न करने का नहीं है, ऐसा प्राणी नां पीछे कोई हुआ होगा न अब है सो मुझे अति प्यारा है ॥६९॥ जिस ने मेरे भगतको गीताज्ञान श्रवण

कराया है, उसको बहुत फल प्राप्त होगा और जो कोई इस
गीता जी के श्लोक का भी पाठ करेगा, तिसका फलसुन
सर्वयज्ञोंमें श्रेष्ठ जो ज्ञान यज्ञहै तिसकाफल उसे देताहूं और
तिसपाठकर्ताके निकटमें जायखड़ा होताहूं, जैसेकोईकिसी
का नाम लेकर बुलावे, तब वह तत्काल बोलताहै, तैसे ही
गीता के पाठ करने हारे के निकट हौं जाय खडा होता हूं
॥७०॥ और जो अर्थकरके सुनावे तिसकीमहिमा कुछकही
नहीं जाती, जैसे मेरा महिमा बचनों से अगोचर है तैसे गीता
के अर्थ करनेहारे की महिमा भी वचनों से अगोचर है, जो
सुनने हारा इसको सत्य २ श्रवण करे वह भी जन्ममरणके
बंधनों से मुक्त हो परमानन्द अविनाशी पदको पावेगा ॥७१

है अर्जुन ! यहज्ञान जो तैने एकाग्रचित्त होकर श्रवण किया है, सो तेरे विखे जो अज्ञान मोह था, सो नाश हुआहै यानहीं ॥७२॥ श्रीकृष्णजी के बचन सुनकर अर्जुन बोला हे अच्युत अविनाशी पुरुषजी हे भगवान, तुमारी कृपा से मेरे मोहका नाश हुआ है और ज्ञान भी पाया मेरी बुद्धि भी निर्मल हुई मेरे मनके जो सन्देह थे तिनका भी नाश हुआ और आप के मुख कमल से जो युद्ध करनेकी आज्ञा हुईहै, सो मैं अब युद्ध करता हूं ॥७३॥ संजयउवाच–संजय राजा धृतराष्ट्र को कहिते हैं हे राजा जी ! वासुदेव श्रीकृष्ण भगवानजी और पार्थंव अर्जुन इन दोनोंका संवाद गोष्ठि अर्थात गीता का महातम सुन समझ कर मेरे रोमखड़े हो गये हैं ॥७४॥

जो व्यासजी ने मुझे दिव्य दृष्टि दी है सो तिनकी कृपासे यह ज्ञान गोष्ठि मैंने सुनी है सो यह गुह्य से गुह्य है जो ईश्वरों के ईश्वर श्रीकृष्णभगवान और अर्जुन तिनके मुखकमल से जो ज्ञान निकला है ॥७५॥ तिसको विचार २ कर मैं परम हर्षको प्राप्त हुआ हूं ॥७६॥ और विश्वरूप जो श्री भगवानजी ने अर्जुन को दिखाया है, तिसको विचार २ कर परमहर्ष और विस्मय को प्राप्त हुआ हूं ॥७७॥ हे राजन्! अब मेरे निश्चय की बात सुन, जिस ओर योगीश्वरों के ईश्वर श्रीकृष्ण जी और गांडीवधनुषधारी अर्जुन है, सोतिसी ओर लक्ष्मी है, तिनहीकी जय होवेगी, मेरेमतमें यहीठीक है, कि जिनके पक्षपर श्रीकृष्णजी तूभीयही निश्चयकरकेजान,

हैं सोऐसे परम भागवत पाडवोंकी जय होवेगी, पांडवजीतें
गे और तेरे पुत्र अधर्मी हारेंगे यह निश्चय जान ॥७८॥

इति श्रीभगवद गीता योग शास्त्रे श्रीकृष्ण अर्जुन संवादे मोक्ष सन्यास० अष्टदशो अध्याय १८ ॥

* अथ अठारवें अध्याय का महात्म *

श्रीनारायणोवाच-हे लक्ष्मी! अठारवें अध्याय का महात्म सुन जैसे सब नादियोंमें गंगाजी श्रेष्ठ है सब क्षेत्रोंमें हरिद्वार श्रेष्ठहै सब तीर्थोंमें पुष्कर राज श्रेष्ठहै पर्वतोंमें कैलाशपर्वत श्रेष्ठ है सब ऋषियोंमें नारद श्रेष्ठहै सब गौओं में कपला कामधेनु गौ श्रेष्ठहै तैसे सब अध्यायोंमें गीताका अठारवा अध्याय श्रेष्ठ है। तब श्रीनारायणजीके साथ राजा इन्द्रने ब्रह्मादिक सब देवता व बृहस्पति जीके पास जाकर दण्डवत

कर प्रार्थना कर कहा कि हे स्वामी सदा सहायक हे भक्त रक्षक आपके चारपारखदोंने एकचतुर्भुज तेजस्वी स्वरूप को लायकर और मुझको इन्द्रासनसेउठा उसकोबैठादिया है, सोमैं नहीं जानताहूं जोउसने कौनपुण्य कियाहै मैंने कई अश्वमेधयज्ञ कियेहैं तबमुझे इन्द्रासनका अधिकारीआपने कियाहै इसने एकयज्ञभी नहींकिया यह मुझे बडा आश्चर्य है तब श्रीनारायणजीने कहा हेराजा! तूडर मत तूं अपना राजकर इसने बडा गुह्य उत्तमपुण्य किया है इसकानेमथा किनित्यप्रतिस्नानकरके श्रीगीताजीकेअठारवें अध्यायका पाठ कियाकरता था गीता में अठारवां अध्याय श्रेष्ठ है तिसका फलसुन सुमेरुपर्वतपर देवलोकमें इन्द्रअपनीसभा

लगायबैठाथा उर्वशीनिरत करतीथी बडीप्रसन्नता में बैठे थे इतनेमें एक चतुर्भुजरूप धारे को पारषद लेआए इन्द्र को सब देवता के सामने कहा तूं उठ इसको बैठने दे यह सुनकर इन्द्र सह न सका उस तेजस्वी को बैठाय दिया इन्द्रने अपने गुरु बृहस्पतिको पूछा गुरुजी तुम त्रिकाल दर्शीहो देखो इनकौनपुण्य किया है जिसकर यहइन्द्रासन का अधिकारी हुआ है मेरे जाने इन तीर्थ ब्रत यज्ञदान कोई नहीं किया विश्वेश्वर तथा ठाकुर मन्दिर नहीं बन-वाया तालाब कूप नहीं लगाया किसी को अभयदान नहीं दिया सोई बात बृहस्पतिजी ने भगवान सेकहीतब प्रभु ने बृहस्पतिसे कहा कि इसके मनमें भोगों की वासनाथी जब

इसने देह छोडी तब मैंने आज्ञाकरी हे पारषदो तुम इस को पहिले जाकर इंद्रलोकके सुखभोगावो जब इसका मनोर्थ पूरा होए तो मेरीसायुज मुक्तिको पहुंचावो सोतुम जाकर भोगोंकी सामग्री इकट्ठीकर देवो तब इन्द्र और सबदेवता आए आकर इन्द्रने सब वस्तु भोगों की एकत्र कर दीनी और कहा इन्द्र लोक के सुखों को भोगो कई काल इन्द्र पुरी के सुख भोगाय कर फिर श्रीभगवान ने कृपा से सायुज मुक्ति देकर बैकुण्ठ का अधिकारी किया श्री नारायणजी कहें हैं हे लक्ष्मी! शिवजी कहे हे पार्वती! यह अठारवें अध्याय का महात्म है गंगा गीता गायत्री यह ती... ...नों मक्ति की दाती हैं ॥ इति अष्टदशो अध्याय ॥ १८ ॥

आरती ।

जय जगदीश हरे । भक्त जनों के संकट क्षण में दूर करे ॥

जो ध्यावे फल पावे दुख विनशे मन का, सुख सम्पद घर आवे कष्ट मिटे तनका ।
मात पिता तुम मेरे शरण गहूं किस की, तुम विन और न दूजा आस करूं जिसकी ॥
तुम पूरण परमात्मा तुम अन्तरयामी, पारब्रह्म परमेश्वर तुम सब के स्वामी ॥
तुम करुणा के सागर तुम पालन करता, मैं मूरख खल कामी कृपा करो भरता ॥
तुम हो एक अगोचर सब के प्राण पती, किस विधि मिलों गुसाईं तुमको मैं कुमती ॥
दीनबन्धू दुःख हरता ठाकुर तुम मेरे, अपने हाथ उठाओ द्वार पड़ा तेरे ॥
विषय विकार मिटाओ पाप हरो देवा, श्रद्धा भक्ति बढ़ाओ संतन की सेवा ॥ २ ॥

॥ इति ॥

❀ बाल्मीकि रामायण ❀

केवल भाषा सातों काण्ड

हिन्दु जाति जाग ! तेरी किश्ती के तरने के दो ही सहारे हैं

रामायण और महाभारत

प्रिय पाठको ! महाभारत हमारा छपा, आप लोगों ने पसन्द किया, हमारा चित्त प्रसन्न हुआ। अब हमने बाल्मीकि रामायण भी छापकर प्रकाशित करदी है जो बहुत सुन्दर रूप में प्रगट हुई है इस ग्रन्थ में सम्पूर्ण रामचरित है। भाषा इसकी बहुत ही मीठी और सरल है जिस[illegible] स्त्री पुरुष, बाल, बृद्ध सब सुगमता से पढ़ और समझ सकते हैं, कोई हिन्दु घर इस ग्रन्थ से खाली नहीं होना चाहिये, यह ग्रन्थ घर का दीपक है, अंधेरे में प्रकाश है, इस ग्रन्थ में बहुत ही सुन्दर रंगबिरंगे चित्र भी लगाये गये हैं जो खास इसी " बाल्मीकि रामायण " के लिये कलकत्ते से बनवाये हैं जिनकी शोभा कही नहीं जाती, इस ग्रन्थ की अधिक उपमा हम किस मुंह से करें कही नहीं जाती क्योंकि हर एक हिन्दु बच्चा भी इस ग्रन्थ से परिचित है, इस ग्रन्थ को देखते ही एक बार अवश्य आप के मुंह से निकलेगा कि ऐसा अद्भुत ग्रन्थ आगे हमने नहीं देखा, इसकी भाषा सरल है, अक्षर इतने मोटे हैं जो रात की चांदनी में भी पढ़े जाते हैं कागज चिकना मोटा, सफेद है, ऊपर अति सुन्दर सुनहरी जिल्द बंधी है तिस पर भी मूल्य इतना थोड़ा रखा है कि गरीब और अमीर सब पढ़कर लाभ उठावें, मूल्य केवल पांच रुपया ५) मात्र डाकखर्च ।||=) अलग । (अक्षर इतने मोटे हैं जितने इस गीता के हैं ।

मिलने का पता—शामदास वधवा पुस्तकों वाला शहालमी दरवाजा लाहौर ।

 श्री

सचित्र

अर्जुन और श्री कृष्ण

